प्रास्ताविक दो शब्द.

चतुर्विंशति संधान—यह एक श्लोकमें चौवीस तीर्थंकरोंकी स्तुति है। श्रीजगन्नाथ नामके महापंडित, भट्टारक नरेंद्रकीर्तिके शिष्य थे और कवि थे। उन्होंने अपना समय अंतमें १६९९ संवत दिया है। उन्हीने यह श्लोक बनाया है और उन्हीने उसके पच्चीस अर्थ किये हैं। चौवीस अर्थोमें क्रमसे एक एक तीर्थंकर की स्तुति है और पच्चीसवीं व्याख्यामें समुदायरूप चौवीसो तीर्थंकरकी स्तुति दिखाई है।

टीकामें जो जुदे जुदे अर्थ निकाले हैं वे विद्वानोंको मनन करने योग्य हैं। कितनी ही जगह शब्दार्थ करनेकी आश्चर्यचकित करनेवाली विद्वत्ता दिखाई पडती है।

प्रत्येक व्याख्याका विशद अर्थ हिंदीमें धर्मरत्न श्रीमान् पं. लालारामजी शास्त्रीने किया है। आपने और भी कई ग्रन्थोंपर टीकाएं की हैं। इस हिंदी टीकाके कारण काव्य सर्व साधारणके भी उपयोगका हो गया है। सर्व साधारण भी इसे बांचकर पुण्य के भागी बनेंगे और आनंदको प्राप्त होंगे। हमने इसके कुछ अर्थ स्याद्वाद केसरीके पाठकोंको भी दिखाये हैं। यह वास्तवमें एक अपूर्व कविता है।

जगन्नाथ नामके एक अच्छे कवि हिंदुवोंमें भी होगये हैं किंतु इन श्रीजगन्नाथ पण्डितकी यह कविता भी मननीय ही है।

इसका नाम चतुर्विंशतिसंधान है, परन्तु अर्थ पच्चीस किये है। इसलिये चतुर्विंशतिसे भी एक अधिक होनेसे पंचविंशति संधान इसे कहे तो अयुक्ति न होगी। एक श्लोकके चौवीस अर्थ करना कोई साधारण बात नहीं है, इस बातको विद्वान् लोग सहज ही समझ सकते हैं

सोलापुर निवासी [illegible], [illegible] ' [illegible] ' [illegible] और [illegible] [illegible] है। [illegible] आपके [illegible] सेठ [illegible] [illegible] महाराजके दर्शनार्थ हम [illegible] बाद [illegible] इस ग्रंथकी मैंने [illegible] और सेठ [illegible] मालूम हुआ कि यह ग्रंथ अभी प्रकाशित नहीं हुआ है। [illegible] इन्होंने इसे प्रकाशित करानेका [illegible] निश्चय कर लिया था। तदनुसार यह ग्रंथ [illegible] प्रकाशित होरहा है।

सेठ [illegible]जीने अनेक भाई जैन ग्रंथोंका उद्धार कराया है, उसमें पचासों हजार रु० खर्च किया है। इसी प्रकार इस ग्रंथका प्रकाशन करके भी आज जैन साहित्यकी आपने एक सच्ची सेवा की है। आपके घरानेमेंसे लाखों रु० निःशुल्क प्रचारके लिये पुरा निकाल दिया गया है और उसके द्वारा निःशुल्क प्रचार व जैन साहित्यका प्रचार बराबर होरहा है; परंतु इसके सिवा इस कार्यके लिए इनके घरमेंसे और भी नवीन नवीन रुपया प्रतिवर्ष निकाला जाता है। यह उनकी दानशीलता इतर धनिकोंको अनुकरणीय है।

श्रीमान् प० लालारामजी शास्त्री आज जैन समाजमें एक सुपरिचित विद्वान् हैं आपने अनेक ग्रंथ लिखकर जैन साहित्य की एक आदर्श सेवा की है। इसके अतिरिक्त आप सामाजिक धर्मरक्षाके कार्योंमें भी सदा दत्तचित्त रहते हैं। ऐसे नर रत्नोंसे ही दि० जैन समाजके धर्मकी सच्ची स्थिरता होरही है। इस नवीन वर्तमान पीढी में आपके अनुभव, धैर्य, समाज सेवा आदि अनेक गुण अवर्णनीय हैं।

श्रीमान् ब्रह्मचारी ज्ञानचंद्रजीकी इसको प्रकाशित करानेकी बलवती इच्छा थी. वे इसके प्रकाशित होजानेसे प्रसन्न होंगे ऐसी आशा है। जो जो त्यागियोंकी इच्छा होती है उसे ही धर्म समझना चाहिये और अत एव उसके अनुसार प्रवृत्ति करना ही श्रावकोंका वैयावृत्त्य वा साधुसेवा है। यह श्रावकोंका एक मुख्य कर्म है। जिन्हें श्रीशांतिसागर महाराजकी भी प्रत्यक्ष सेवा नहीं बनती वे यदि साधुओंकी इच्छा पूर्ण करनेकी भावना रक्खें तो वे भी इसी प्रकार पुण्यका संचय कर सकते हैं।

इस पुस्तककी दोसो प्रती श्रीयुत धर्मवीर रावजी सखाराम दोशी सोलापुर वालोंने ली हैं.

सोलापुर.
ता० १२।५।१९२९

वंशीधर उदयराज पंडित.
मा० श्रीधरप्रेस

विषयानुक्रम.

धिकारस्थे मांगल्ये चाथ दृश्यते " धनंजयभट्टः । आनंतर्ये चतुर्थकालादौ धर्मः युगलधर्मं विनिवार्य जनान् शुभमार्गे धरति धर्मः । अथवा जनान् कृष्यादिषु कर्मसु धरति धर्मः । उक्तं हि—
"प्रजापतिर्यः प्रथमं जिजीविषुः शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः ।"
इति । पुनः हर्यंकः हरिर्मरतामिधो ज्येष्ठपुत्रः अंके उत्संगे यस्य स ..। " उत्संगचिन्हयोरंकः " इत्यमरः । भूयः पुष्पदंतः
[illegible]

धिकारम्भे मांगन्ये याथ दृश्यते " धनंजयभट्टः । आनंतर्ये चतुर्थकालादौ धर्मं युगलधर्मं विनिवार्य जनान् शुभमार्गे धरति धर्मः । अथवा जनान् कृष्यादिषु कर्मसु धरति धर्मः । उक्तं हि– "प्रजापतिर्यः प्रथमं जिजीविषुः शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः।" इति । पुनः हर्यंकः हरिर्भरताभिधो ज्येष्ठपुत्रः अंके उत्संगे यस्य स हर्यंकः । " उत्संगचिन्हयोरंक " इत्यमरः । भूयः पुष्पदंतः प्रसूनदशनः संज्ञापूर्वत्वाभावाद्वयमि दंतस्य दतृ इति सूत्रेण दत्रादेशो न स्यात् । पुनः मुनिसुव्रतजिनः । मुनयश्चारित्रभृतः, सुव्रताः श्रावकाः, जिना वृषभसेनादिचतुरशीतिगणधरा यस्य स मुनिसुव्रतजिनः । एतेन समवसरणविभूतिरुक्ता । पुनः अनंतवाक् अनंता नाशरहिता वाग्वाणी यस्य सोऽनंतवाक् । पुनः श्रीसुपार्श्वः श्रिया शोभनौ पार्श्वौ यस्य स श्रीसुपार्श्वः । पुनः शांतिः सेवकजनानां दुःखं शानयति शांतिः । पुनः पद्मप्रभः पद्यते सा पद्म तत्पद्म हिरण्यं । पद्मस्य प्रभा इव प्रभा यस्य स पद्मप्रभः सुवर्णवर्णः । पुनः रः गभीरध्वनिमान् । मन्त्रर्थायो रकारः । मुहुः विमलविभुः विमलानां गतकर्ममलानां पुरन्दरधरणेंद्रचक्रेंद्रादीनां विभुः विमलविभुः । अपिः संभावनायां । भूयः वर्द्धमानः । जन्ममृत्युविस्मरारहितत्वाद्वर्द्धते सौ वर्द्धमानः एधमानः । पुनः अजांकः अजाः शास्वता अंकाः चिन्हानि अनन्तज्ञानादयो यस्य सोऽजांकः । भूयः मल्लिः मल्ते आत्मानं विषयादिषु धारयति यत तन्मलं द्रव्यकर्मपिंडः । तस्य लिनाशो यस्मादिति मल्लिः । मलु मल्ल धारणे । अथवा मलकर्मतापंक्तं लवयति द्रवीकरोति इति मल्लिः । ली द्रवीकरणे । पुनः नेमिः युगादौ धर्मरथप्रवर्तकत्वान्नेमिरिव नेमिः । नहि नेमिमन्तरेण रथो याति । मुहुः नमिः नास्ति मिः हिंसा यस्य स नमिः " हिंसा मा मीर्मिषी मिषः " नञ्प्रतिरूपकोयं नकारः । तेन नलोपो नञ इति न भवति । दयाधर्ममयत्वादस्य मतेपि हिंसा नास्ति । पुनः सुमतिः शोभना रत्नत्रययुता जनानां मति-

धर्मादिति सुमतिः । पुनः श्रीजगन्नाथधीः श्रीजगन्नाथः श्री-जगदीशस्तद्वद्धीर्यस्य निरूप्यते इति श्रीजगन्नाथधीः । मयाद्दुशा अस्माकमपि मतिरिति निगदितः । पुनः सन् विद्यमानः । ' सत्ये साधौ विद्यमाने प्रशस्तेऽभ्यर्हिते च सन् ' इत्यमरः ।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुतेः टीकायां भट्टारकश्रीनरेन्द्रकीर्तिशिष्य-शिष्यपण्डितजगन्नाथविरचितायां प्रथमतीर्थंकर-श्रीवृषभनाथस्तुतिः सम्पूर्णा ।

श्रीयुत विद्वद्वर पं. जगन्नाथजी चौवीसों तीर्थंकरोंकी स्तुति करनेके लिये एक श्लोक बनाकर तथा उसके चौवीस अर्थ करके चौवीसों तीर्थंकरोंकी स्तुति करते हैं । उनमें सबसे पहले प्रथम तीर्थंकर श्रीवृषभनाथकी स्तुति करते हैं ।

श्रेयान् श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमाङ्कोऽथधर्मो हर्यङ्कः पुष्पदन्तो मुनिसुव्रतजिनोऽनन्तवाक् श्रीसुपार्श्वः । शान्तिः पद्मप्रभोऽरो विमलविभुरसौ वर्धमानोऽप्यजाङ्को मल्लिर्नेमिर्नमिर्मा सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ।

अन्वय—श्रेयान् श्रीवासुपूज्यः श्रीद्रुमाङ्कः अथ धर्मः हर्यङ्कः पुष्पदन्तः मुनिसुव्रतजिनः अनन्तवाक् श्रीसुपार्श्वः शान्तिः पद्मप्रभः अरः विमलविभुः वर्द्धमानः अजाङ्कः मल्लि नेमि नमि सुमति. श्रीजगन्नाथधीः सन् अपि असौ वृषभजिनपतिः मा अरं अवतु आजवंजवभयादिति शेषः ।

अर्थ— जो भगवान् वृषभदेव स्वामी श्रेयान् हैं । श्रेयान्का अर्थ श्रेष्ठ है । अमरकोषमें लिखा भी है "श्रेयान् श्रेष्ठ पुष्कल स्यात्" अर्थात् श्रेयान् श्रेष्ठ और पुष्कल सबका एक अर्थ है । भगवान् वृषभदेव भी सबमें श्रेष्ठ हैं इसलिये वे श्रेयान् कहे जाते हैं ।

जो भगवान् श्रीवासुपूज्य हैं । श्री का अर्थ लक्ष्मी है वासुका इन्द्र है और पूज्यका अर्थ पूजनीय है । जो स्वर्गकी लक्ष्मीसे सुशोभित होनेवाले इन्द्रोंके द्वारा पूज्य हों उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं । भगवान् वृषभदेव भी महाभाग्यशाली

हैं उनके जन्मकल्याणके समय इंद्रोंने आकर बड़े महोत्सवके साथ मेरु पर्वतपर अभिषेक किया था इसलिये वे श्रीवासुपूज्य कहलाते हैं। फिर जो भगवान् श्रीद्रुमांक हैं। श्रीद्रुमका अर्थ श्रीवत्स है। भाग्यशाली पुरुषोंके दाहिनी ओर स्तनके ऊपर एक विशेष चिन्ह होता है उसको श्रीवत्स लक्षण कहते हैं। अंक शब्दका अर्थ चिन्ह है। जिनके श्रीद्रुम अर्थात् श्रीवत्सका अंक अर्थात् चिन्ह हो उनको श्रीद्रुमांक कहते हैं। यह चिन्ह महा भाग्यशालियोंके होता है। लिखा भी है "तेन श्रीवृक्षमात्रेण किंचिदालक्षितोदयः" अर्थात् उस श्रीवत्स चिन्हसे उनका उदय कुछ और ही प्रकारका दिखाई पड़ता था। अर्थात् उनका भाग्योदय संसारमें सबसे अपूर्व और उत्तम जान पड़ता था। भगवान् वृषभदेव भी उस चिन्हसे सुशोभित हैं इसलिये वे श्रीद्रुमांक कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् अथधर्म हैं। अथ शब्दका अर्थ अनंतर है धनंजय भट्टने लिखा भी है "हेतौ निदर्शने प्रश्ने स्तुतौ कंठसमीपतौ। आनंतर्येऽधिकारस्थे मांगल्ये चाथ दृश्यते" अर्थात् हेतु उदाहरण प्रश्न स्तुति कंठके पास आना अनंतर अधिकार और मंगल ये सब अथ शब्दके अर्थ हैं। जो शुभ मार्गमें-मोक्षमार्गमें धारण करे उसको धर्म कहते हैं। भगवान् वृषभदेवने भोगभूमिके अनंतर चौथे कालके प्रारंभमें युगलिया धर्मको दूर कर लोगोंको मोक्षमार्गमें लगाया था इसलिये वे अथधर्म कहे जाते हैं। अथवा भगवान् वृषभदेवने चौथे कालके प्रारंभमें खेती व्यापार आदि जीविकाके छह कर्मोंमें लोगोंको लगाया था इसलिये वे अथधर्म कहलाते हैं। श्रीसमन्तभद्राचार्यने लिखा भी है "प्रजापतिर्यः प्रथमं जिजीविषु शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः" अर्थात्-भगवान् वृषभदेवने सबसे पहले प्रजाको खेती व्यापार आदि जीविकाके उपाय भूत छह कर्मोंका उपदेश दिया था। इसीलिये वे भगवान् अथधर्म कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् हर्यंक हैं। भगवान् वृषभदेवके ज्येष्ठ पुत्र भरतका नाम हरि है। अंक शब्दका अर्थ गोद है। अमर कोषमें ।

भी है " उत्संगचिन्हयोरंकः " अर्थात् अंक शब्दका अर्थ गोद और चिन्ह है। जिनकी गोदमें भरत हों उनको हर्यक कहते हैं। भगवान् वृषभदेवने भी गोदमें लेकर भरतको खिलाया था इस लिये वे हर्यंक कहलाते हैं। फिर जो भगवान् पुष्पदंत हैं। पुष्प शब्दका अर्थ फूल है और दंत शब्दका अर्थ दांत है । जिनके दांत सफेद फूलोंके समान सुंदर हों उनको पुष्पदंत कहते हैं। भगवानके दांत भी ऐसे ही हैं इसलिये वे पुष्पदंत कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् मुनिसुव्रत-जिन हैं। पूर्ण चारित्रको धारण करनेवाले साधुओंको मुनि कहते हैं। अणुव्रत आदि उत्तम व्रतोंको धारण करनेवाले श्रावकोंको सुव्रत कहते हैं। तथा कर्मोंको जीतनेवाले गणधरोंको जिन कहते हैं। जिनके समवसरणमें मुनि भी हों श्रावक भी हों और गणधर भी हों उनको मुनिसुवृतजिन कहते हैं। भगवान् वृषभदेवके समवसरणमें मुनि भी थे श्रावक भी थे और वृषमसेन आदि चौरासी गणधर थे इसीलिये वे मुनिसुवृतजिन कहलाते है। फिर जो भगवान् अनन्तवाक् हैं। जिसका कभी नाश न हो उसको अनन्त कहते हैं। वाक् वा वाणी दिव्य ध्वनि को कहते हैं। भगवान् वृषभ देवकी दिव्य ध्वनिमें कहे हुए मोक्षमार्गका कभी नाश नहीं होना—उनकी वाणी परंपरा रूपसे ज्यों की त्यों बनी रहती है इसलिये उनको अनन्तवाक् कहते हैं। फिर वे भगवान् श्रीसुपार्श्व हैं। श्री लक्ष्मीको कहते हैं और पार्श्व शब्दका अर्थ अगल बगल वा दांई बांई ओरका भाग है । भगवान् वृषभदेवके दांई बांई ओरके भाग शोभासे सुशोभित हैं अथवा उनके चारों ओरका समवसरणका भाग लक्ष्मीसे सुशोभित है इसलिये उनको श्री-सुपार्श्वनाथ कहते हैं। फिर वे भगवान् शांति हैं। जो सेवक लोगोंके दुःखोंको दूर करें उनको शांति कहते हैं। भगवानकी भक्तिसे भी भव्य जीवोंके दुःख दूर होजाते हैं इसलिये उनको शांति कहते हैं। फिर वे भगवान् पद्मप्रभ हैं। पद् शब्दका अर्थ प्राप्त होना है। माका अर्थ लक्ष्मी है । जिसमें मा अर्थात् लक्ष्मी पद्-प्राप्त हो उसको

तपश्चरणरूपी अग्निसे पिघलाकर नष्ट कर देवें उनको मल्लि कहते हैं। भगवान्ने भी तपश्चरण के द्वारा सब कर्मोंको नष्ट कर दिया है इसलिये उनको मल्लि कहते हैं। फिर वे भगवान् नेमि हैं। जिनके सहारे पहिये चलते हैं ऐसे रथके धुरोंको नेमि कहते हैं। धुरेके विना कभी रथ चल नहीं सकता है। इसी प्रकार भगवान् वृषभदेव कर्मभूमिके प्रारंभ में धर्मरूपी रथको चलानेके लिये नेमि अर्थात् धुरेके समान थे इसलिये उनको नेमि कहते हैं। फिर वे भगवान् नमि हैं। न का अर्थ नहीं है और मिका अर्थ हिंसा है। लिखा भी है " हिंसा मा मी मियौ मिय: " अर्थात् मा मि मी ये सब हिंसा के वाचक हैं। जिनके मि अर्थात् हिंसा न अर्थात न हो उनको नमि कहते हैं। भगवान वृषभदेवका कहा हुआ मत दया-धर्मरूप है। इसलिये उनके मतमें हिंसा नहीं है इसीलिये वे नमि कहलाते हैं। फिर वे भगवान सुमति हैं। मति शब्दका अर्थ बुद्धि वा ज्ञान है। सु शब्दका सुशोभित है। जिनसे लोगोंकी बुद्धि सुशोभित हो उनको सुमति कहते हैं। भगवान् के प्रभाव से भी लोगोंकी बुद्धि रत्नत्रयसे सुशोभित हो जाती है इसलिये उनको सुमति कहते हैं। फिर वे भगवान् श्रीजगन्नाथधी हैं। श्री लक्ष्मीको कहते हैं। जो तीनों लोकोंके नाथ हों उनको जगन्नाथ कहते हैं। इन्द्र स्वर्गका स्वामी है। चक्रवर्ति मध्यलोक का स्वामी है और धरणेंद्र अधोलोकका स्वामी है। ये तीनों ही अपनी अपनी लक्ष्मीसे सुशोभित हैं। तथा धी शब्दका अर्थ चिंतवन करना है। अपनी अपनी लक्ष्मीसे सुशोभित होने वाले इन्द्र धरणेंद्र चक्रवर्ती आदि सब भगवान वृषभदेवका चिंतवन करते हैं और चाहते हैं कि किसी भी प्रकार भगवानके गुण हममें भी प्रगट हों। इसीलिये वे भगवान श्रीजगन्नाथधी कहलाते हैं। अथवा तीनों लोकों के सौ इन्द्र भी भगवानके गुणोंका चिंतवन करते हैं। अथवा तीनों लोकोंके स्वामी गणधरदेव भी भगवानके गुणोंको धारण करनेकी इच्छासे चिंतवन करते हैं। इसलिये वे भगवान श्रीजगन्नाथधी कहे जाते हैं।

फिर वे भगवान सत् हैं। सत् शब्दका अर्थ विद्यमान वा नित्य है अथवा पूज्य है। लिखा भी है 'सत्ये साधौ विद्यमाने प्रशस्तेऽभ्यर्हिते च सत्' अर्थात् सत् शब्दका अर्थ सत्य, साधु विद्यमान, श्रेष्ठ और पूज्य है। भगवान भी पूज्य और नित्य हैं इसलिये वे सत् कहे जाते हैं। तथा जो भगवान् वृषभजिनपति कहलाते हैं। वृषका अर्थ धर्म है और भका अर्थ शोभायमान होना है। जो धर्मसे शोभायमान हों उनको वृषभ कहते हैं। तथा जो जिन अर्थात् गणधरदेवों के पति अर्थात् स्वामी हों उनको जिनपति कहते हैं। जो धर्मसे सुशोभित होते हुए भी गणधरादि महामुनियों के स्वामी हों उनको वृषभजिनपति कहते हैं। अथवा वृषशब्दका अर्थ बैल है। जो बैलके चिन्हसे सुशोभित हों उनको वृषभ कहते हैं। तथा जिनपति तीर्थंकर को कहते हैं। जो बैलके चिन्हसे सुशोभित होते हुए तीर्थंकर पदको धारण करें उनको वृषभजिनपति कहते हैं। महाराजा नाभिराय के पुत्र और कर्मभूमिके प्रारंभमें होने वाले लोकोत्तर भगवान् वृषभदेव भी इन सब गुणोंसे सुशोभित हैं इसलिये वे वृषभजिनपति कहलाते हैं। ऐसे वे प्रथम तीर्थंकर भगवान् वृषभदेव स्वामी मुझ जगन्नाथ नामके सेवकको अं अर्थात् स्वीकार करके इस संसारके भयसे रक्षा करें।

[illegible] श्री जगन्नाथ
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] अर्थ सहित हुआ।

अथ द्वितीय श्री अजितनाथजिनस्य स्तुतिः

श्रेयान् श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोऽथ धर्मो,
हर्यंकः पुष्पदंतो मुनिसुव्रतजिनोऽनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः ।
शांतिः पद्मप्रभोऽरो विमलविभुरसौ वर्द्धमानोऽप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ।

टीका—असौ हर्यंकः हरिः सिंहोऽङ्के यस्य स हर्यंकः श्रीमद्जितनाथो द्वितीयजिनराट् । "सिंहे श्रेष्ठ हरिः सिंहाधिपत्ये कीटांशुली कान्ते, चंद्रादित्यहुताशवातगिरिशश्रीश्रीधरेन्द्र गृहे । शुके भी यमराजशेषशयने स्वर्णे तनौ पावके प्लवंगे विमाने मेकरांते वाच्यो हरिर्नांच्यपरन् ।" हरिशब्दस्त्वेतेष्वर्थेषु प्रवर्तमानः । स हर्यंकः । मां श्रीजगन्नाथधीरं श्रीजगन्नाथनामानं पण्डितमवता-दिति संबंधः । किंविशेषणगोचरो हर्यंकः, श्रेयान् कर्माग्निभिरजित-त्वाज्जिनरो प्रशस्यः । " मदक्षगाजराजित प्रभो दयस्व वर्द्धनः " इति जिनशते । पुनः श्रीवासुपूज्यः श्रियं लक्ष्मीं वांति गच्छंति प्राप्नुवंति इति यावत् श्रीवाः । क्विप् चेति सूत्रेण क्विप् । श्रीवाः इंद्रादयः । श्रीवाभिः सुष्ठु पूज्यः श्रीवासुपूज्यः । भूयः मुनिसुव्रत-जिनः मुनिभिः ऋषिभिः सुवृताः परिवृता जिना गणधरा यस्य स मुनिसुवृतजिनः । मुहुः वृषभजिनपतिः वृषेण धर्मेण महाव्रतेन भांती-ति वृषभास्ते च ते जिनाः सिंहसेनादयो नवतिगणराजस्तेषां पतिः वृषभजिनपतिः । यद्वा वृषभजिनपतिरिव वृषभजिनपतिः । तदनंतर-त्वात् वर्णत्वात्सदृश इत्यर्थः । पुनः श्री द्रुमांकः । श्रीर्लक्ष्मीः, द्रुरशोको, मश्चंद्रः । श्रीश्च द्रुश्च मश्च श्रीद्रुमास्तेऽके यस्य स श्रीद्रुमांकः । मुहुः । अथधर्मः थं स्तोकं च तद्धर्म थधर्म " थं स्तोकार्थे नपुंसकमिति " । न थधर्म यस्य सोथधर्मः तीर्थंकरपदाप्तिः " स्याद्धर्ममस्त्रियामित्यमरः " ' धर्मादनि च केवलात् ' इत्यनि च न स्यात् अकेवलत्वात् । उक्तं हि काशिकायाम्—परमः स्वधर्मो यस्य स परमस्वधर्म इति । मुहुः

पुष्पदंतः अष्टादशदोषरहितत्वात् पुष्यति पुष्टिं प्राप्नोति पुष्पम् । पुष्पम् अंतो धर्मः स्वभावो यस्य स पुष्पदंतः । " अंतः पदार्थसामीप्यधर्मसत्वस्वभावनिश्चितिषु " धनंजयः । अन्यच्च जिनसहस्रनामटीकायां समंतभद्रस्य । ' नानानंतगुणोऽसि ' ' नाना अनेकप्रकारा अनंता अनन्ताः अमेयाः गुणाः स्वगुणाः अंता धर्मा यस्यासौ इत्यादि । अथवा पुष्पम् पुष्टिं प्रापत् च परमम् तनोति विस्तारयति पुष्पदंतः । अमीषां प्रशंसादि पक्षस्यवाचकः इति । उपमानेषां यत्नमिति वचनात् डः । उक्तं हि महाभाष्ये यत्र पदार्थसमुच्चयः प्रत्ययत्र ग्रहणेन सरर्थमिति । भूयः अनंतराजः अनंता अवसानरहिता यावा यस्य सोऽनंतराजः । ननु कथमनंतयागिति ज्ञानावरणक्षयाभेन ध्वनिसंदर्भस्वभावेन गणधरा विदुरिति ? सत्यम् । अस्मदादीनां सा त्वनंता एव ज्ञानावरणदोषैः । पुनः श्रीसुपार्श्वः श्रिया स्वात्मोत्पन्नलक्ष्म्या शोभनौ पार्श्वौ यस्य स श्रीसुपार्श्वः । समचतुरस्रत्वात् । " बाहुमूले उभे कक्षौ पार्श्वमस्त्री तयोरधः " इति । पार्श्वशब्दो बहुवचनान्तोऽप्यस्ति । तदुक्तं द्विसंधानकृता सनुकृता पार्श्वे इत्यादनामिता इति । भूयः शांति शं सुखमतारंतिशः यस्य स शांतिः नामैकदेशो नाम्नि । उक्तं हि द्विसंधाने " केऽपि शुद्धिमत्कुलजाः समागताः " इति । मुहुः पद्मप्रभः सुवर्णाभः । यद्वा पद्मानां सुवर्णरचितकनककमलानां प्रकृष्टा भा दीप्तिर्यस्मादिति पद्मप्रभः । मुहुः अरः नास्ति रै धनं यस्य सोऽरः निर्ग्रंथ इत्यर्थः । " रै ग्रंथो धने कामे " । मुहुः विमलविभुः विनष्टं मलं कर्म येषां ते विमलाः गणधरादयो महापुरुषास्तेषां विभुः । पुनः अवर्द्धमानः अवर्द्धमच्छिन्नं केवलज्ञानं यस्य स अवर्द्धमानः । अवाप्योरुपसर्गयोरित्यल्लोपः । अपिः संभावनायां । मुहुः अजांकः अजाश्रिसुवर्णेषग अंकः यस्य सोऽजांकः । भूयः मल्लिः कर्मारिजेतृत्वान्महामल्लः । मुहुः नेमिः नयन्ति प्राप्नुवन्ति धर्मं पुष्टिं भव्यजना यस्मादिति नेमिः । उणादिको मिन् । पुनः नमिः नास्ति

हिंसा एकेंद्रियादिषु यस्य स नमिः । पुनः सुमतिः शोभना मतिर्यस्य स सुमतिः । पुनः सत् शाश्वतः जन्मादिरहितः ।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुतिकाव्यप्रकाशिकायां भट्टारकश्रीनरेन्द्रकीर्तिमुख्यशिष्यपंडितजगन्नाथकृतायां द्वितीय जिनराज श्रीअजितनाथस्य स्तुति. काव्यार्थश्च पूर्णः । २ ।

आगे अजितनाथकी स्तुति करते हैं ।

अन्वयः—श्रेयान् श्रीवासुपूज्यः वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकः अथधर्मः पुष्पदन्तः मुनिसुव्रतजिनः अनन्तवाक् श्रीसुपार्श्वः शांतिः पद्मप्रभः अरः विमलविभुः अवर्धमानः अजांकः मल्लिः नमिः सुमतिः सत् अपि असौ हर्यंकः मां श्रीजगन्नाथधीरं अवतु ।

अर्थ—जो श्री अजितनाथ स्वामी कर्मरूपी शत्रुओंसे कभी जीते नहीं जाते इसीलिये जो श्रेयान् अर्थात् प्रशंसनीय कहलाते हैं । श्रीसमन्तभद्रस्वामी विरचित जिनशतकालंकारमें लिखा भी है, "सदयगत्र राजित प्रभो दयस्व वर्द्धन मनो तमो हरन् जयन् महोदयापराजितः ।" अर्थात् "हे अजितदेव कर्मरूपी शत्रुओंने समस्त संसारको जीत लिया परंतु वे आपको न जीत सके इसलिये ही यह संसार आपको अजितदेव करके पुकारता है । हे प्रभो, आप विनाशरहित हैं, जगरहित हैं, भव्यजीवोंके अज्ञानरूपी अंधकारको नाश करनेवाले हैं, वर्द्धमान दयालु और विजयी हैं । हे अजितदेव, जिसके प्रसादसे आप ऐसे हुए हैं वह सम्यग्ज्ञान मुझे भी दीजिये ।" फिर जो भगवान् श्रीवासुपूज्य हैं । वा धातुका अर्थ गमन करना वा प्राप्त होना है । जो श्री अर्थात् महा विभूतिको प्राप्त हों उनको श्रीवा कहते हैं । महाविभूति इन्द्रादिकोंके होती हैं इसलिये इंद्रादिक श्रीवा कहलाते हैं । जो इंद्रादिकोंके द्वारा पूज्य हों उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं । भगवान् अजितनाथ स्वामी इन्द्रादिकोंके द्वारा पूज्य हैं इसलिये वे श्रीवासुपूज्य हैं । फिर जो भगवान् वृषभजिनपति हैं । महाव्रतादिक धर्मको वृष कहते हैं । जो महाव्रतादिक धर्मसे शोभायमान हों उनको वृषभ कहते हैं । गणधरादि देवोंको जिन कहते हैं । तथा पति स्वामीको कहते हैं । जो महाव्रतादिक धर्मसे सु-

शोभित होनेवाले गणधर देवोंके स्वामी हों उनको वृषभजिनपति कहते हैं। भगवान् अजितनाथ भी सिंहसेन आदि ऐसे नब्बे गणधरोंके स्वामी हैं इसलिये वे वृषभजिनपति कहलाते हैं। अथवा भगवान् अजितनाथ स्वामी भगवान् ऋषभदेवके समान ही सुवर्ण वर्णके हैं इसलिये भी वे वृषभजिनपति कहलाते हैं। अथवा ये वृषभजिनपतिके अनंतर ही हुए हैं इसलिये भी वे वृषभजिनपतिके समान हैं अतएव वृषभजिनपति कहलाते हैं। फिर जो भगवान् श्रीद्रुमांक हैं। श्री लक्ष्मीको कहते हैं। द्रु अशोक वृक्ष को कहते हैं। और म चंद्रमाको कहते है। जिनकी अंक अर्थात् सभामें लक्ष्मी अशोक वृक्ष और चंद्रमा हो उनको श्रीद्रुमांक कहते हैं। भगवान अजितदेवकी सभामें समवसरण-रूप महालक्ष्मी थी, अशोक वृक्ष था और ज्योतिषी देवोंका इन्द्र चंद्रमा सेवामें उपस्थित था इसलिए वे श्रीद्रुमांक कहे जाते हैं। फिर जो भगवान अधधर्म हैं। ध थोडेको कहते हैं। लिखा भी है 'धं स्तोकार्थे नपुंसकम्'। ध नपुंसकलिंग है और उसका अर्थ थोडा है। थोडे धर्मको धधर्म कहते हैं। जिनका धर्म थोड़ा न हो—महान् हो उनको अधधर्म कहते हैं। भगवान् अजितदेवको महान् धर्म तीर्थंकर पद प्राप्त था इसलिए वे अधधर्म कहलाते हैं। फिर जो भगवान् पुष्पदन्त हैं। अठारह दोषोंसे रहित होकर जो पुष्टिको प्राप्त होते रहैं उनको पुष्पान् कहते हैं। अंत शब्दका अर्थ धर्म है। धनंजय कोशमें लिखा है—अन्त पदार्थसामीप्यधर्मस्वरूपनाशेषु। अर्थात् अन्त शब्दका अर्थ पदार्थ समीप धर्म जीव और नाश है। और श्रीसमन्तभद्र स्वामीने जिनशतालंकारमें भी लिखा है—नानानंत-नुतान्त। अर्थात् जिनके अनेक प्रकारके अनंत अंत अर्थात् धर्म स्तुति करने योग्य हैं। जिनके अंत अर्थात् धर्म वा स्वभाव अठारह दोषोंसे रहित होकर सदा पुष्ट होते रहते हैं उनको पुष्पदंत कहते हैं। भगवान् अजितनाथ भी ऐसे हैं इसलिये वे पुष्पदंत कहलाते हैं। अथवा जो पुष्टिको प्राप्त हो उनको पुष्पत् कहते हैं। अ शब्दका अर्थ

है। अथवा जो अवगाहादि पंचप्रसवाचक । अर्थात् पुष्प अर्थ प्रसव है। तथा प्रसवका वाचक है। जो वृद्धिको प्राप्त होते हुए पुष्पदन्तको और भी बढ़ाते उनको पुष्पदन्त कहते हैं। भगवान् अजितदेवने अपने सद् पवित्र स्वरूप आत्माको समस्त कर्मोंका नाश कर और भी शुद्ध किया था इसलिये वे पुष्पदन्त कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् मुनिसुव्रत जिन हैं। साधुओं को मुनि कहते हैं। सुव्रत शब्दका अर्थ घिरा हुआ है। और जिनशब्दका अर्थ गणधर है। जिनके समवसरणमें जिन अर्थात् गणधर देव मुनियोंसे घिरे हों उनको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं। भगवान् अजितनाथके समवसरणमें भी गणधरदेव अनेक मुनियोंके साथ विराजमान थे इसलिये उनको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं। फिर जो भगवान् अनंतवाक् हैं। जिनकी वाणी अंतरहित हो उनको अनंतवाक् कहते हैं। भगवान् अजितदेवकी दिव्यध्वनि भी अनंत है इसलिये वे अनन्तवाक् कहलाते हैं। कदाचित् कोई यह कहे कि भगवान्का केवलज्ञान अनन्त ज्ञान कहलाता है। उसके असंख्यातवें भाग उनकी दिव्य ध्वनि खिरती है तथा उस दिव्यध्वनिका असंख्यातवां भाग गणधरों की समझमें आता है। फिर उनकी वाणीको अनंत किस प्रकार कह सकते हैं? परंतु इसका समाधान यह है कि वाणी ज्ञान के अनुसार होती है। भगवान्के ज्ञानावरण कर्मका सर्वथा अभाव है इसलिये उनका ज्ञान भी अनंत ज्ञान है और उनकी वाणी भी अनंतवाणी है। वास्तवमें देखा जाय तो भगवान्का ज्ञान अनन्तानन्त है। यदि उनकी वाणी उसके अनन्तवें भाग मात्र भी हो तो भी वह अनन्तरूप ही कही जाती है। अथवा यों भी कह सकते हैं कि वह वाणी हम लोगोंके ज्ञान की अपेक्षासे अनन्त है। फिर जो भगवान् श्रीसुपार्श्व हैं। भुजाओंके नीचे कांख और कांख के पास के भागको पार्श्व कहते हैं। भगवान् का शरीर समचतुरस्रसंस्थान वाला होता है इस लिये उनके दोनो पार्श्वभाग बहुत ही सुंदर होते हैं तथा वे पार्श्वभाग आत्माके तेजसे सदा शोभमान रहते हैं इसीलिये वे भगवान् श्रीसुपार्श्व कहे जाते हैं। तथा जो भगवान् शांति हैं।

को सुखको कहते हैं और अंति अंतिक या समीपको कहते हैं [यहां-पर अंति शब्द अंतिकके लिये आया है । किसी नामका एक भाग भी पूरे नामको बतलाता है ।] जिनके समीप सब जीवोंको सुख प्राप्त हो उनको शांति कहते हैं । भगवान् अजितनाथके समीप भी सब जीवोंको सुख प्राप्त होता है इसलिये वे शांति कहे जाते हैं । तथा जो भगवान् पद्मप्रभ हैं । पद् प्राप्तिको कहते हैं । मा लक्ष्मीको कहते हैं । जिसमें लक्ष्मीकी प्राप्ति हो उसको पद्म कहते हैं । सुवर्णमें लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है इसलिये सुवर्णको पद्म कहते हैं । जिनके शरीरकी कांति या प्रभा सुवर्णके समान हो उनको पद्मप्रभ कहते हैं । भगवानके शरीरकी कांति सुवर्णके समान थी इसलिये वे पद्मप्रभ कहलाते हैं । अथवा विहार करते समय देव जो भगवान्के चरणकमलोंके नीचे सुवर्णमयी कमलोंकी रचना करते थे उनपर उत्तम कांति भगवान्के चरण कमलोंके निमित्तसे ही आती थी इसीलिये वे पद्मप्रभ कहलाते हैं । फिर जो भगवान् अर हैं । र का अर्थ धन है । लिखा भी है " रः सु-र्येऽग्नौ धने कामे " अर्थात् र का अर्थ सूर्य अग्नि धन और काम है । जिनके पास कोई किसी प्रकारका धन या परिग्रह नहीं है—सर्वथा नि-र्ग्रंथ हैं उनको अर कहते हैं । भगवान् अजितदेव भी चौवीसों प्रका-रके अंतरंग बाह्य परिग्रहोंसे रहित हैं इसलिये वे अर हैं । तथा जो भगवान् विमलविभु हैं । जिनके कर्ममल नष्ट हो गये हैं ऐसे सगर चक्रवर्ती आदि महापुरुषोंको विमल कहते हैं । भगवान् अजितदेव उन सगर चक्रवर्ती आदि महापुरुषोंके स्वामी हैं इसलिये वे विमलविभु कहे जाते हैं । फिर जो भगवान् वर्द्धमान हैं । जो कभी नाश न हो उसको अवर्ध कहते हैं । मानका अर्थ केवल ज्ञान है । जिनका के-वल ज्ञान कभी नष्ट न हो—धारारूपसे सदा विद्यमान रहे उनको अवर्द्धमान कहते हैं । श्रीअजितनाथ भगवानका केवलज्ञान भी सदा विद्यमान रहता है इसलिये वे वर्द्धमान कहलाते हैं । यहांपर अवाप्यो-रुपसर्गयोः इस सूत्रसे अ का लोप हो गया है । फिर जो भगवान् अर्जा

हैं। तीनों लोकोंके स्वामी केवली भगवानको अज कहते हैं। जिन्के अंक वा समीपमें केवलज्ञानी हों उनको अजांक कहते हैं। भगवान अजितनाथके समवसरणमें भी केवलज्ञानी थे इसलिये वे अजांक कहे जाते हैं। तथा जो भगवान् मल्लि हैं। उन्होंने कर्मरूप शत्रुओंको जीत लिये हैं इसलिये वे महा मल्ल अथवा मल्लि कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् नेमि हैं। भव्य जीव जिनसे धर्मकी पुष्टिको प्राप्त हों उनको नेमि कहते हैं। भगवान् अजितनाथसे भी अनेक भव्यजीव धर्म धारण कर मोक्ष पाये हैं इसलिए वे नेमि कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् नमि हैं। मि हिंसाको कहते हैं। जिनके मतमें एकेंद्रिय आदि सूक्ष्म जीवोंकी भी हिंसा नहीं है उनको नमि कहते हैं। भगवान् अजितनाथके मतमें भी हिंसा नहीं है। इसलिए वे नमि हैं। फिर वे भगवान् सुमति अर्थात् शोभायमान केवलज्ञानरूप ज्ञानको धारण करनेवाले हैं इसलिए वे सुमति कहलाते हैं। तथा जो भगवान् सन् अर्थात् सदा उसी अवस्थामें रहने वाले हैं। जन्म मरणसे सर्वथा रहित है। तथा वे हर्यंक हैं। हरि अर्थात् हाथी और अंक अर्थात् चिन्ह। जिनके चरणकमलोंमें हाथीका चिन्ह है। ऐसे श्री अजितनाथ स्वामी द्वितीय तीर्थंकर मुझ जगन्नाथ नामके धीर अर्थात् पंडितको–ग्रंथके बनानेवाले श्री विद्वद्वर जगन्नाथ पंडितको इस संसारके भयसे रक्षा करो। अथवा मुझको और पंडितवर श्री जगन्नाथको इस संसारके भयसे रक्षा करो।

इति द्वितीयजिनस्तुतिः ॥

---

१ सिंहऽश्वेभकपिप्लवङ्गकिरणार्के कोकिलशुक्रोकोलेर,
चंद्रादित्यहुताशदानगिरिशश्रीधरेन्द्रे गृहे।
शुक्रेऽपी यमगजेन्द्रवरुणे स्वर्गेशनौ पावके,
एतेष्वेव विभाति मेकहरिर्वाच्यो हरिर्वाच्यतः ॥

अर्थ—सिंह हाथी घोड़ा बंदर नाग गरुड़ तोता किरण मरण चन्द्रमा अग्नि वायु धर्मेंद्र पर शुक्र यमराज वेन पवन सुवर्ण यम पारा मेंढक इन इन सब अर्थोंमें हरि शब्द आता है।

अथ तृतीयतीर्थेशस्तुतिः ।

श्रेयान् श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोथधर्मो,
हर्यंकः पुष्पदंतो मुनिसुव्रतजिनोनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः ।
शांतिः पद्मप्रभोगेविमलविभुरसौ वर्द्धमानोप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मा सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ।

टीका—असौ हर्यंकः हरिरश्वः अंके यस्य सः । इको यणचि इतियण् । अको रहाभ्यां द्वे इति द्वित्वमिति हर्य्यंकः श्रीशंभवनाथस्तृतीयतीर्थविधाता । " यमानिलेंद्रचंद्रार्कविष्णुसिंहांशुवाजिषु । शुकाहिकपिभेकेषु हरिर्ना कपिले त्रिषु " इत्यमरः । स मां श्रीजगन्नाथधीरं अवतादिति संबंधः । किंविशेषणः ? श्रेयान् शरीरकांत्यातिशोभनः । मुद्रः श्रीवासुपुज्यः श्रिया सत्यवचनलक्ष्म्योपलक्षिता वा वदनानि सुखानि येषां ते श्रीवाः सद्वादिनः सत्पुरुषाः " वंदने वदने वादे वेदनायां च वः स्त्रियाम् " " गोस्त्रियोरुपसर्जनस्य " इति ह्रस्वः । श्रीवैः समंतात् सुपुज्यः श्रीवासुपुज्यः । पुनः वृषभजिनपतिः । वृषेण षोडशभावनोद्भूतधर्मेण भाति वृषभः । जिनानां पतिः जिनपति वृषभश्चासौ जिनपतिश्च वृषभजिनपतिः । भूयः श्रीद्रुमांकः । श्रियोपलक्षितो द्रुवृक्षः श्रीद्रुरशोकवृक्षः । " पलाशीद्रुद्रुमागमा " इत्यमरः । श्रीद्रोर्मा शोभा अंके यस्य स श्रीद्रुमांकः । अष्टप्रातिहार्यैश्वर्योपि । मुद्रः अथधर्मः । नास्ति थो मिथ्यावाचको धर्मो यस्य सोथधर्मः । उभयनयाविरोधित्वात् । नास्ति थधर्मो यस्य सोथधर्म इति वा । तेन " धर्मादनिच् केवलात् " इत्यनिच न स्यात । पुनः पुष्पदंतः अपवर्गानंतसुखमहागहनक्रीडायां पुष्पदंत इव पुष्पदतः दिग्गजसदृश इत्यर्थः । " ऐरावतः पुंडरीको वामनः कुमुदोंजनः । पुष्पदंतः सार्वभौमः सुप्रतीकश्च दिग्गजाः " इति । तदुक्तं नेमिनिर्वाणकाव्ये ' कतायतिन्यक्कृत-पुष्पदतः ' इति । मुहुः मुनिसुव्रजिनः मुनिभिर्मै.तश्रुतावधि-

मन पर्ययागमभृद्भिः मुनिनाः पवित्रा जिनाख्यानेणादयः पंचोत्तर-शतं गणधरा यस्य : स मुनिसुव्रतजिनः । मुहुः अनंतवाक् नास्ति अंतो यस्याः सा अनंता । अनंता वाग् वाणी यस्य सोनंतवाक् । " स्त्रियां पुंवद्भावितपुंस्कादनूङ् समानाधिकरणे स्त्रियां मनूरिणी प्रियादिषु " इति पुंवद्भावः । पुनः श्रीसुपार्श्व श्रिय. स्तंभरतोलि-निधिमार्गतडागवापिक्रीडाद्यादयः सुपार्श्वे यस्य स श्रीसुपार्श्वः । भूयः शांतिः शांतिकारी सर्वोपकारित्वात् । तदुक्तं स्वामिसमंत-भद्रैः " त्वं शंभवः संभवतर्षरोगैः संतप्यमानस्य जनस्य लोके । आसीरिहाकस्मिक एव वैद्यो वैद्यो यथा नाथ रुजां प्रशांत्यै " इति । मुहुः पद्मप्रभोरोविमलविभुः पद्मप्रभाणि कमलप्रतीकाशानि निर्दंभत्वात् उरांसि हृदयाणि येषां ते पद्मप्रभोरसः निर्मलचेतस्का दयालवः ते च ते विमला इंद्रादय इति पद्मप्रभोरोविमलाः । तेषां विभुः पद्मप्रभोरोविमलविभुः । पुनः अवर्द्धमानः अव समं-तात् ऋद्धं परिपूर्ण त्रिजगत्प्रकाशि मानं केवलज्ञानं यस्य स अवर्द्धमानः । पुनः अप्यजांकः । नास्ति पि भय सप्तविध येषां ते अपयः सप्तभयविप्रमुक्ताः ऽन्यथना ऽजा महामुनयस्तेऽंके निकटे यस्य सोप्यजांकः । " पिः पुंसि पंडितागारे सागर सोदरे दरे " इत्येकाक्षरे भूयः मल्लिः मल्लो ऽमणा लिर्लोनकछेदन यस्मादिति मल्लिः । " लिः पुंसि लाव " इति । पुनः नेमिः । नानां नराणां ः कामस्त मिनाति हिनस्ति नेमिः । उपलक्षण कामक्रोध-लोभमानमायादीनामपाकर्ता । " नॉ नेरे च मनाथेपि " । भूयः नमिः नस्य नास्तिकस्य र मिथ्यात्वस्य मीर्निवाणं यस्मा-दसौ नमिः स्याच्छब्दबल्ला कारन. । तस्येत्यत्र नामैकदेशो नास्ति प्रवर्तते इति वचनादास्तिकस्याद्यर्थेऽवगम्यते । " बंधश्च मोक्षश्च तयोश्च हेतुः बद्धश्च मुक्तश्च फलं च मुक्तेः । स्याद्वादिनो नाथ तवैव युक्तं नैकान्तदृष्टेस्त्वमतोसि शास्ता " अन्यच्च " स्याच्छब्दस्ता-वके न्याये नान्येषामात्मविद्विषाम " इति व्यक्त सर्वत्र । मुहुः

मीक हैं। श्री लक्ष्मीको कहते हैं, तु अशोक वृक्षको कहते हैं या शो-
भाको कहते हैं और अंक मनीको कहते हैं। जिनके समीपमें अनेक
प्रकारकी शोभासे सुशोभित अशोक वृक्षकी शोभा विद्यमान हो उनको
श्रीतुर्नोक कहते हैं ; भगवान् शंभवनाथके समीप भी अशोक वृक्ष शो-
भायमान था क्योंकि आठ प्रातिहार्योंमें अशोक वृक्ष भी एक है इस-
लिये वे श्रीतुर्नोक कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् अथधर्म हैं। निश्चय
नय और व्यवहार नय दोनों नयोंसे विरोध रखनेवाले मिथ्या धर्मको
थधर्म कहते हैं। जिनके ऐसा मिथ्या धर्म न हो उनको अथधर्म कहते
हैं। भगवान् शंभवनाथके कहे हुए वचनोंमें भी पूर्वापर कोई विरोध नहीं
है, न निश्चय व्यवहारसे कोई विरोध है इसलिये वे भगवान् अथधर्म कहे
जाते हैं। अथवा थ शब्दका अर्थ थोडा वा अपूर्ण है। लिखा भी है-थं
स्तोकार्थे नपुंसकम्। अर्थात् थ शब्द नपुंसक लिंग है और उसका अर्थ
थोडा है। जिनका कहा हुआ धर्म थोडा वा अपूर्ण न हो उनको अथ-
धर्म कहते हैं। भगवान् शंभवनाथका कहा हुआ धर्म भी अपूर्ण नहीं
है किन्तु पूर्ण है। मोक्षका साक्षात् कारण है इसलिये वे अथधर्म कहे
जाते हैं। फिर जो भगवान् पुष्पदन्त हैं। पुष्पदन्त दिग्गजको कहते हैं।
अमरकोषमें लिखा है "ऐरावत. पुंडरीको वामनः कुमुदोंजन । पुष्प-
दन्तः सार्वभौमः सुप्रतीकश्च दिग्गजा "। अर्थात् ऐरावत पुंडरीक वामन
कुमुद अंजन पुष्पदन्त सार्वभौम सुप्रतीक ये आठ दिग्गज कहलाते
हैं। नेमिनिर्वाण काव्यमें भी लिखा है। " करायतिन्यक्कृतपुष्प-
दन्तः। " अर्थात् जो अपनी लंबी भुजाओंसे पुष्पदन्त दिग्गजकी सूं-
डको भी मात करते हैं। दिग्गज दिशाओंमें रहनेवाले महागजराज
कहलाते हैं। जो मोक्षके अनन्त सुखरूपी महावनमें पुष्पदन्त अथवा
दिग्गजके समान क्रीडा करनेवाले हों उनको पुष्पदन्त कहते हैं।
भगवान् शंभवनाथ भी मोक्षमें प्राप्त होनेवाले अनंत सुखरूपी
गहन वनमें दिग्गजोंके समान ही स्वतंत्र रीतिसे क्रीडा कररहे हैं
वे पुष्पदंत कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् [illegible] पिन हैं।

ज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान इन चारों ज्ञानोंको धारण करनेवाले महर्षियोंको मुनि कहते हैं। गणधर देवोंको जिन कहते हैं। जिनके गणधरादिक चारों ज्ञानको धारण करनेवाले अनेक मुनियोंसे सुव्रत अर्थात् घिरे हों-सुशोभित हों उनको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं। भगवान् शंभवनाथके समवसरणमें भी चारुषेण आदि एक सौ पांच गणधर मति श्रुत अवधि मनःपर्यय इन चारों ज्ञानोंको धारण करनेवाले अनेक मुनियों के साथ सुशोभित थे इसलिये वे भगवान् मुनिसुव्रतजिन कहलाते हैं। फिर जो भगवान् अनन्तवाक् हैं। जिसका अंत न हो उसको अनन्त कहते हैं। जिनकी वाणी अनंत हो उनको अनन्त-वाक् कहते हैं। भगवान् शंभवनाथकी वाणी भी अनंत है-पारा-वार रहित है अथवा अनंत धर्मोंको कहने वाली है इसलिये वे भगवान अनंतवाक् कहे जाते हैं। तथा जो भगवान् श्रीसुपार्श्व हैं। श्री शोभाको कहते हैं। और सुपार्श्व समीपको कहते हैं। मानस्तंभ, प्रतोली, निधि, मार्ग, सरोवर, वापी, क्रीडावन आदि समवसरणकी शोभा जिनके समीप वा चारों ओर हो उनको श्रीसुपार्श्व कहते हैं। भगवान् शंभवनाथके समवसरणमें भी यह सब शोभा थी और यह शोभा उनके चारों ओर थी इसलिये वे श्रीसुपार्श्व कहलाते हैं। फिर जो भगवान् शांति हैं। सब जीवों को शांति दें-सब जीवोंका उपकार करें उनको शांति कहते हैं। भगवान् शंभवनाथने भी अनेक जीवोंके जन्ममरणरूप महा दुःख दूर कर उनको सदाके लिये शांति प्रदान की है-उन्हें मोक्ष प्राप्त कराकर सदाके लिये शांति दी है इसलिये वे शांति कहे जाते हैं। यही बात स्वामी *समन्तभद्राचार्यने अपने बृहत्स्वयम्भूस्तोत्रमें लिखी है "त्वं शंभव* संभवतर्षरोगैः संतप्यमानस्य जनस्य लोके। आसीरिहाकस्मिक एव वैद्यो वैद्यो यथा नाथ रुजां प्रशान्त्यै" अर्थात् हे नाथ! जिस प्रकार एक वैद्य इस संसारमें ज्वर आदि रोगोंको शान्त कर जीवों का कल्याण करता है उसी प्रकार हे शंभव! आप भी संभव अर्थात् संसार के मनोरथ वा तृष्णारूपी रोगोंसे अत्यंत दुःखी होने वाले-जलनेवाले लोगोंके

लिये आकस्मिक वैद्य हैं; उनके समस्त रोगों को–संसारके समस्त दुःखों को दूर कर सदा के लिये शांति स्थापन कर देते हैं–उन्हें मोक्ष प्राप्त करा देते हैं। फिर जो भगवान् पद्मप्रभोरोविमलविभु हैं। पद्म कमलको कहते हैं, प्रभाका अर्थ समान है और उर हृदयको कहते हैं। इन्द्रादिक पुण्यपुरुष पुण्य कर्म के उदयसे होते हैं इसलिये वे विमल कहलाते हैं। तथा विभु स्वामीको कहते ही हैं। जिनके हृदय कमलके समान निर्मल वा दयालु हों ऐसे इन्द्रादिक महापुरुषों को पद्मप्रभोरोविमल कहते हैं। उनके स्वामीको पद्मप्रभोरोविमलविभु कहते हैं। भगवान् शंभवनाथ कमलके समान निर्मल हृदयको धारण करनेवाले इन्द्रादिक महापुण्यवान पुरुषों के स्वामी हैं इसलिये वे पद्मप्रभोरोविमलविभु कहलाते हैं। फिर जो भगवान् अवर्द्धमान हैं। अवका अर्थ चारों ओर है, ऋद्धका अर्थ परिपूर्ण है और मान केवलज्ञानको कहते हैं। जिनका ज्ञान सब ओरसे तीनों लोकोंको प्रकाशित करनेवाला पूर्ण केवल ज्ञान हो उनको अवर्धमान कहते हैं। भगवान् शंभवनाथका ज्ञान भी ऐसा ही है इसलिये वे अवर्द्धमान कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् अप्यजांक हैं। पि शब्दका अर्थ भय है। लिखा भी है "पिः पुंसि पीडिताराबे सागरे सोदरे दरे"। पि शब्द पुल्लिंग है और उसका अर्थ दुःखमरे शब्द, समुद्र, भाई और भय है। जिनके इस लोक परलोक आदि सात प्रकार का भय न हो उनको अपि और अज मुनिको कहते हैं। तथा अंक समीप को कहते हैं। सात प्रकारके भयसे रहित मुनियोंको अप्यज कहते हैं। जिनके समीप ऐसे मुनि हों उनको अप्यजांक कहते हैं। भगवान शंभवनाथके समवसरणम भी सातों प्रकारके भयोंसे रहित अनेक मुनिराज थे इसलिये उन भगवानको अप्यजांक कहते है। फिर जो भगवान मलि हैं। मल कर्मोंको कहते हैं और लि नाश को कहते हैं। लिखा भी है 'लि पुंसि नाश' अर्थात् लि शब्दका अर्थ नाश है। जिनसे अथवा जिनके द्वारा कर्मोंका नाश हो उनको मलि कहते हैं। भगवान शंभवनाथने भी कर्मोंका नाश किया है इसलिये वे मलि

में कभी नहीं लग सकता। इसलिये भगवान् शंभवनाथ अपने स्याद्वाद वा अनेकांतरूप सिद्धांतसे अनेक भव्य जीवोंका मिथ्यात्व दूर करनेवाले नमि हैं। फिर जो भगवान् सुमति हैं। सु का अर्थ उत्तम है और मतिका अर्थ बुद्धि है। जिनके संबंधसे जीवोंकी बुद्धि उत्तम होजाय उनको सुमति कहते हैं। भगवान् शंभवनाथके सम्बन्धसे उनके गुणोंका स्मरण करनेसे, उनके दर्शन करनेसे और उनकी स्तुति करनेसे भव्य जीवोंकी बुद्धि मिथ्यात्वसे छूटकर सम्यग्दर्शनसे सुशोभित होजाती है—मोक्षमार्गमें लग जाती है इसलिये वे भगवान सुमति कहे जाते हैं। तथा जो भगवान सन् अर्थात् अविनश्वर हैं। सदा एकसे रहनेवाले जन्ममरणसे रहित हैं। ऐसे वे हर्यंक–हरि अर्थात् घोडा और अंक अर्थात् चिन्ह। जिनके चरणकमलोंमें घोडेका चिन्ह है ऐसे श्री शंभवनाथ स्वामी तृतीय तीर्थंकर मुझ जगन्नाथ नामके धीर अर्थात् पंडितकी—ग्रंथके बनानेवाले विद्वान् श्रीजगन्नाथ पंडितको इस संसारके भयसे रक्षा करो। अथवा मुझको और पंडितप्रवर श्रीजगन्नाथको इस संसारके भयसे रक्षा करो।

काव्यका तीसरा अर्थ समाप्त हुआ।

श्री अभिनंदनस्तुतिः

श्रेयान् श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोथधर्मो.
हर्यंकः पुष्पदंतो मुनिसुव्रतजिनोनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः।
शांतिः पद्मप्रभोरोविमलविभुरसौ वर्द्धमानोप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम्।

टीका–असौ हर्यंकः। हरिशब्दार्था उक्ता। हरि कपिरंके यस्य स हर्यंकः अभिनंदनभट्टारकः चतुर्थजिनेशिता। मां श्रीजगन्नाथधीरमवतु इति संबंधः। किंलक्षणः? श्रेयान्। श्रेयं महाव्रतादिकमनिति पालयति श्रेयान्। पुनः श्रीवासुपूज्यः। उशब्दो हरार्थं वक्ति। तदुक्तं "उशब्दः शंकरे तोये"। आ मर्यादायां 'अः शिवे केशवे वायौ ब्रह्मचंद्राग्निभानुषु'। आ स्वयंभूस्तवोक्त

मल्लिः महते बिभर्ति अनंतसुखे जनान् इति मल्लिः । भूयः नेमि । भव्यान् दीक्षां नयति नेमिः । पुनः नमिः । अनुपमत्वात् । पुनः सन् शाश्वतः । पुनः सुमति सुव्रः ।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुत्येकाक्षरप्रकाशिकायां भट्टारकश्रीनरेन्द्रकीर्तिमुख्यशि-ष्यपंडितजगन्नाथकृतायां श्रीचतुर्थतीर्थंकरस्याभिनंदनस्य स्तुतिः समाप्ता ॥४॥

आगे श्री अभिनंदननाथ चौथे तीर्थंकरकी स्तुति करते हैं ।

अन्वयः—श्रेयान् श्रीवासुपूज्यः वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकः अथधर्मः पुष्पदंतः मुनिसुव्रतजिनः अनन्तवाक् श्रीसुपार्श्वः शांतिः पद्मप्रभः अरः विमलविभुः वर्द्धमानः अपि अजांकः मल्लिः नेमिः सुनतिः मत् असौ हर्षकः मां श्रीजगन्नाथधीरं अवतु ।

अर्थ—जो श्री अभिनन्दननाथ स्वामी श्रेयान् हैं । महाव्रतादिक महाव्रतधारणको श्रेय कहते हैं और यन् पालन करनेको कहते हैं । भगवान अभिनन्दननाथने भी महाव्रतादिक तपश्चरण धारण किया है इसलिये वे श्रेयान् कहे जाते हैं । फिर जो भगवान वासुपूज्य हैं । उ शब्दका अर्थ महादेव है । अथवा वा शब्दका अर्थ सूर्य वा [illegible] आदि है । ...

के द्वारा पूज्य हैं। फिर मुर्वादिकके द्वारा तो पूज्य हैं ही। फिर जो भगवान् वृषभजिनपति हैं। जो वृषभ या बैलके समान दीक्षाके भारको धारण करें उनको वृषभ कहते हैं। तथा गणधरदेवोंको जिन कहते हैं। गणधरदेव भी दीक्षाके भारको धारण करते हैं इसलिये वे वृषभजिन कहलाते हैं। उनके स्वामीको वृषभजिनपति कहते हैं। भगवान् अभिनंदन स्वामी भी दीक्षा के भारको धारण करनेवाले श्री वज्रनाभि आदि एकसौ तीन गणधरों के स्वामी हैं इसलिये वे वृषभजिनपति कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् श्रीद्रुमांक हैं। जिनके समवसरणमें श्री अर्थात् शोभा और द्रु अर्थात् अशोक वृक्ष दोनों हों उनको श्रीद्रुमांक कहते हैं। भगवान् अभिनंदन के अंक अर्थात् समवसरणमें भी शोभा और अशोक वृक्ष थे इसलिये वे श्रीद्रुमांक कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् अधधर्म हैं। अध थोड़े को कहते हैं। जिनके मतमें थोड़े धर्म न हों उनको अधधर्म कहते हैं। भगवान् अभिनंदन स्वामीके मतमें स्याद्वाद के द्वारा कहे जाने वाले पूर्ण धर्म थे इसलिये वे अधधर्म हैं। फिर जो भगवान् पुष्पदन्त हैं। पुष्पद शब्दका अर्थ विकसित होनेवाला है। अंत शब्दका अर्थ बल है। जिनका बल विकसित हो प्रसिद्ध हो उनको पुष्पदंत कहते हैं। अभिनन्दन स्वामीका बल भी जगतप्रसिद्ध लोकोत्तर था इसलिये वे पुष्पदंत कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् मुनिसुव्रतजिन हैं। मुनिका अर्थ महाव्रती है सुव्रत शब्दका अर्थ जिनमतमें द्वेष कर आच्छादन करना है। जो जिन मतमें द्वेषकर मुनियोंका आच्छादन करें ऐसे घोर मिथ्यादृष्टी लोगोंको मुनिसुव्रत कहते हैं। जिनका अर्थ जीतनेवाले हैं। भगवान् अभिनंदन स्वामी ऐसे एकान्तमें लीन होनेवाले महा मिथ्यादृष्टी लोगोंको जीतनेवाले हैं इसलिये वे मुनिसुव्रतजिन कहे जाते हैं। फिर जो भगवान अनन्तवाक हैं नष्ट न होनेवाली अनन्त वाणीका निरूपण करनेवाले हैं। फिर जो भगवान श्रीमुपार्श्व हैं। अपने स्वरूपको छोड़कर जो रहे उसको श्री कहते हैं। ई लक्ष्मीको कहते हैं। ई का अर्थ लक्ष्मी और मदसे उत्पन्न हुई तृष्णा है। लक्ष्मीका स्वभाव

अस्थिर है—चंचल है परन्तु जो लक्ष्मी अपने स्वरूपको छोड़कर रहे, चंचल न रहे, स्थिर रूपसे रहे उसको श्री ई कहते हैं। दोनोंको मिलनेसे श्री शब्द बन जाता है। जिनके सुपार्श्व अर्थात् समीपमें स्थिर स्वभाववाली लक्ष्मी हो उनको श्रीसुपार्श्व कहते हैं। भगवान् अभिनन्दनके समीप भी स्थिर स्वभाववाली अनन्त चतुष्टय स्वरूप लक्ष्मी है इसलिये वे श्री सुपार्श्व कहलाते हैं। फिर जो भगवान् शांति हैं। शं धनको कहते हैं। शाका अर्थ लक्ष्मी है और शंका अर्थ बन और धन है। जिनके प्रभावसे लोगोंके समीप सम्यग्दर्शनरूप धन प्राप्त हो वे शांति कहाते हैं। भगवान् अभिनन्दनके उपदेशसे भी अनेक भव्यजीवोंको सम्यग्दर्शनरूप धन प्राप्त हुआ था इसलिये वे शान्ति हैं। फिर जो भगवान् पद्मप्रभ हैं। पद् प्राप्त होनेको कहते हैं और मा लक्ष्मीको कहते हैं। जिसके पहननेसे धारण करनेसे महालक्ष्मी प्राप्त हो ऐसे सुवर्णको पद्म कहते हैं। जिसकी प्रभा अथवा शरीरकी कांति सुवर्णके समान हो उसको पद्मप्रभ कहते हैं। भगवान् अभिनन्दन स्वामीके शरीरकी कांति भी सुवर्णके समान थी इसलिए वे पद्मप्रभ कहलाते हैं। फिर जो भगवान् अर हैं। अ ब्रह्मको कहते हैं तथा र कहने वा वर्णन करनेको कहते हैं। जो परब्रह्मका वर्णन करें उन्हें अर कहते हैं। भगवान अभिनन्दन स्वामीने भी अपने धर्मोपदेशमें परब्रह्म सिद्ध परमेष्ठी का स्वरूप बतलाया था और अनेक जीवोंको प्राप्त कराया था इसलिए वे अर हैं। फिर जो भगवान् विमलविभु हैं। जिनकी आत्मा निर्मल हो ऐसे सम्यग्दृष्टियोंको विमल कहते हैं। जो उनके स्वामी हों उनको विमलविभु कहते हैं। भगवान् अभिनन्दन भी समस्त भव्य जीवोंके स्वामी हैं इसलिए वे विमलविभु कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् वर्द्धमान हैं। वर्द्ध का अर्थ छेदन और मान का अर्थ ज्ञान है। जिनका ज्ञान कर्मोंको छेदन करनेवाला हो उनको वर्द्धमान कहते हैं भगवान् का ज्ञान भी समस्त कर्मोंको नाश करनेवाला है इसलिए वे वर्द्धमान हैं। फिर जो भगवान् नपि अर्थात् किसी नयसे अज्ञेय हैं। जिसका कभी

नाश न हो उसको अज कहते हैं। जिनका अंक अर्थात् अनंत चतुष्टय रूप चिन्ह कभी नाश न हो उनको अजांक कहते हैं। भगवानका अनंतचतुष्टयरूप चिन्ह भी ऐसा है इसलिये वे निश्चयनयसे अजांक हैं। फिर जो भगवान् महि हैं। मह धातुका अर्थ धारण करना है। जो जीवोंको अनंत सुखमें धारण करदें उनको महि कहते हैं। भगवान् अभिनंदन स्वामीके धर्मोपदेशसे भी अनेक भव्य जीवोंने अनन्त सुख प्राप्त किया है इसलिये वे महि हैं। फिर जो भगवान् नेमि हैं। जो भव्य जीवोंको दीक्षा धारण करावें उनको नेमि कहते हैं। भगवानके उपदेशसे भी अनेक भव्य जीवोंने दीक्षा धारण की है इसलिये वे नेमि हैं। फिर जो भगवान् नमि हैं। मि प्रमाण करनेको कहते हैं। जो संसारी जीवोंके प्रमाणमें न आवें उनको नमि कहते हैं। भगवान् अभिनन्दन स्वामी संसारी जीवों के ज्ञानगोचर नहीं होते। संसारी जीव उनके अमूर्त स्वरूपको प्रत्यक्ष नहीं जान सकते इसलिये वे नमि कहलाते हैं। अथवा वे अनुपम हैं। संसारमें उनकी अन्य कोई उपमा नहीं है। संसारी जीव किसी की उपमा देकर उनका स्वरूप नहीं कह सकते इसलिये भी वे नमि हैं। फिर जो भगवान सुमति अर्थात् सर्वोत्तम ज्ञानको धारण करने वाले हैं इसलिये सुमति कहाते हैं। तथा जो भगवान सन् अर्थात् नाश रहित वा अविनश्वर हैं। ऐसे जो हर्यंक हरि अर्थात् बन्दर और अंक अर्थात् चिन्ह। जिनके चरणकमलोंमें बन्दर का चिन्ह है ऐसे श्री अभिनन्दननाथ भट्टारक चतुर्थ तीर्थंकर मुझ जगन्नाथ पंडितकी इस संसारके भयसे रक्षा करो।

इति अभिनंदनजिनस्तुति।

भारके मध्ये रक्षा करे ऐसे इस प्रकारके धर्मको भग कहते हैं। फि
मुक्त कहा हुआ धर्म धारण करने योग्य हो उसको भगवान् कहते हैं
भगवान् मुनिसुव्रतनाथका कहा हुआ दशलक्षणका उत्तम क्षमा आदि ध
धर्म भी धारण करने योग्य वा पालन करने योग्य है इसलिये वे भग
वान् भगवान् हैं। फिर जो भगवान् श्रीवासुपूज्य हैं। श्री शोभा
कहते हैं व वंदना करनेको—नमस्कार करनेको कहते हैं। सु शब्द
ऐका नाम है। और अच्छी तरह पूजा करने योग्य को सुपूज्य कहते हैं
जो शोभायमान नमस्कार करनेवालोंके द्वारा चारों ओरसे अच्छी त
पूज्य हों उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं । भगवान् मुनिसुव्रतनाथ स्वा
भी नमस्कार करते हुए इन्द्रादिकोंकेद्वारा अच्छीतरह पूज्य हैं इसलि
श्रीवासुपूज्य हैं । फिर जो वृषभजिनपति हैं । वृ धातु
अर्थ ग्रहण करना है । जो ग्रहण करने योग्य हो उस
वृ कहते हैं । ष का अर्थ मोक्ष है । जो ग्रहण कर
योग्य मोक्ष है उसको वृष कहते हैं । उस ग्रहण करने योग्य मोक्ष
जो शोभायमान हों उनको वृषभ कहते हैं । कर्मोंके जीतनेवाले मुनि
राजोंको वा गणधरोंको जिन कहते हैं । भगवान मुनिसुव्रतनाथ स्वा
ग्रहण करने योग्य मोक्षमें सुशोभित होनेवाले गणधरादि जिनोंके प
वा स्वामी हैं इसलिये वे वृषभजिनपति कहे जाते हैं। फिर जो भगव
श्रीद्रुमांक हैं । श्री लक्ष्मीको कहते हैं । द्रु अशोकवृक्ष आ
आठों प्रातिहार्योंको कहते हैं । म चंद्रमाको कहते हैं और अंक समी
को कहते हैं । जिनके समीपमें लक्ष्मी वा शोभा हो, आठों प्रातिहा
हों और चंद्रादिक देव हों उनको श्रीद्रुमांक कहते हैं। भगवा
मुनिसुव्रतनाथके समीप भी समवसरणकी शोभा थी, आठो प्रातिहार्य थे औ
चंद्रादिक सब देव थे इसलिये वे श्रीद्रुमांक कहलाते हैं । फिर ज
भगवान् अधर्म है । अ परब्रह्मको कहते है। परब्रह्म पद आर्हंत अव
स्थामें प्राप्त होता है । धर्मका अर्थ स्वभाव है। अर्हंत अवस्थामें प्रा
होनेके कारण जिनके धर्म वा भाव थे अर्थात अत्यंत गंभीर होगये हैं

उनको अधर्म कहते हैं। भगवान सुमतिनाथका स्वभाव भी निश्चल है इसलिए वे भगवान् अधर्म हैं। फिर जो भगवान् हर्यंक हैं। हर्य धातुका अर्थ ग्लानि करना है। सूर्यके अस्त होते समय चकवा नामका पक्षी ग्लानि करता है—दुःखी होता है। क्योंकि रात्रिमें चकवा चकवीका वियोग हो जाता है। इस प्रकार हर्य चकवाको कहते हैं। अंक चिन्हको कहते हैं। जिनका चिन्ह चकवा हो उनको हर्यंक कहते हैं। भगवान् सुमतिनाथके चरणकमलोंका चिन्ह चकवा है इसलिये वे हर्यंक हैं। फिर जो भगवान् पुष्पदन्त हैं। जिनका अंत अर्थात् धर्म सदा पुष्पत् अर्थात् विकसित होता रहे उनको पुष्पदन्त कहते हैं। फिर जो भगवान् मुनिसुव्रतजिन हैं। जो मुनियोंसे घिरे रहें उनको मुनिसुव्रत कहते हैं। भगवान् सुमतिनाथके समवसरणमें चामर आदि एकसौ सोलह गणधर सदा मुनियोंके साथ विराजमान रहते थे इसलिये वे मुनिसुव्रत जिन हैं। फिर जो भगवान अनंतवाक् हैं। भव्य जीवोंकी संख्या अनन्त है इसलिये अनन्त का अर्थ भव्य है। भगवान सुमतिनाथकी वाणी भव्य जीवोंका उपकार करनेवाली है इसलिये वे भगवान् अनन्तवाक् हैं। तथा जो भगवान श्रीयुगार्श्व हैं। जिनका [illegible] बहुत ही शोभायमान हो उनको श्रीयुगार्श्व कहते हैं। फिर जो भगवान शान्ति हैं। जो अन्य [illegible] उनको शान्ति कहते हैं। फिर जो भग[illegible] कहते हैं और पद्म [illegible] कहते हैं [illegible] ऐसे सुवर्णके पद्म कहते हैं [illegible] सुवर्णके समान है इसलिये वे पद्मप्रभ हैं। फिर जो भगवान् [illegible] कहते हैं जिनके [illegible] हो [illegible] कहते हैं। फिर जो भगवान् विमलविभु हैं [illegible] शुद्ध [illegible] कहते हैं और सबके स्वामीको विभु कहते हैं। फिर जो भगवान् [illegible] हैं। [illegible] ज्ञान और [illegible] सदा रहनेवाला अनन्त सुख है। तथा [illegible] कहते हैं अर्थात् ज्ञानके [illegible] अर्थात् अनन्त सुखको

कहते हैं । यह शम अर्थात् आत्माका शान्त गुण है अर्थात् मुक्त होजाने
है । इसप्रकार सर्वोत्तम भाव आत्माके उत्पन्न होनेवाला अनन्तज्ञान
महाभाग्य हुआ । जो आत्मामें उत्पन्न होनेवाले अनन्त गुणरूप महात्म्य
होकर सदा वृद्धिको प्राप्त होते रहें उनको वर्द्धमान कहते हैं ।
जिनको कर्म आदि शत्रु अथवा क्रोधादिक शत्रु कभी नहीं जीत सके
ऐसे मुनियोंको अज कहते हैं । ऐसे मुनि जिनके अंकमें हों उनको
अजांक कहते हैं । फिर जो भगवान् मल्लि हैं । मल् धातुका अर्थ धारण
करना है । जो अपने मनको अपने आत्मामें धारण करें उनको मल्लि
कहते हैं । फिर जो भगवान् नेमि हैं । न का अर्थ मनुष्य है और ई
शब्दका अर्थ मोह है । मि शब्दका अर्थ दूर करना या नाश करना
है । जो मनुष्योंके मोहको दूर करें उनको नेमि कहते हैं ।
फिर जो भगवान् नमि हैं । जो सिद्धों को नमस्कार करें उनको नमि
कहते हैं । फिर जो भगवान् सुमति हैं । सु का अर्थ उत्तम है, म का
अर्थ मंत्र है और ति का अर्थ पूजा है । जिनकी पूजा करते समय
आह्वानन आदि के मंत्र बहुत ही उत्तम उच्चारण किये जाते हैं उनको
सुमति कहते हैं । फिर जो भगवान् सत् अर्थात् अविनश्वर हैं । ऐसे
श्री सुमतिनाथ पंचम तीर्थंकर स्तवना पूर्वक मुझ जगन्नाथ पंडितको इस
संसारके भयसे रक्षा करें । इति सुमतिनाथस्तुति ।

अथ पद्मप्रभस्तुति ।

श्रेयान् श्रीवासुपूज्योवृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोथधर्मो,
हर्यंकः पुष्पदंतो मुनिसुव्रतजिनोऽनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः ।
शांतिः पद्मप्रभोऽरोविमलविभुरसौ वर्द्धमानोप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ।

टीका—अथ पंचमस्तुत्यनंतर, मंगलार्थो वा । पद्मप्रभः पद्मप्रभ
नामा षष्ठजिनेंद्र मां श्रीजगन्नाथधीरमवतादिति संबंधः । किंविशिष्टः

श्रेयान् श्रेष्ठः। पुनः श्रीवासुपूज्यः। श्रीवाः सत्यवादा येषां ते श्रीवाः अनंततत्त्ववादिनस्तैरासुपूज्यः श्रीवासुपूज्यः। भूयः अवृषभ-जिनपतिः न सन्ति वृषाणि श्रेष्ठानि भानि भोगा येषां ते अवृषभाः। " भं नक्षत्रे भगे भोगे "। अवृषभाश्च ते जिना वज्रचामरादय एकादशोत्तरशतगणधरास्तेषां पतिः अवृषभजिन-पतिः। भूयः श्रीद्रुमांकः। श्रीद्रुमाः कल्पवृक्षाः अंके समवसरणे यस्य स श्रीद्रुमांकः। पुनः धर्मः। धर्ममूर्तित्वात्। पुनः हर्यंकः। हरति चित्तं रागिणामिति हरिः कमलं। हरिः अंके यस्य स हर्यंकः। पुनः पुष्पदंतः। पुष्प विकसने। पुष्पति विकसति विषयव्याप्तिर्विनीपु इति पुष्पन् मदनः। पुष्पतः अंतो विनाशो यस्मादिति पुष्पदंतः। पुनः मुनिसुव्रतजिनः। मुनिसुव्रतु मुनिग्राह्यव्रतसु ताः तस्कराः क्रोधादयस्तान् जयति स मुनिसुव्रतजिनः। पुनः अनंत-वाक्श्रीसुपार्श्वः। अनंता अनवधयो वाचो यस्माज्जनानामिति अनंतवाक्। इत्थं नुतं श्रीसुपार्श्वं सत् समीपं यस्य सोऽनंतवाक्-श्रीसुपार्श्वः। मुहुः शांतिः। शा श्रीः अंतावेतिके यस्य स शांतिः। " शा श्रियाम् "। पुनः अरः। एन केवलज्ञानेन मिथ्यांधकार-विनाशने रः सूर्य इव इति अरः। पुनः विमलविभुः। विगतानि मलानि अष्टकर्माणि यस्मिन् स विमलो मोक्षः। तस्य विभुः वि-मलविभुः। भूयः असोवर्द्धमानः। न स सुखं असं दुःखमित्यर्थः। अष्टकर्मपिण्डमिति भावः। तस्य ओः पीडितं निराकरणं असोः। असा वा असवि वा त्रयोदशे चतुर्दशे वा गुणस्थाने कर्मनिराकर-णेन वर्द्धमानः इति असोवर्द्धमानः। पुनः अप्पजांकः। नास्ति पिर्भयं येषां ते अपयः। निर्भयाः स्याद्वादिनः। अथवा न पिः पीडितारावो येषां ते अपयः। जिष्णवोऽनुत्तरवादिनः। " पिः पुंसि पीडितारावे सागरं सोदरं द्रे "। अजाश्चतुर्बोधधराः। अपय-श्च अजाश्च अप्पजास्तेऽके यस्य सोऽप्पजांकः। पुनः मल्लिः। मल्लते विषयादिष्वात्मानं यतते तन्मलं अज्ञानम्। तस्य लिलांवो यस्मा-

हैं इसलिये वे श्रीद्रुमांक हैं। फिर जो भगवान् धर्म की मूर्ति हैं। फिर जो भगवान् हर्यंक हैं। रागी जीवोंके हृदयोंको हरण करे सो हरि अर्थात् कमल है। जिनके कमल का चिन्ह हो उनको हर्यंक कहते हैं। फिर जो भगवान् पुष्पदन्त हैं। पुष्प धातुका अर्थ विकसित होना है। जो विषयोंमें विकसित हो ऐसे कामदेवको पुष्प कहते हैं। जिनसे उस कामदेवका अंत अर्थात् नाश हो उनको पुष्पदन्त कहते हैं। फिर जो भगवान् मुनिसुव्रतजिन हैं। मुनिका अर्थ निर्ग्रंथ है, सुका अर्थ अच्छी तरह है। वृ धातुका अर्थ ग्रहण करना है। जो ग्रहण करने योग्य हो उसको वृ कहते हैं। जो मुनियोंके द्वारा अच्छी तरह ग्रहण करने योग्य हो ऐसे तपश्चरणको मुनिसुवृ कहते हैं। त का अर्थ तस्कर अथवा चोर है। जो मुनियोंके तपश्चरणको हरण करनेवाले हों ऐसे क्रोधादिक कषायोंको मुनिसुव्रत कहते हैं। जीतनेवालेको जिन कहते हैं। क्रोधादिक कषायोंको जीतें उनको मुनिसुव्रत जिन कहते हैं। फिर जो भगवान् अनन्तवाक् श्रीगुरार्थ हैं श्रीगुरार्थ समीपको कहते हैं। भगवान् पद्मप्रभकी वाणी भव्यजीवोंकेलिये अनन्त है—इस प्रकारकी स्तुति जिनके समीपमें सदा होती रहे उनको अनन्तवाक्-श्रीगुरार्थ कहते हैं। फिर जो भगवान शान्ति हैं। शा लक्ष्मीको कहते हैं, अन्ति समीप को कहते हैं। भगवान पद्मप्रभके समवसरणमें अनेक प्रकारकी लक्ष्मी विद्यमान थी इसलिये वे शान्ति हैं। फिर जो भगवान भार हैं। भ ज्ञानको कहते हैं और र सूर्य को कहते हैं। भगवान पद्मप्रभ अपने केवलज्ञानसे मिथ्यात्व अंधकारका नाश करनेके लिये सूर्य हैं इसलिये व भार हैं। फिर जो भगवान विमलविभु हैं। आठों कर्मरूपी मलको मल कहते हैं। जहांपर आठों कर्मरूपी मल नष्ट होगये हों एस मोक्षको विमल कहते हैं। जो विमल अर्थात् मोक्षके विभु अर्थात् स्वामी हों उनको विमलविभु कहते हैं। फिर जो भगवान् असौवे-द्रिमान हैं। स सुखको कहते हैं। सुखके अभावको अर्थात् दु:खोंको अस कहते हैं। दु:खके कारण आठों प्रकारके कर्म हैं इसलिये आठों प्रका-

अथ सुपार्श्वनाथस्तुतिः ।

श्रेयान्श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोथधर्मो-
हर्यंकः पुष्पदंतोमुनिसुव्रतजिनोनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः ।
शांतिः पद्मप्रभोरोविमलविभुरसौ वर्द्धमानोप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ।

टीका—श्रेयान्श्रीवासुपूज्यः । अवति संसारदुःखेभ्यो- निति अव रत्नत्रयम् । श्रेयमाश्रयणीयमव येषां ते श्रेयानः । ते च ते श्रीवामवः शक्रा इति श्रेयान्श्रीवामवस्तैः पूज्यः श्रेयान्- श्रीवासुपूज्यः । पुन वृषभजिनपति । वृषेण दशधा धर्मेण भांतीति वृषभास्ते च ते जिनाः चलादय. पंचोत्तरनवतिमितगण- धरास्तेषां पति वृषभजिनपति । पुनः श्रीद्रुमांक श्री. द्रुर- शोकतरुर्येषु तानि श्रीद्रूणि अष्टप्रातिहार्याणि तेषां मां शोभामंक- मंतिकं गच्छति श्रीद्रुमांकः । अथ अधधर्मोहर्यकः । न धीनि स्तोकानि धर्माणि जिनोक्तानि भवन्ति गच्छन्तीति अधधर्माः । उ गतौ । आदगुणः गोतो णित् वृद्धिः । एचोऽयवायाव । अधधर्मात्र प्रबलपुण्यभाजस्ते च ते हरय. इन्द्राः चन्द्रार्कादयो इति अधधर्मोहरय । तेऽङ्क यस्य सोधधर्मोहर्यक । अथवा अध- धर्मांश्च समवसरणमनय । हरिश्चन्द्र । अधधर्मांश्च हरिश्च अधधर्मो- हरय । तेऽङ्क यस्य सोधधर्मोहर्यक । अथवा अधधर्म पूर्णपुण्य- भाक् इयक हरिद्रुण पुन पुष्पदन्त निजकरशोभया जित पुष्पदन्ता दिग्गजा येन स पुष्पदन्त समुदायेषु प्रवृत्ता अवयवे- ष्वपि वर्तन्त पुन अमुनिसुव्रतजिन । अमुनिभिः गृहस्थैः धर्माकर्णनाय सुव्रता जिना यस्य सोऽमुनिसुव्रतजिनः । पुन अनन्तवाक । नास्त्यन्तो नाशो यस्य सोऽनन्तो मोक्ष । अनन्ताय कर्मनिवृत्तये वाग् यस्य सोऽनन्तवाक भवद्वाक्ययोक्ति विना मोक्षा- भाव । पुनः शांति । श अनन्तसुख अनति ब्नाति शान्ति ।

रके कर्मोके समुदायको अम कहते हैं। ओ का अर्थ पीड़ित करना निराकरण करना अथवा नाश करना है। जहांपर कर्मोका निराकरण वा नाश किया जाय ऐसे तेरहवें अथवा चौदहवें गुणस्थानको अमो कहते हैं। जो चौदहवें गुणस्थानमें समस्त कर्मोको नाशकर बढ़ते रहें उनको अमोवर्द्धमान कहते हैं। फिर जो भगवान् अप्यजांक हैं। पि का अर्थ भय है। जिनके पि अर्थात् भय न हो ऐसे निर्भय रहनेवाले स्याद्वादियोंको अपि कहते हैं। अथवा पि का अर्थ पीड़ित होकर रोनेके शब्द का है। जो पीड़ित होकर न रोवें, सबको जीतने वाले हों ऐसे स्याद्वादियोंको अपि कहते हैं। जो जन्ममरणसे रहित हों ऐसे गणधरों को अज कहते हैं। तथा अंक समीपको कहते हैं। जिनके समीपमें वा समवसरणमें स्याद्वादी और चारों ज्ञानको धारण करने वाले गणधर हों उनको अप्यजांक कहते हैं। फिर जो भगवान् मलि हैं। जो आत्माको विषयादिकोंमें लगादेवे ऐसे अज्ञानको मल कहते हैं। लिका अर्थ नाश है। अज्ञानरूपी मल जिनसे नाश हो उनका नाम मलि है। फिर जो भगवान् नेमि हैं। न का अर्थ मनुष्य है। ई का अर्थ नेत्रोंका भ्रम अथवा एकांत दृष्टि है। और मि का अर्थ दूर करना है। जो मनुष्योंकी एकान्त दृष्टिको दूर करें उनको नेमि कहते हैं। फिर जो भगवान नमि हैं। जो तीनों लोकों के इन्द्रोंसे नमस्कार करावें उनको नमि कहते हैं। भगवान् के चरण कमलोंको सब इन्द्र नमस्कार करते हैं इसलिये वे नमि हैं। फिर जो भगवान् सुमति हैं। जिनके उत्तम ज्ञान हो उनको सुमति कहते हैं। फिर जो भगवान सत्–अविनश्वर हैं। ऐसे श्रीपद्मप्रभ स्वामी छठे तीर्थंकर मुझ जगन्नाथपंडितको संसारके भयसे रक्षा करें।

इति पद्मप्रभजिनस्तुति।

अथ सुपार्श्वनाथस्तुतिः ।

श्रेयान्श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोथधर्मो-
हर्यंकः पुष्पदंतोमुनिसुव्रतजिनोनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः ।
शांतिः पद्मप्रभोरोविमलविभुरसौ वर्द्धमानोप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मा सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ।

टीका—श्रेयान्श्रीवासुपूज्यः । अत्रवि संमारदराज्ज्ञस्या-
निति अत्र रत्नत्रयम् । श्रेयमाश्रयणीयमत् येषां ते श्रेयानः । ते
च ते श्रीवासवः शक्रा इति श्रेयान्श्रीवासवस्तैः पूज्यः श्रेयान्-
श्रीवासुपूज्यः । पुनः वृषभजिनपतिः । वृषेण दशधा धर्मेण भांतीति
वृषभास्ते च ते जिनाः चतुर्दश पंचोत्तरनवतिमितगण-
धरास्तेषां पतिः वृषभजिनपतिः । पुनः श्रीद्रुमांकः श्री द्रु-
शोकतरुप्रमुखानि श्रीद्रूणि अष्टप्रातिहार्याणि तेषां मां शोभामंक-
यतीति गच्छति श्रीद्रुमांकः । पुनः अथधर्मोहर्यंकः । न थांनि
स्तोकानि धर्माणि जिनोक्तानि व्रतानि गच्छन्तीति अथधर्माः ।
उणादौ । आद्गुणः गोतो णित् वृद्धिः । एचोऽयवायावः ।
अथधर्मांवः प्रचुरपुण्यभाजस्ते च ते हरयः इन्द्राः चन्द्रार्कादा
इति अथधर्मोहरय । तेऽङ्के यस्य सोथधर्मोहर्यंकः । अथवा अथ-
धर्मांव ममरमरणमुनय । हरिश्चन्द्र । अथधर्मांश्च हरिश्च अथधर्मो-
हरय । तेऽङ्के यस्य सोथधर्मोहर्यंकः । अथवा अथधर्म पूर्णपुण्य-
भाक् । हर्यंकः हरिद्वर्णः । पुनः पुष्पदंतः निजकरशोभया जित
पुष्पदन्तौ दिग्गजौ येन स पुष्पदन्तः । समुद्रादेषु सकृपा अवतरे-
ष्वपि पतंते । पुनः अमुनिसुव्रतजिनः । अमुनिभिः सुव्रतैः
धर्मार्जननार्थं सुव्रता जिना यस्य सोऽमुनिसुव्रतजिनः ।
पुनः अनन्तवाक् । नास्त्यन्तो नाशो यस्य सोनन्तो बोधः । अनन्तात्
कर्मनिर्वृत्तये वाग् यस्य सोनन्तवाक् । भरतादयोऽपि विना बोधा-
भाव । पुनः शांतिः । स अनंतगुण अंतर्गत इन्द्रादि शान्ति ।

अति बंधने । भूयः पद्मप्रभः । पद्मैः सुररचितकनककमलैः प्रभाति गमनावसरे शोभते इति पद्मप्रभः । पुनः अरोविमलविभुः । " रः सर्पेऽग्नौ धने कामे " । न रः काम इति अरः शीलं । अथवा अरं अरतं ब्रह्मचर्यमित्यर्थः । नामैकदेशो नाम्नि । अर एव उः समुद्र इति अरोः शीलसागर इत्यर्थः । अरोवा शीलजलधिना विमला अत्यन्तनिर्मलास्तेषां विभुः अरोविमलविभुः। पुनः असौवर्द्धमानः । स्वमात्मस्वरूपं विदुरिति सौवाः । तदधीते इत्यण् । न स्वाम्या- मिरर्थम् । न सौवा असौवा अनात्मज्ञा तान् वर्द्धते भिनत्ति असौ इति असौवर्द्धमानः । अपिः संभावनायाम् । पुनः अजांकः अजं मोक्षं अंकतं गच्छति अजांकः । ' अकि गतौ ' । भूयः मल्लिः । मद्यति मत् ज्ञानावरणादिः तस्य लिनांशो यस्मादिति मल्लिः । पुनः नेमि । नानां ई कृत्मार्थः । नेः । तां मिनुते प्रक्षेपयति नेमि । मिथ्यादृष्टिनिराकर्ता । पुनः नमिः । नमति नम् नम्रः । नम्र ई कामो अस्मादिति नमिः । पुनः मांशुमतिः । माशब्देन प्रत्यक्षपरोक्षप्रमाणद्वयम् । म एव द्वयं इति माः प्रमाणद्वयं । अंशव [illegible] नवनया इति मांशव । तद्वन्मतिर्यस्य स मांशुमति । एवविशेषणविशिष्ट श्रीसुपार्श्वं श्रीसुपार्श्वनामा [illegible] पुन मम [illegible] । श्रीजगन्नाथ- [illegible] । श्रीजगन्नाथाय [illegible] श्रीजगन्नाथधीरम् । [illegible]

[illegible] महाराज श्रीनरेंद्रकीर्तिमुख- [illegible] जिनस्तुति. समाप्ता।

[illegible] स्तुति करते हैं ।

[illegible] श्रीसुपार्श्व [illegible] अमुनिसुव्रतजिन- [illegible] असौवर्द्धमान अपि [illegible] जगन्नाथधीर भवतु।

अर्थ—जो भगवान् श्री सुपार्श्वनाथ स्वामी श्रेयान्श्रीवासुपूज्य हैं। अन् धातुका अर्थ रक्षा करना है। जो संसारके भयसे भव्य जीवोंकी रक्षा करें ऐसे रत्नत्रयको अन् कहते हैं। आश्रय करने योग्य को श्रेय कहते हैं। और इंद्रोंको श्रीवासु कहते हैं। जो रत्नत्रयको अवश्य धारण करें ऐसे इंद्रोंको श्रेयान्श्रीवासु कहते हैं। श्रेयान्श्रीवासु अर्थात् इंद्रोंके द्वारा पूज्य हों उनको श्रेयान्श्रीवासुपूज्य कहते हैं। फिर जो भगवान् वृषभजिनपति हैं। वृष धर्मको कहते हैं, भ शोभाको कहते हैं। जो उत्तम क्षमा आदि दश प्रकारके धर्मसे शोभायमान हों उनको वृषभ कहते हैं। तथा जिन गणधरोंको कहते हैं। जो गणधर देव दश प्रकारके धर्मसे शोभायमान हों उनको वृषभजिन कहते हैं। जो ऐसे गणधरोंके स्वामी हों उनको वृषभजिनपति कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीद्रुमांक हैं। श्रीद्रु अशोकवृक्षको कहते हैं। जिनमें अशोक वृक्ष शामिल हो ऐसे आठों प्रातिहार्योंको भी श्रीद्रु कहते हैं। उनकी शोभाको जो प्राप्त हों उन्हें श्रीद्रुमांक कहते हैं। फिर जो भगवान् अधधर्मोदर्यक हैं। अ का अर्थ थोड़ा है और धर्मका अर्थ भगवान जिनेंद्र देवके कहे हुए वचन हैं। थोड़े धर्मको अधर्म कहते हैं तथा अ का अर्थ नहीं है। जो थोड़ा धर्म न हो, पूर्ण धर्म हो उसको अधधर्म कहते हैं। उ धातुका अर्थ गमन करना वा प्राप्त होना है। जो भगवान जिनेन्द्रदेवके कहे हुए पूर्ण धर्मको प्राप्त हों ऐसे अत्यंत पुण्यशाली जीवोंको अधधर्मा कहते हैं। [illegible] अर्थ इन्द्र चक्रवर्ती आदि है। अत्यंत पुण्यवान इन्द्र चक्रवर्ती अ [illegible] को अधधर्मो[illegible] कहते हैं। ऐसे अत्यंत पुण्यवान इन्द्र चक्रवर्ती आदि जिनके अक अर्थात् समीप में वा समवसरणमें हों उनको अधधर्मोदर्यक कहते हैं। हर्यक व अघधर्मका पाठ अलग भी रक्खा जा सकता है। जो पूर्ण पुण्यको प्राप्त हुए हों वे अघधर्म हैं और जिनके हर्यक्ष्की कांति हरित वर्णकी हो उनको हर्यक कहते हैं। भगवान सुपार्श्वनाथ स्वामीके शरीरका वर्ण भगवान् जि-
[illegible] हुए पूर्ण धर्मको प्राप्त [illegible] इन्द्र चक्रवर्ती आदि —

अत्यंत पुण्यशाली जीव भी थे तथा महा मुनिराज और चन्द्रादिक देव भी थे इसलिये वे अथधर्मोहर्यक कहे जाते हैं। अथवा वे पूर्ण पुण्यको प्राप्त हुए हैं इसलिये वे अथधर्म हैं और उनके शरीरकी कांति हरित वर्णकी थी इसलिये वे हर्यक कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् पुष्पदन्त हैं। पुष्पदन्त दिग्गजको कहते हैं। भगवान् सुपार्श्वनाथने अपनी भुजाओं की शोभासे दिग्गज हाथियोंकी भी सूड जीत ली है । इसलिये वे पुष्पदन्त कहे जाते हैं। यह न्याय है कि जो समुदायमें प्रवृत्त होता है वह अवयवमें भी प्रवृत्त होता है। इस हिसावसे वे अपनी भुजाओंकी शोभासे हाथीकी सूंडको जीतते हैं इसलिये वे हाथीको भी जीतने वाले कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् अमुनिमुव्रतजिन हैं। जो मुनि न हों उनको अमुनि कहते हैं। गृहस्थ मुनि नहीं हैं इसलिये गृहस्थों को अमुनि कहते हैं। सुव्रत शब्दका अर्थ घिरे रहना, चारों ओर रहना है। जिन गणधरोंको कहते हैं। जिनके गणधरदेव धर्म सुननेकेलिये गृहस्थोंसे सदा घिरे रहें उनको अमुनिमुव्रतजिन कहते हैं। फिर जो भगवान् अनंतवाक् हैं। जिसका कभी नाश न हो उसको अनंत कहते हैं। मोक्षका कभी नाश नहीं होता। जो जीव मुक्त हो जाता है वह सदा मुक्त ही रहता है। इसलिये मोक्ष अनंत है। जिनकी वाणी मोक्षका कारण हो उनको अनन्तवाक् कहते हैं। फिर जो भगवान शान्ति हैं। शं सुखको कहते हैं और अति धातुका अर्थ चाहना है। जो सुखको वांछा-प्राप्त करें उनको शान्ति कहते हैं। फिर जो भगवान पद्मप्रभ हैं। विहार करते समय भगवानके चरणकमलोंके नीचे जो सुवर्णमयी कमलों की रचना होती है उनके द्वारा जो सुशोभित हों उनको पद्मप्रभ कहते हैं। फिर जो भगवान अरोगिमस्तविभु हैं। रका अर्थ कामदेव है। रके अभावको भी कहते हैं ब्रह्मचर्यका पालन करनेसे कामका अभाव होता है इसलिये ब्रह्मचर्य अथवा शील उनको भी कहते हैं। अथवा रका अर्थ मन है। अर्थात् मन न होना ब्रह्मचर्यका पालन करना भी कहलाता है। ... का अर्थ स्पष्ट है जो भी अर्थात् शील-

का समुद्र हो उस शीलसागरको मरो कहते हैं। जो शीलसागरके द्वारा विमल अर्थात् निर्मल हों—ब्रह्मचर्य के पालन करनेसे जिनका आत्मा अत्यंत पवित्र हो उनको मरोविमल कहते हैं। जो मरोविमलके स्वामी हों उनको मरोविमलविभु कहते हैं। फिर जो भगवान् अमीवर्द्धमान हैं। जो अपने आत्माके स्वरूपको जानें उनको मीव कहते हैं। जो अपने आत्माके स्वरूपको न जानें ऐसे अज्ञानी वा मिथ्याज्ञानियोंको अमीव कहते हैं। ऋध धातु का अर्थ भेदन करना है। जो अज्ञानी वा मिथ्याज्ञानका नाश करे उनको अमीवर्द्धमान कहते हैं। अपि अर्थात् और जो भगवान् अजांक हैं। मोक्षमें जन्म मरणका सर्वथा अभाव है इसलिये मोक्षको अज कहते हैं। अंकका अर्थ प्राप्त होना है। जो मोक्षको प्राप्त हों उनको अजांक कहते हैं। फिर जो भगवान् मल्लि हैं। ज्ञानावरणादि कर्मोंको मल्ल कहते हैं। लिका अर्थ नाश है। जिनसे कर्मोंका नाश हो उनको मल्लि कहते हैं। फिर जो भगवान् नेमि हैं। न मनुष्यको कहते हैं। ईका अर्थ कुत्सित अथवा मिथ्यात्व है और मिका अर्थ दूर करना है। जो मनुष्योंके मिथ्यात्वको दूर करें उनको नेमि कहते हैं। फिर जो भगवान् नमि हैं। नमस्कार करने अथवा नम्र होनेको नम् कहते हैं। ईका अर्थ इच्छा है। जिनके सामने होते ही नमस्कार करनेकी इच्छा हो उनको नमि कहते हैं। फिर जो भगवान् मासुव्रति हैं। मा ज्ञानको कहते हैं। तथा असु किरणोंको कहते हैं। प्रमाणको किरणें नय हैं। मति बुद्धि अथवा ज्ञानको कहते हैं। जिनका ज्ञान प्रत्यक्ष परोक्ष दोनों प्रमाणरूप है तथा समस्त नयरूप है उनको मासुव्रति कहते हैं। सुव्रत यद्यपि दन्त्य सकार है और असु शब्दमें तालव्य शकार है तथापि व्याकरणमें सकार शकारका भेद नहीं माना जाता है। [illegible] अर्थात् सदा शुद्ध रहनेवाले हैं, नित्य हैं। ऐसे श्री [illegible] स्वामी स्वस्तिकके चिन्हको धारण करनेवाले सबके [illegible] आम्नायका इस संसारके भयसे रक्षा करें।

इस प्रकार श्रीसुपार्श्वनाथ भगवानकी स्तुति समाप्त हुई।

अथ चन्द्रप्रभस्तुतिः ।

श्रेयान्श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमाङ्कोऽथधर्मो-
हर्यङ्कः पुष्पदन्तोमुनिसुव्रतजिनोऽनन्तवाक् श्रीसुपार्श्वः ।
शान्तिः पद्मप्रभोऽरोविमलविभुरसौवर्द्धमानोऽप्यजाङ्को,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ।

टीका—हर्यङ्क हरिः सिंहोऽङ्को यस्य स हर्यङ्कः चन्द्राङ्कः ।
उक्तं च—" हरिर्मृगेन्द्रः शशिलाञ्छनो जिनः " । श्रीचन्द्रप्रभः अष्टमतीर्थराट् । श्रीजगन्नाथधीरमित्यादिति मेषः । श्रीजगति त्रिभुवनानि नाथा राजादय धीरा जिनमतपण्डिताः । श्रीजगन्ति च नाथाश्च धीराश्च श्रीजगन्नाथधीरम् । समाहारोऽत्रप्रयोगः । कर्मतापन्नं । अथवा श्रीजगन्नाथा इन्द्रादयः । धीरा महामुनीश्वराः । श्रीजगन्नाथाश्च धीराश्च श्रीजगन्नाथधीरं । अथवा श्रीजगन्नाथधीरं जगन्नाथनामानं पण्डितं अवतात् निश्चयेन रक्षतु । किंविशेषणविशिष्टः श्रेयान् नितरां प्रशस्यः । पुनः श्रीवासुपूज्य । स तु सर्वेभ्यः परं तेन महाभक्तिकारि । स्तुतिश्च विहिता । " चन्द्रप्रभेति नामेदमस्यास्तु हरिर्व्यधात् " इत्युक्तं महापुराणोत्तरखण्डे । तत्तन्नामात्र न्याय्यं पूर्वग्रन्थानुसारित्वात् । पुनः वृषभजिनपतिः । वृषभा श्रेष्ठाश्च ते जिनदत्ताद्यास्तिन्वर्तिमिनगणधराः तेषां पतिः वृषभजिनपतिः । भूयः श्रीद्रुमाङ्कः श्रीद्रुमाकान्ति यत्र तानि श्रीद्रूणि अष्टप्रातिहार्याणि । तेषां मा लक्ष्मी रतिः श्च द्रुमा सा अङ्के समीपे यस्य स श्रीद्रुमाङ्कः । महापुराणेऽप्यस्य प्रातिहार्यवर्णनम् । भूयः अथधर्मः । थ मिथ्यावाचकश्चासौ धर्मः थधर्मः । थो मिथ्यावाचके ख्याते । न थधर्मो यस्य सोऽथधर्मः सम्यग्धर्म इत्यर्थः । पुनः पुष्पदन्त उज्ज्वलवर्णत्वात्पुष्पाणीव दन्ता यस्य स पुष्पदन्तः । संख्यासु पूर्वत्वाभावात् वयसि दन्तस्य दतृ इति सूत्रेण दत्रादेशो न स्यात् । पुनः मुनिसुव्रतजिनः । मुनिभिः स्वतस्वामिसमीत्रिविध उपादीयन

इति मुनिसुव्रत अहिंसादि । वृञ् वरणे । क्विप् प्रत्ययः । ऋदुशन-स्पुरुदंसोऽनेहसां चेत्यनङ् । अलोन्त्यात्पूर्व उपधा । सर्वनामस्थाने चासंबुद्धौ इति दीर्घः । अपृक्त एकालप्रत्ययः, हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् इति सुलोपः । मुनिसुव्रता अहिंसादिना तपश्चरणेन तः तस्करः जिनः मन्मथः अस्मादिति मुनिसुव्रतजिनः । तस्करस्य पलायनत्वमेव । वीतरागो जिनः प्रोक्तो जिनो नारायणस्तथा । कंदर्पः स्याज्जिनश्चैव जिनः सामान्यकेवली । पुनः अनन्तवाक् । रत्नत्रयं विना जीवेभ्योऽनन्तं संसारं वक्ति अनन्तवाक् । भो जीवाः भवद्भी रत्नत्रयमुपादेयमिति वक्ति अन्यथा अनन्तसंसारः । सुहृः श्रीसुपार्श्वः । श्रीसुपार्श्वे इव श्रीसुपार्श्वः । शरीरकान्त्या-मिश्रः । समवसरणादिभिर्वा तादृगेव, तदनंतरं धर्मप्रवर्तकत्वात् । सुहृः शान्तिः निजदेहोज्ज्वलकान्त्यामृतेन जनकष्टं शान्तयति शान्तिः । तदुक्तं चन्द्रप्रभकाव्ये " स पातु यस्य स्फटिकोपलप्रभे प्रभावितानं विनिमग्नमूर्तिभिः । विदिद्युते दुग्धपयोधिमध्यगैरिवा सर्वे शशिलाञ्छनो जिनः " । पुनः पद्मप्रभः । सितेत्यध्या-हार्यम् । सितपद्मवत्प्रभा यस्य स पद्मप्रभः । पुनः अरविमलविभुः । अरं शीघ्रं अरन्ति गच्छन्ति इति अराः ऋ गतौ । महायतयः । ते विमलाः स्तुत्याः येषां ते अरविमलाः शीलमुक्तिग्रन्थमुनिभक्ता नराः । तेषां विभुः अरविमलविभुः । पुनः असीवर्द्धमानः । स्व-मात्मानं विदन्तीति सीवाः । जैनागमोद्भवपरमात्मतत्त्वयः । तद्-धीते तद्वेदेत्यण न स्वात्मभ्या इत्यर्थः । न सीवा असीवाः अनात्मज्ञाः पापिनो मीमांसकादयः । ' अप्पाणमयाणंता मूढा द् परत्वादिनो केई इति गाथासुकथितलक्षणास्तान् दृष्टान् ऋधते छेदयति असीवर्द्धमानः । ऋधन् छिनत्ति वा असीवर्द्धमानः । ऋधु हिंसायां । लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे इति शानच् । लशक्वतद्धिते इति श इत् । ततः कर्तरि शप् इति शप् । ततः आने मुक् इति मुक् च । सिद्धं असीवर्द्धमान इति । ग्रन्थान्तरेऽपि " स्व

पञ्चशीस्थित्यमदावलिप्ता वाक्सिंहनादैर्विमदा बभूवुः । प्रवादि
यस्य मदार्द्रगण्डा गजा यथा केशरिणो निनादैः " इति सत्यं
वादिखण्डनम् । पुनः अप्पजांकः । अपयः असोदराः अन्योन
पिण । ते च ते अज्ञा अज्ञादय इति वक्तव्यम् अप्पजा मार्जारा
र्सीरुरकण्ठीरवमृगादय एकीभावं गताः सन्तोऽङ्के क्रोडे यस्य सो
जांकः । तदुक्तम् । " सारंगी सिंहशावं स्पृशति सुतधिया नन्दि
व्याघ्रपोतं मार्जारी हंसबालं प्रणयपरवशात् केकिकान्ता
भुजम् । वैराण्याजन्मजातान्यपि गलितमदा जन्तवोऽन्ये त्यज
श्रित्वा शाम्यैकरूढं प्रशमितकलुषं योगिनं क्षीणमोहम् । " इत्या
पुनः मल्लिः । मल् परवस्तुनि ममत्वं पुत्रमित्रकलत्रादिमोह
नस्य लिर्नाशो जनेषु यस्मादिति मल्लिः । पुनः नेमिः नी
प्राप्यन्ते सुरनरोरगेन्द्रादिविभूति प्राणिनो धर्मस्य येनासौ नेमि
पुनः नमिः । न मन्ति यियः हिंसादयो यस्मादिति नमिः ।
मांशुमतिः । " मायावितिं कृपामत्रं माण्यंशनिशानयोः " ।
मायाविन न एव मा अमय इति मा । अतः सवर्णे दीर्घ
मानां तेषां नेत्राशानये अंशुः मूर्यविम इति मांशु । '
स्पतित्र क्रग ' [illegible] अभिविशेषणन्याणिनां अप्रनवमान
प्युक्ता । यथा मनि मूर्य [illegible] निष्प्रचार । मांशुमतिर्यस्य
मांशुमतिः । पुन मन प्रशम्न

[illegible]

[illegible]

— —

[illegible] है ।

[illegible] धांशुमी
[illegible] धांशुसार्थ श्रा
[illegible] मल्लिः नै
[illegible] यतम् ।

अर्थ—जो चन्द्रप्रभ भगवान् श्रेयान् अर्थात् अत्यन्त प्रशंसनीय हैं।
फिर जो भगवान् श्रीवासुपूज्य हैं। श्रीवासु ऐशान इन्द्रको कहते हैं।
शान इन्द्रने श्रीचन्द्रप्रभ स्वामीकी बहुत ही भक्ति की थी तथा
" चन्द्रप्रभेति नामेदमपरीक्ष्य हरिर्व्यधात् " अर्थात् इन्द्रने भगवान्का
न्द्रप्रभ यह नाम विना किसी परीक्षा किये ही रक्खा था। इसप्रकार
न्द्रने चन्द्रप्रभकी बहुत कुछ स्तुति की ऐसा महापुराणके उत्तर खंडमें
पष्ट लिखा हुआ है। फिर जो भगवान् वृषभजिनपति हैं। वृषभ श्रेष्ठ
ो कहते हैं। जिन गणधरोंको कहते हैं और पति स्वामीको कहते
। जो श्रेष्ठ गणधरोंके स्वामी हों उनको वृषभजिनपति कहते हैं।
फिर जो भगवान् श्रीद्रुमांक हैं। श्रीद्रु अशोकवृक्षको कहते हैं।
जनमें अशोक वृक्ष भी शामिल हो ऐसे आठों
तिहार्योंको भी श्रीद्रु कहते हैं। मा का अर्थ लक्ष्मी या
ोभा है। आठों प्रातिहार्योंकी शोभाको श्रीद्रुमा कहते हैं। जिनके
मवसरणमें आठों प्रातिहार्योंकी शोभा हो उनको श्रीद्रुमांक कहते
। फिर जो भगवान् अथधर्म हैं। थका अर्थ मिथ्या है। मिथ्या ध-
को थधर्म कहते हैं। जिनका धर्म मिथ्या न हो यथार्थ हो उनको
यधर्म कहते है। फिर जो भगवान् पुष्पदन्त हैं। पुष्प फूलोंको कहते
और दन्तका अर्थ दांत हैं। जिनके दांत पुष्पोंके समान उज्वल
र्णके हों उनको पुष्पदन्त कहते हैं। फिर जो भगवान् मुनिसुव्रतजिन
। वृ धातुका वरण वा स्वीकार करना अर्थ है। जो मुनियोंके द्वारा
वीकार किया जाय ऐसे अहिंसा महाव्रत आदि तपश्चरणको मुनिसुव्रत
हते हैं। त का अर्थ तस्कर है और जिन कामदेवको कहते हैं।
" वीतरागो जिन प्रोक्तो जिनो नारायणस्तथा। कंदर्पः स्याज्जिनश्चैव
जिनः सामान्यकेवली "। अर्थात् वीतराग परम देव श्री तीर्थंकर भग-
ान्को जिन कहते हैं। नारायणको जिन कहते हैं। कामदेव को
जिन कहते हैं। और *सामान्यकेवलीको* भी जिन कहते हैं।
जिनके प्रभावसे मुनियोंके द्वारा ग्रहण करने योग्य अहिंसादि

साधारनके द्वारा जिन अर्थात् कामदेव त अर्थात् त
हो जाय चोरकी तरह भाग जाय उनको मुनिसुव्रतजिन क
हैं। फिर जो भगवान् अनन्तवाक् हैं। अनन्तका अर्थ संसार
और वाक्का अर्थ वाणी है। जो रत्नत्रयके बिना जीवोंको अनंत सं
का उपदेश दें उनको अनंतवाक् कहते हैं। भगवान् चन्द्रप्रभने
जीवोंको उपदेश दिया था कि हे भव्य जीवो तुम्हारे लिये रत्नत्रय
ग्रहण करने योग्य है। यदि तुम लोग रत्नत्रयको ग्रहण न करोगे तो
अनंत संसारमें परिभ्रमण करना पड़ेगा। फिर जो भगवान् श्रीसुपार्श्व
जो श्रीसुपार्श्व तीर्थंकरके समान हों उनको श्रीसुपार्श्व कहते हैं। श्री
प्रभ भगवानने श्रीसुपार्श्वनाथके बाद उनके ही समान धर्मकी प्रवृत्ति
इसलिए वे भी श्रीसुपार्श्व हैं। अथवा समवसरणादि विभूतिके
वे श्रीसुपार्श्वनाथके समान थे इसलिए भी वे श्रीसुपार्श्व हैं। अ
उनके शरीरकी कांति श्रीसुपार्श्वनाथसे भिन्न होकर भी उनके ही स
सुंदर थी इसलिये वे श्रीसुपार्श्व कहे जाते हैं। फिर जो भगवान
न्ति हैं। जो अपने शरीरकी निर्मल कांतिरूपी अमृ
लोगोंके कष्टोंको शांत करें दूर करें उनको शान्ति कहते हैं। श्री
धन काव्यमें लिखा भी है कि भगवान चन्द्रप्रभके शरीरकी कांतिरू
[illegible]

मुनियोंकी स्तुति करें ऐसे निर्ग्रंथ मुनियोंके परम भक्त हों ऐसे सम्यग्दृष्टी श्रावकोंको आर्यविमल कहते हैं । ऐसे भक्तोंके जो स्वामी हों उनको आर्यवर्यविभु कहते हैं । फिर जो भगवान् असौवर्द्धमान हैं । सौ आत्माको कहते हैं, वा जाननेको कहते हैं । जो सौ अर्थात् आत्माके स्वरूपको वा अर्थात् जानें सर्वज्ञ वीतराग प्रणीत आगममें कहे हुए परमात्माके स्वरूपमें जो प्रेम करें उनको सौवा कहते हैं । जो आत्माके स्वरूपको न जानें, सर्वज्ञ वीतराग के कहे हुए वचनोंमें विश्वास न करें ऐसे मीमांसक आदि मिथ्यादृष्टि-योंको असौवा कहते हैं । तथा ऋध धातुका अर्थ छेदन करना है । जो ऐसे दुष्ट असौवोंको छेदन करें उनकी अज्ञानताको दूर करें उनको असौवर्धमान कहते हैं । अन्य शास्त्रोंमें लिखा भी है— "स्याद्वादपौरुषि-महावलिना वाक्सिंहनादैर्विमदा बभूवुः । प्रवादिनो यस्य मदार्द्रगण्डा गजा यथा केशरिणो निनादैः" । अर्थात् जिसप्रकार, जिनके गंडस्थल बहते हुए मदसे गीले हो रहे हैं ऐसे मदोन्मत्त हाथी सिंहकी गर्जना सुनते ही मदरहित हो जाते हैं उसी प्रकार अपने पक्षकी रक्षा करने रूप मदसे जो मदोन्मत्त हो रहे हैं ऐसे अनेक प्रतिवादी लोग भगवान् वर्द्धमान की सिंहकी गर्जनाके समान होनेवाली दिव्यध्वनि को सुनकर मदरहित होगये थे । ऐसे वर्द्धमान भगवानको मैं नमस्कार करता हूं । फिर जो भगवान् अपश्चांक हैं । अपि शब्दका अर्थ है परस्पर द्वेष करने वाले । अश शब्दका अर्थ है बकरी सिंह चूहा बिल्ली सर्प न्योला आदि । परस्पर स्वभावसे ही वैर रखनेवाले जीवोंको अपश्च कहते हैं । जिनके समीपमें ऐसे विरोधी जीवभी हों उनको अपश्चांक कहते हैं । लिखा भी है । "सारंगी सिंहशावं स्पृशति सुतधिया नन्दिनी व्याघ्रपोतं मार्जारी हंसबालं प्रणयपरवशात् केकिकान्ता भुजंगम् । वैराण्याजन्मजातान्यपि गलितमदा जन्तवोऽन्ये त्यजन्ति श्रित्वा साम्यैकरूढं प्रशमितकलुषं योगिनं क्षीणमोहम् । अर्थात्

अथ पुष्पदन्तस्तुतिः ।

श्रेयान् श्रीवासुपूज्योवृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोथधर्मो,
हर्यंकः पुष्पदंतो मुनिसुव्रतजिनोनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः ।
शांतिः पद्मप्रभोरेविमलविभुरसौ वर्द्धमानोप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मा सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ।

टीका—अथ चन्द्रप्रभस्तुत्यनन्तरं असौ पुष्पदन्तः पुष्पदन्तनामा नवमतीर्थंकरः अपरनामा सुविधिः मां श्रीजगन्नाथधीरं अवतादिति संबन्धः । किंलक्षणः श्रेयान् महापुरुषः । भूयः श्रीवासुपूज्यः श्रीर्लक्ष्मीस्तस्याः ईः मोहः इति श्री. सैव वः समुद्र इति श्रीवः । "वो दन्तोष्ठ्यस्तथोष्ठ्यापि वरुणे वारणे वरे । शोषणे पवने गंधे वासे वृंदे च वारिधौ" इति । श्रीवस्य असु क्षेपणं इति श्रीवासू । श्रीवासू उ वितर्कौ येषां ते श्रीवासवः । धनमोहाब्धिस्त्याज्य इति मुवाणा आत्मशास्ते. पूज्यः श्रीवासुपूज्यः । पुन वृषभजिनपतिः । वृषभजिनपस्य इव नाभेयस्य इव तिः पूजा यस्य स वृषभजिनपतिः । पुन श्रीद्रु।श्रियं मुक्त्यङ्गनामपति प्राप्नोति श्रीद्रु । द्रु गतौ क्विप् । ह्रस्वस्य पिति कृति तुगिति तुक् । पुन द्रुमांकः । द्रु भये क्लीवे । द्रुम भयस्य मा निवारणं अंके यस्य स द्रुमांकः पुन धर्मोहर्यंकः । धर्मस्य धर्मेण वा उ । उ अत्र । सागरः इति धर्मोव । ते च त हरयः इन्द्राधास्तेऽङ्के यस्य स धर्मो हर्यंकः । अथवा किरिजिरः अथधर्मः तीर्थकृन्नामभाक् । पुन हर्यंकः । शुक्लकान्त्या हयंकः इव हर्यंकः । चन्द्रप्रभसदृश इत्यर्थः । पुन. मुनिसुव्रतजिनः । मुनिभिः सुव्रता सुसेविता निजभवसदन्यार्कणनाथ जिना विदर्भाद्योष्टाशीतिगणधरा यस्य स मुनिसुव्रतजिनः । पुन. अनन्तवाक्श्रीसुपार्श्वः । अनन्तवाचा जीवादिपदार्थानां श्रियः सुपार्श्वे समीपे यस्य सानन्तवाक् श्रीसुपार्श्वः । पुनः शान्तिः स्वशरीरोद्गतोज्ज्वलकान्तिरादिमजिर्जी

श्रीवान् अर्थात् लक्ष्मीके मोहका त्याग करनेके लिये जिनके हृदयमें उ अर्थात् विचार है अथवा जो उसके त्याग करनेका उपदेश देते हैं ऐसे आत्माके स्वरूपको जाननेवालोंको श्रीवासु कहते हैं। जो श्रीवासुके द्वारा पूज्य हों उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं। फिर जो भगवान् वृषभजिनपति हैं। महाराजा नाभिरायके पुत्र प्रथम तीर्थंकर भगवान् ऋषभदेवको वृषभजिनपति कहते हैं अथवा वृषभ वृषभदेवको कहते हैं और जिनप तीर्थंकरको कहते हैं। ति शब्दका अर्थ पूजा है। जिनकी पूजा भगवान् वृषभदेवके समान हो उनको वृषभजिनपति कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीत् हैं। श्री मोक्षलक्ष्मीको कहते हैं और इत् प्राप्त होनेको कहते हैं। जो मोक्ष लक्ष्मीको प्राप्त हों उनको श्रीत् कहते हैं। फिर जो भगवान् रमाक हैं। र भयको कहते हैं और निवारण करनेको कहते हैं। जिनके समीपमें भयका निवारण हो उनको रमाक कहते हैं। फिर जो भगवान् धर्मोर्धिक हैं। धर्म दश धर्मोंको कहते हैं और उ समुद्र को कहते हैं। जो धर्मके समुद्र हों उनको धर्मो कहते हैं। इन्द्रादि हरि हैं। जिनके समीप धर्मके समुद्र ऐसे इन्द्रादिक हों उनको धर्मोर्धिक कहते हैं। अथवा [illegible] भगवान् [illegible] अर्थात् तीर्थंकर पदको धारण करने वाले हैं और [illegible] करनेको धारण करने [illegible] हैं। शुभ सेवा [illegible] कहते हैं। इनके [illegible] सेवा [illegible] स्वार्थक [illegible] [illegible] हैं। [illegible] हैं। [illegible] हैं और [illegible] मस्तक [illegible] लोभ हो उनको [illegible] कहते हैं। फिर जो [illegible]

स्याद्विश्रमग्नः। पुनः अहर्यंकः। हरिणा यमेन अंक्यते लः
इति हर्यंकः। न हर्यंकः अहर्यंकः। अन्तकान्तक इत्यर्थः। मु
अमुनिसुव्रतजिनः। "दीर्घह्रस्वौ मुमूशब्दौ बन्धनार्थे त्रिलि
ङ्गिकौ"। नास्ति मुर्बन्धनं येषां ते अमवः कर्मबन्धरहिता मुनयः
अमुमिर्नि निभृतं सुव्रता जिना अनगारादय एकार्थ निरूपणा द
सोऽमुनिसुव्रतजिनः। 'निवेशे भूशायां श्रये दाग्द मोक्षे मात्रनिन्दा
सक्तौ शल्यमोक्षे। समीपे स्मृतौ बन्धने गात्रिद्दृष्टे सुधर्मश्यमावे विग
निरेषु"। पुनः अनंतवाक् अनंताय मोक्षाय वक्ति धर्ममित्यनन्तवाक्
पुनः श्रीसुपार्श्वः श्री सुपार्श्वे यस्य स श्रीसुपार्श्वः। पुनः शान्तिः
सरस्वती अन्तौ अन्तिके यस्य स शान्तिः। नामैकदेशो नाम्नि
अन्तिशब्देनान्तिकोपादानम्। पुनः पद्मप्रभः सुवर्णवर्णः।
अरः। नास्ति रो धनं यस्य सोऽरः निर्ग्रंथः। पुनः अविमलवि
विशेषेण मनोवाक्काययोगेन मलं पापं येषां ते विमलाः। न विमल
अविमलास्तेषां विभुरविमलविभुः। पुनः वर्द्धमानः। यं विशि
अरं धर्मं दधाति वर्द्धः "ऋशब्दः पावके सूर्ये धर्मे दाने ध
पुमान्" आ अरौ अरः एतानि। 'अरं चारौ ऋक्षराशिः
अ ह्रुगः, उरण् रपरः। वर्द्धं मानं यस्य स वर्द्धमानः। पुनः अज्ञांकः
अज्ञैः सुदृष्टिभिरक्यते इति अज्ञांकः। सत्पुरुषगम्य इत्यर्थः। अ
समुच्चये। पुनः मल्लिः। मल्लते पुण्यं ढकात् समवसरणादिकं
मर्त्ति मल्लिः। पुनः नेमिः। ईः मोहः न याति गच्छति ईमिः
ईमि नेमिः। मोहारिरित्यर्थः। नञ्प्रनिरूपकाय नकारः। पुनः न
नास्ति मिः परिमाणं यस्य नमिः अनन्तफलत्वादपरिमितः। पुनः म
शुमतिः मांशुमेषु समागमेयेषु तिः पूजा यस्य स मांशुमतिः।
मन नाशरहितः। पुनः नाथधीः नाथैरर्हद्भिः ध्यायते इ
नाथधीः। कथं अं अर्गीकृत्य।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुतावकाक्षरप्रकाशिकाया विद्वज्जनग्राह्यकृतायां

श्रीशीतलनाथजिनस्तुति।

उनको अद्वयैक कहते हैं। फिर जो भगवान् पुष्पदन्त हैं। जो अपनी भुजाओंसे दिग्गजोंकी सूंड को जीतें उनको पुष्पदंत कहते हैं। अथवा पुष्पत् शब्दका अर्थ विकसित होना है। और अंतशब्दका अर्थ धर्म है। जिनका धर्म सदा विकसित होता रहै उनको पुष्पदंत कहते हैं। फिर जो भगवान् अमुनिसुव्रतजिन हैं। मुञ्च अर्थ बंधन है। जिनके कर्मोंका बंधन न हो ऐसे मुनियों को अमु कहते हैं। नि का अर्थ भूश वा अत्यंत है। सुव्रतका अर्थ घिरे रहना वा साथ रहना है। और जिन शब्दका अर्थ गणधर मुनि है। जिनके समवसरणमें गणधरदेव कर्म-बंधनोंसे रहित ऐसे अनेक मुनियोंके साथ विराजमान हों उनको अमुनि-सुव्रतजिन कहते हैं। श्रीनीलनाथके अनगार आदि इक्यासी गणधर थे। फिर जो भगवान् अनन्तवाक् हैं। जिनकी वाणी अनन्त अर्थात् मोक्ष के लिये हो उनको अनन्तवाक् कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीसुपार्श्व हैं। जिनके समीपमें लक्ष्मी वा शोभा हो उनको श्रीसुपार्श्व कहते हैं। फिर जो भगवान् शांति हैं। शा शब्दका अर्थ सरस्वती है और अन्ति शब्दका अर्थ अन्तिक वा समीप है। जिनके समीप सरस्वती देवी हो उनको शान्ति कहते हैं। फिर जो भगवान् पद्मप्रभ हैं। जिसमें लक्ष्मी प्राप्त हो ऐसे सुवर्णको पद्म कहते हैं। जिनके शरीरकी प्रभा सुवर्णके समान हो उनको पद्मप्रभ कहते हैं। फिर जो भगवान् अर हैं। र का अर्थ धन है। जिनके पास धन न हो उनको अर कहते हैं फिर जो भगवान् अविमलविभु हैं। जिनके मन वचन काय तीनों योगोंसे खूब पाप आते हों उनको विमल कहते हैं। तथा जिनके पापकर्म न आते हों ऐसे मुनियोंको अविमल कहते हैं और उनके स्वामीको अविमलविभु कहते हैं। फिर जो भगवान् वर्द्धमान हैं। व का अर्थ विशिष्ट वा अधिक है ऋ का अर्थ धर्म है। ऋ शब्दमें अर बन जाता है। धा धातुका अर्थ धारण करना है। जो व अर्थात् अधिक, ऋ अर्थात् धर्मको ध अर्थात् धारण करे उनको वर्द्ध कहते हैं। जिनका मान अर्थात् ज्ञान सबसे अधिक धर्म को धारण करनेवाला हो उनको वर्द्धमान कहते हैं। फिर

जो भगवान् अजांक हैं। अज शब्दका अर्थ जन्ममरण रहित सम्यग्दृष्टी है और अंक शब्दका अर्थ प्राप्त होना वा जानना है। जो जन्ममरणरहित सम्यग्दृष्टियोंके द्वारा जाने जांय उनको अजांक कहते हैं। तथा जो भगवान् मल्लि हैं। मल्ल धातुका अर्थ धारण करना है। जो अपने असीम पुण्य कर्म के उदयसे समवसरणकी महा विभूतिको धारण करें उनको मल्लि कहते हैं। फिर जो भगवान् नेमि हैं। इ का अर्थ मोह है और मिका अर्थ प्राप्त होना है। जो मोहको प्राप्त न हों—मोहका नाश करनेवाले हों उनको नेमि कहते हैं। फिर जो भगवान् नमि हैं। न का अर्थ नहीं है और मिका अर्थ परिमाण है। जो अनन्तबलशाली होनेके कारण परिमाण रहित हैं इसलिये वे नमि कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् भानुमति हैं। जिनकी पूजा प्रमाणरूपी सूर्यसे हो उनको भानुमति कहते हैं। फिर जो भगवान् सत् अर्थात् सत्तासहित हैं। तथा नाथधी हैं। नाथ महापुरुषोंको कहते हैं। और धि धातुका अर्थ ध्यान करना है। जो महापुरुषोंके द्वारा ध्यान किये जांय उनको नाथधी कहते हैं। ऐसे वे श्रीद्रुमांक। जिनके लांछनमें श्रीद्रुम अर्थात् कल्पवृक्षका चिन्ह है ऐसे श्रीशीतलनाथ भगवान् दसवें तीर्थंकर इस जगत अर्थात् तीनों लोकोंको अव अर्थात् स्वीकार कर इस संसारके भयसे रक्षा करें।

इति श्रीशीतलनाथस्तुति।

——S=S——

शोरमात्रयो: "। शं सुखं शा लक्ष्मीरां अन्तौ अन्तिके यस्य शान्तिः। भूयः अरः अर्यते ज्ञानेन गम्यते सद्भिरित्यरः । पुन विमलविभुर्सौवर्द्धमान. । विमलानां विभुः विमलविभुः । विमल श्चासौ विभुश्च विमलविभुः निर्मलस्वामी । रसः वीर्यम् । अर्थवशाद नन्तवीर्यमित्यर्थः। " शृंगारादौ विषे वीर्ये गुणे रागे द्रवे रसः इत्यमरः । रस एव उः समुद्र इति रसोः। अनन्तवीर्यसमुद्रः तेन वर्द्धते असौ वर्द्धमान । विमलविभुश्चासौ रसौ वर्द्धमानश्च विमलविभुरसौवर्द्धमानः । पुनः अजांकः । अजेभ्यः शुद्धनिश्चयनं जीवेभ्यः अंकयति कथयति अजांकः । पुनः मल्लि । मदयति मः गर्वः । मिथ्यादृष्टीनामिति वक्तव्यम् । मदः लिनांशो यस्मादिति मल्लिः । मानस्तंभेक्षणमात्रमाननाशात । पुनः नेमिः । नयन्त्यात्म स्वरूपं जीवं अस्मादिति नेमि । पुन नमिः हिंसारहितत्वाज्जिग स्त्राता । पुन सुमति. सुमा अष्टद्रव्यमिता ति पूजा यस्य स सुमतिः पुनः सन् श्रेष्ठः ।

इति श्री चतुर्विंशतिजिनस्तुत्येकाक्षरप्रकाशिकायां भट्टारकश्रीनरेंद्रकीर्तिसुरत-शिष्य-पण्डितजगन्नाथकृतायां एकादशमजिनभेयन स्तुतिः ।

अब आगे श्री श्रेयांसनाथ ग्यारहवें तीर्थंकरकी स्तुति करते हैं।

अन्वयः श्रीवासुपूज्यः वृषभजिनपति श्रीद्रुमाकाथधर्म श्री द्रुमांकः अपधर्मः हर्यंक पुष्पदन्त मनिसुव्रतजिन अनन्तशाकश्रीसु पार्श्व शान्ति पद्मप्रभ अर विमलविभुरसौवर्द्धमान अजांक. मल्लि नेमिः नमि सुमति सन श्रेयान् अपि मा श्रीजगन्नाथधीर अवतु।

अर्थ— जो श्री श्रेयांसनाथ भगवान श्रीवासुपूज्य हैं जो देवोंके अधिपति की शोभाको धारण करते हों ऐसे इन्द्रके द्वारा जो पूज्य हों उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं । फिर जो भगवान वृषभजिनपति हैं । जिस प्रकार नक्षत्रोंमें चन्द्रमा शोभायमान होता है उसी प्रकार जो वृष अर्थात् धर्मात्मा मुनियोंमें भ अर्थात् शोभायमान हों उनको नम कहते हैं। जो अनेक मुनियोंमें शोभायमान ऐसे [illegible] उनको वृषभ

अथ श्री श्रेयांसनाथस्तुतिः ।

श्रेयान् श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोथधर्मो,
हर्यंकः पुष्पदंतोमुनिसुव्रतजिनोनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः ।
शांतिः पद्मप्रभोरो विमलविभुरसौवर्द्धमानोप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मा सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ।

टीका—श्रेयानपि एकादशतीर्थंकरोपि मां श्रीजगन्नाथधीर मवतादिति योज्यम् । किंलक्षण. ? श्रीवासुपूज्यः श्रियं देवाधिपति-स्वशोभामयति गच्छति श्री. । श्रीश्चासौ वासु. इन्द्रः श्रीवासुः । तेन पूज्यः श्रीवासुपूज्य. । पुनः वृषभजिनपतिः । वृषेषु धर्मेषु भाः नक्षत्रचन्द्रतुल्या उज्ज्वलत्वादिति वृषभास्ते च ते जिनाः कुंथ्वादयः सप्ताचत्तरसप्ततिमिता गणपतयस्तेषां पतिर्वृषभजिनपति. । पुनः श्रीद्रुमांकोथधर्म्मः । श्रीद्रुमांकः श्रुतस्कंधवनम् । उक्तंच " श्रुतस्कंधवने विहारिणीम् " । ध. गम्भीरश्चासौ धर्मः थधर्मः । उवत् समुद्रवत थधर्मः उथधर्मः । श्रीद्रुमांके उथधर्मो यस्य स श्रीद्रुमांकोथधर्मः । " अर्हद्वक्त्रप्रसूतं गणधररचित द्वादशांगम् " इत्यादि । अथवा श्रीद्रुमांकः श्रीद्रुमांक इव श्रीद्रुमांक शीतलनिभस्तदनंतरत्वात अथधर्मः तीर्थंकरप्रदेशः । पुनः हर्यंकः । भव्यमनांसि हरति हरिः । समव-सृत्यादि हरिरंक यस्य स हर्यंकः । अथवा हरयस्त्रिपृष्टविजया-श्वग्रीवा अंक तार्थे यस्य स हर्यंक । पुनः पुष्पदन्त. । पुष्यन्ति र-त्नत्रय पुष्पन्त जना तेषां अन्ताः समूहा यस्मादिति पुष्पदन्तः । एतद्दर्शनेन जना भवेयुरिति । अन्तशब्द समूहे । तदुक्तं द्विसंधाने " विमुक्त दुरन्तभ्रान्तं रति " । भूयः मुनिसुव्रतजिनः मुनीन् सुव-र्णन्ति आच्छादयन्ति मुनिसुव्रताः कामादयः तान् जयति स मुनि-सुव्रतजिनः । पुनः अनन्तवाक्श्रीसुपार्श्वः । अनन्ताय मुक्तये वा ... अनन्तवाचः मोक्षमार्गोपदेशकशास्त्रनिकराः । तेषां श्रियः सुपार्श्वे यस्य सोऽनन्तवाक्श्रीसुपार्श्व पुनः शान्तिः । " शं सुखे

शोभमानयोः " । शं सुखं सा लक्ष्मीर्वा मन्ती अन्तिके यस्य स शान्तिः । पद्मः प्रभः क्रमेण यानेन गम्यते सद्भिरित्यर्थः । पुनः विमलविभुर्गौवर्द्धमान । विमलानां विभुः विमलविभुः । विमल-धामो विभुश्च विमलविभुः निर्मलस्वामी । रसः वीर्यम् । अर्थवशाद्-नन्तवीर्यमित्यर्थः । " शृंगारादौ विषे वीर्ये गुणे रागे द्रवे रसः " इत्यमरः । रस एव उः समुद्र इति रसोः । अनन्तवीर्यसमुद्रः । तेन वर्द्धते असौ वर्द्धमान । विमलविभुश्चासौ रसौ वर्द्धमानश्च वि-मलविभुर्गौवर्द्धमानः । पुन: अज्ञांकः । अजेभ्यः शुद्धनिश्चयनो ऽविभ्यः अंकयति कथयति अज्ञांकः । पुनः मल्लि । मदयति मत् गर्वः । मिथ्यादृष्टीनामिति वक्तव्यम् । मदः लिनाशो यस्मादिति मल्लिः । मानस्तंभेषु तथा श्रमानननाशात् । पुनः नेमिः । नयन्त्यात्म-स्वरूपं जीवे अस्मादिति नेमि । पुन नमिः हिंसारहितत्वात्त्रिजग-त्साता । पुन सुमति सुमा अष्टद्रव्यमिता ति पूजा यस्य स सुमतिः पुनः मत श्रेयः ।

इति श्री चतुर्विंशतिजिनस्तुतावेकाक्षरनामाक्षरिकायां भट्टारकश्रीनरेन्द्रकीर्तिमुख्य-शिष्यपंडितजगन्नाथकृतायां एकादशमजिनश्रेयसः स्तुतिः ।

अब आगे श्री श्रेयांसनाथ ग्यारहवें तीर्थंकरकी स्तुति करते हैं ।

अन्वयः—श्रीवासुपूज्यः वृषभजिनपति श्रीद्रुमांकोपधर्मः (श्री-द्रुमांकः अथधर्मः) हर्यंकः पुष्पदन्तः मुनिसुव्रतजिनः अनन्तवाक्‌श्रीसु-पार्श्व शान्तिः पद्मप्रभ अर विमलविभुर्गौवर्द्धमानः अज्ञांकः मल्लि नेमि नमि सुमति मत श्रेयान् अपि मां श्रीजगन्नाथधीरं अवतु ।

अर्थ— जो श्री श्रेयांसनाथ भगवान् श्रीवासुपूज्य हैं । जो देवोंके अधिपति की शोभाको प्राप्त हुआ हो ऐसे इन्द्रके द्वारा जो पूज्य हों उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं । फि जो भगवान् वृषभजिनपति हैं । जिस प्रकार नक्षत्रोंमें चन्द्रमा शोभायमान होता है उसी प्रकार जो वृष अर्थात् धर्मात्मा मुनयोंमें भ अर्थात् शोभायमान हों उनको वृषभ कहते हैं । जो अनेक मुनियोंमें शोभायमान ऐसे गणधरोंके स्वामी हों ।

जिनपति कहते हैं। श्रेयांसनाथके कुंथु आदि सत्तर गणधर थे। फिर जो भगवान श्रीद्रुमांकोथधर्म हैं। श्रीद्रुम उत्तम वृक्षोंको कहते हैं। संसारमें सबसे उत्तम वृक्ष श्रुतस्कंध वा श्रुतज्ञानकी अंगपूर्व आदि शाखाएं हैं। उनके वनको श्रीद्रुमांक कहते हैं। एक जगह सरस्वतीके लिए लिखा भी है "श्रुतस्कंधवने विहारिणीम्" अर्थात् जो सरस्वती श्रुतस्कंधरूपी वनमें विहार करनेवाली है। गंभीर धर्मको थधर्म कहते हैं। और जो समुद्रके समान गंभीर धर्म हो उसको उथधर्म कहते हैं। जिनका समुद्रके समान गंभीर धर्म श्रुतस्कंधरूपी वनमें विहार करनेवाला हो उनको श्रीद्रुमांकोथधर्म कहते हैं। लिखा भी है "अर्हद्वक्त्रप्रसूतं गणधररचितं द्वादशांगम्" अर्थात्—यह द्वादशांग भगवान् अर्हंत देवके मुखसे उत्पन्न हुआ है और गणधरोंने इसकी रचना की है। अथवा वे भगवान श्रीद्रुमांक हैं। कल्पवृक्षके चिन्हको धारण करनेवाले श्रीशीतलनाथके समान जो हों उनको श्रीद्रुमांक कहते हैं। तथा जो भगवान् अथधर्म हैं—तीर्थंकर हैं। फिर जो भगवान् हर्यंक हैं। जो भव्य जीवोंके मनको हरण करे ऐसी समवसरण आदि विभूतिको हरि कहते हैं। ऐसी विभूति जिनके समीप हो उनको हर्यंक कहते हैं। अथवा विष्टरादि हरि हैं। वे जिनके समीप हों उनको हर्यंक कहते हैं। फिर जो भगवान पुष्पदन्त हैं। जो रत्नत्रयको पुष्ट करें ऐसे जैनियोंको पुष्प कहते हैं। तथा दन्त शब्दका अर्थ समूह है जिनसे जैनियोंका समुदाय बढ़ता रहे उनको पुष्पदन्त कहते हैं। फिर जो भगवान मुनिसुव्रतजिन हैं। जो मुनियोंको आच्छादन करें ऐसे काम क्रोधादिकको मुनिसुव्रत कहते हैं जो काम क्रोधादिकको जीतें उनको मुनिसुव्रत जिन कहते हैं। फिर जो भगवान अनन्तवाक्श्रीसुपार्श्व हैं। अनन्त शब्दका अर्थ मोक्ष है। जिसमें कहे हुए वचन मोक्षके लिये हों—मोक्षमार्गका ही निरूपण करते हों ऐसे शास्त्रोंके समुदायको अनन्तवाक् कहते हैं। तथा जिनके समागम सज्जनोंको निरूपण करनेवाले शास्त्रोंके समुदायकी शोभा हो उनको अनन्तवाक्श्रीसुपार्श्व कहते हैं।

फिर जो भगवान् शांति हैं। जिनके समीपमें अनन्त सुख अथवा अनन्त चतुष्टयकी अनन्त शोभा हो उनको शान्ति कहते हैं। फिर जो भगवान् अर हैं। जो सज्जनोंके द्वारा ज्ञान द्वारा प्राप्त किये जाँय उनको अर कहते हैं। फिर जो भगवान् विमलविभुसौवर्द्धमान हैं। जो रागद्वेष आदिसे रहित निर्मल मुनियोंके विभु हों उनको विमलविभु कहते हैं। अथवा जो स्वयं कर्ममलकलंकसे रहित हों और विभु अर्थात् सबके स्वामी हों उनको विमलविभु कहते हैं। रस शब्दका अर्थ वीर्य है। वीर्यशब्दसे अनन्तवीर्य लेना चाहिये। तथा उ समुद्रको कहते हैं। जो रस अर्थात् अनन्तवीर्य समुद्रके समान गंभीर हो उनको रसौ कहते हैं। उस रसौसे अर्थात् अनन्तवीर्यरूप समुद्र से जो वृद्धिको प्राप्त होते रहें उनको रसौवर्धमान कहते हैं। जो कर्ममल रूप कलंकसे रहित हों, सबके स्वामी हों, और अनन्तवीर्यरूप समुद्रसे सदा वृद्धिको प्राप्त होते रहते हों उनको विमलविभुसौवर्द्धमान कहते हैं। फिर जो भगवान् अजांक हैं। शुद्ध निश्चय नयसे सभी जीव शुद्ध हैं और शुद्ध निश्चयसे सभी जीव अज हैं। अंकका अर्थ कथन है। जो निश्चयनयसे कहे जानेवाले सम्यग्ज्ञानी जीवोंके लिये कथन करें उनको अजांक कहते हैं। फिर जो भगवान् मल्लि हैं। मल्लका अर्थ मद है। उसका नाश जिनसे हो उनको मल्लि कहते हैं। फिर जो भगवान् नेमि हैं। जिनसे आत्माका स्वरूप प्राप्त हो उनको नेमि कहते हैं। फिर जो भगवान् नमि हैं। जो [illegible] न हो—जिनके मनमें हिंसा न हो उनको नमि कहते हैं। फिर जो भगवान् समंत हैं। सम अष्ट द्रव्योंको कहते हैं। और [illegible] उनको अष्ट द्रव्य पूजा का ज्ञानी हो उनको [illegible] कहते हैं। तथा जो भगवान् सत् अर्थात् श्रेष्ठ हैं। ऐसे श्री श्रेयांसनाथ [illegible] मुझ [illegible] रक्षा करें। अथवा मुझको और [illegible] श्री [illegible] इस [illegible] भयसे रक्षा करें।

जिनपति कहते हैं । श्रेयांसनाथके कुंथु आदि सत्तर गणधर थे । फिर जो भगवान श्रीद्रुमांकोग्रधर्म हैं । श्रीद्रुम उत्तम वृक्षोंको कहते हैं । संसारमें सबसे उत्तम वृक्ष श्रुतस्कंध या श्रुतज्ञानकी अंगपूर्व आदि शाखाएं हैं । उनके वनको श्रीद्रुमांक कहते हैं । एक जगह सरस्वतीके लिए लिखा भी है " श्रुतस्कंधवने विहारिणीम् " अर्थात् जो सरस्वती श्रुतस्कंधरूपी वनमें विहार करनेवाली है । गंभीर धर्मको उग्रधर्म कहते हैं । और जो समुद्रके समान गंभीर धर्म हो उसको उग्रधर्म कहते हैं । जिनका समुद्रके समान गंभीर धर्म श्रुतस्कंधरूपी वनमें विहार करनेवाला हो उनको श्रीद्रुमांकोग्रधर्म कहते हैं । लिखा भी है " अर्हद्वक्त्रप्रसूतं गणधररचितं द्वादशांगम " अर्थात्—यह द्वादशांग भगवान् अर्हंत देवके मुखसे उत्पन्न हुआ है और गणधरोंने इसकी रचना की है । अथवा वे भगवान् श्रीद्रुमांक हैं । कल्पवृक्षके चिन्हको धारण करनेवाले श्रीशीतलनाथके समान जो हों उनको श्रीद्रुमांक कहते हैं । तथा जो भगवान् अग्रधर्म हैं—तीर्थंकर हैं । फिर जो भगवान् हर्यंक हैं । जो भव्य जीवोंके मनको हरण करे ऐसी समवसरण आदि विभूतिको हरि कहते हैं । ऐसी विभूति जिनके समीप हो उनको हर्यंक कहते हैं । अथवा विष्णु आदि हरि हैं । वे जिनके समीप हों उनको हर्यंक कहते हैं। फिर जो भगवान् पुष्पदन्त हैं । जो रत्नत्रयको पुष्ट करे ऐसे जैनियोंको पुष्प कहते हैं । तथा अन्त शब्दका अर्थ समूह है जिनसे जैनियोंका समुदाय बढ़ता रहे उनको पुष्पदन्त कहते हैं । फिर जो भगवान मुनिसुव्रतजिन हैं । जो मुनियोंको आच्छादन करें ऐसे काम क्रोधादिकको मुनिसुव्रत कहते हैं । जो काम क्रोधादिकको जीतें उनको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं । फिर जो भगवान अनन्तवाक्‌श्रीसुपार्श्व हैं । अनन्त शब्दका अर्थ मोक्ष है । जिसमें कहे हुए वचन मोक्षके लिये हों-मोक्षमार्गका ही निरूपण करते हों ऐसे शास्त्रोंके समुदायको अनंतवाक् कहते हैं । तथा जिनके समीपमें मोक्षमार्गको निरूपण करनेवाले शास्त्रोंके समुदायकी शोभा हो उनको अनंतवाक्‌श्रीसुपार्श्व कहते हैं ।

फिर जो भगवान् शांति हैं। जिनके समीपमें अनन्त सुख अथवा अनन्त चतुष्टयकी अनन्त शोभा हो उनको शान्ति कहते हैं। फिर जो भगवान् अर हैं। जो सज्जनोंके द्वारा ज्ञान द्वारा प्राप्त किये जाय उनको अर कहते हैं। फिर जो भगवान् विमलविभुरसौवर्द्धमान हैं। जो रागद्वेष आदिसे रहित निर्मल मुनियोंके विभु हों उनको विमल-विभु कहते हैं। अथवा जो स्वयं कर्ममलकलंकसे रहित हों और विभु अर्थात् सबके स्वामी हों उनको विमलविभु कहते हैं। रस शब्दका अर्थ वीर्य है। वीर्यशब्दसे अनन्तवीर्य लेना चाहिये। तथा उ समुद्र-को कहते हैं। जो रस अर्थात् अनन्तवीर्य समुद्रके समान गंभीर हो उसको रसौ कहते हैं। उस रसौसे अर्थात अनन्तवीर्यरूप समुद्रसे जो वृद्धिको प्राप्त होते रहें उनको रसौवर्धमान कहते हैं। जो कर्ममल रूप कलंकसे रहित हों, सबके स्वामी हों, और अनन्तवीर्यरूप समुद्रसे सदा वृद्धिको प्राप्त होते रहते हों उनको विमलविभुरसौवर्द्धमान कहते हैं। फिर जो भगवान् ऋजीक हैं। शुद्ध निश्चय नयसे सभी जीव शुद्ध हैं और शुद्ध निश्चयसे सभी जीव ऋ हैं। ईकका अर्थ वचन है। जो निश्चयनयसे कहे जानेवाले सम्यग्ज्ञानी जीवोंके लिये वचन करें उनको ऋजीक कहते हैं। फिर जो भगवान् मति हैं। मकारका अर्थ मद है। उसका नाश जिनसे हो उनको मति कहते हैं। फिर जो भगवान् नेमि हैं। जिनसे आत्माका स्वरूप प्राप्त हो उनको नेमि कहते हैं। फिर जो भगवान् नमि हैं। जो हिंसाका उपदेश न दें—जिनके मतमें हिंसा न हो उनको नमि कहते हैं। फिर जो भगवान् मुनि हैं। मु अर्थ द्रव्योंको कहते हैं। और नि प्रकाशको कहते हैं। जिनकी आत्मद्रव्यमें प्रकाश [illegible] हो उनको मुनि कहते हैं। तथा जो भगवान् [illegible] हैं। ऐसे श्री [illegible] संक्षेप [illegible] रक्षा करें। अथवा मुझको और [illegible] इस समयके [illegible] रक्षा करें।

इति श्रीसंक्षेप[illegible] ॥

अथ श्रीवासुपूज्यस्तुतिः।

श्रेयान् श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोथधर्मो,
हर्यंकः पुष्पदंतोमुनिसुव्रतजिनोनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः।
शांतिः पद्मप्रभोरोविमलविभुरसौ वर्द्धमानोप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम्।

टीका—असौ लोकोत्तरः श्रीवासुपूज्योपि वसुपूज्यपुत्रो द्वादशतीर्थपतिरपि। तदुक्तं महापुराणे "वासुरिन्द्रोस्य पूज्योयं वसुपूज्यस्य वा सुतः। वासुपूज्यः सतां पूज्यः। सद्ज्ञानेन पुनातु नः"। किंविशिष्टः ? श्रेयान् नितरां प्रशस्यः। पुनः वृषभजिनपतिः। वृषा धर्मा एव भा भोगा येषां ते वृषभाः। वृषभाश्च ते जिनाः षट्षष्टिमिता धर्मपुरोगमा गणधरास्तेषां पतिर्वृषभजिनपतिः। पुनः श्रीद्रुमांकः। श्रीद्रुमाः कल्पवृक्षाः अंके समवसरणे यस्य स श्रीद्रुमांकः। 'शाल कल्पद्रुमाणामिति वचः'। पुनः अथधर्मः। यश्चासौ धर्मः अथधर्मः। गंभीरस्वभावः। ए ब्रह्मणि अधर्मो यस्य सोथधर्मः। पुनः हर्यंकः। हरि द्विपृष्ठाभिधो द्वितीयनारायणः अंके यस्य स हर्यंकः। अथवा भारं हरति हरि महिषः सोंके यस्य स हर्यंकः। पुन पुष्पदन्त। पुष्पन कंदर्पस्य अन्तो विनाशो यस्मादिति पुष्पदन्त। ननु कथं पुष्पदन्त तीर्थकराणां पुत्रादयो भवन्त्येवेति चेदुच्यते—पुन अर। 'रा रमा रमणी बाला'। नास्ति रा रमणी यस्य सोर अविवाहितत्वात्। पुन अमुनिसुव्रतजिन। मुनिभि सुव्रत इति मुनिसुव्रत स चासौ जिनो रतिपतिः मुनिसुव्रतजिनः। न मुनिसुव्रतजिनो यस्य यस्माद्वा भव्येभ्यिति अमुनिसुव्रतजिनः। पुनः अनन्तवाक् अनन्तः नारायण 'अनन्तो शेषशार्ङ्गिणो'। अनन्ते द्विपृष्ठे वाक् यस्य सोनन्तवाक्। तदनन्तरं स एव धर्मप्रवर्तकः। पुन श्रीसुपार्श्व श्रीभिः शोभने पार्श्वे यस्य स श्रीसुपार्श्व। पुन शान्ति। भवभ्रमणादुत्पन्नदुःखं शान्तयति शान्ति।

भूयः पद्मप्रभः । पद्मवत् रक्तकमलवत् प्रभा यस्य स पद्मप्रभः । अथवा पद्मवत् पद्मरागमणेः प्रभा इव प्रभा यस्य स पद्मप्रभः । अथवा पद्मप्रभ इव पद्मजिन इव इति पद्मप्रभो रक्तवर्णत्वात् । पुनः विमलविभुः । विशिष्टा मा लक्ष्मीर्येषु ते विमाः विमानादि-सम्पदान्विताः । ते च ते लाः इन्द्रा इति विमलाः तेषां विभुः विमलविभुः । " ल इन्द्रे चलनेऽपि च " पुनः वर्द्धमानः असातोद्भूतमहाशायुरोगशान्तये वर्द्धमान इव वर्द्धमानः । एरण्डसमानः । पुनः अज्ञांकः । अज्ञः जन्मादिदुःखः अंको यस्य सोऽयमज्ञांकः । एतेन चतुर्दशगुणस्थाने अघातिकर्माणि निर्मूल्य मोक्षं गतवानिति । भूयः अमल्लिः । अः कामक्रोधादिशोगिनिर्विद्यते यस्य तत् अमत् पापं । तस्य लिर्नाशोऽस्मादिति अमल्लिः । पुनः नेमिः । मतत्त्वोपदेशेन जनान् नामयति नेमिः । भूयः नमिः । नास्ति मीहिंसा प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं यस्य स नमिः । पुनः सुमतिः । सुष्ठु मा प्रमा स्याद्वादलक्षणा इति सुमा । सुमा एव तिर्महाधनं यस्य स सुमतिः । " पूजायां तिः श्रियां लोके मनोमाने महाधने " । पुनः श्रीजगन्ना । जगतां ना नाथ इति जगन्ना । श्रीमिरुपलक्षितो जगन्नेति श्रीजगन्ना त्रिजगदीश्वरः । " नृशब्दोपि नरे नाथे " । ना नरौ नरः इत्यादि । पुनः मत् श्रेयः । एवं विधः श्रीवासुपूज्यः । अयं मां जगन्नाथमवताद् पालयतु । कथंभूतं मां धीरं । धिया बुद्ध्या त्वयि इरा वाक् यस्य स धीरस्तं धीरम् । " इरा भूवाक्सुराप्सु स्यादिति " ।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुत्यवेकाक्षरप्रकाशिकायां भट्टारक श्री नरेन्द्रकीर्ति-शिष्यकोविदजगन्नाथकृतायां द्वादशतीर्थंकरश्रीवासुपूज्यस्तोत्रं समाप्तम् ।

बारहवें तीर्थंकर श्रीवासुपूज्यकी स्तुति ।

अन्वयः—श्रेयान् वृषभजिनपतिः श्रीसुमोक्ष अपधर्मः हर्यक्षः पुष्पदन्तः अरः असुनिसुव्रतजिनः अनन्तवाक्

शान्तिः पद्मप्रभः विमलविभुः वर्द्धमानः अजांकः प्रमतिः नेमिः नमिः सुमतिः श्रीजगन्नाथ मत श्रीवासुपूज्य. अथ धीरं मां अवतु।

अर्थ— जो भगवान् वासुपूज्य स्वामी श्रेयान् अर्थात् अत्यन्त प्रशंसनीय हैं। फिर जो भगवान् वृषभजिनपति हैं। जिनके वृष अर्थात् धर्म ही भोग हों उनको वृषभ कहते हैं। तथा ऐसे गणधरोंको वृषभजिन कहते हैं। जो वृषभजिनके स्वामी हों उनको वृषभजिनपति कहते हैं। श्रीवासुपूज्यके धर्मआदि छयासठ गणधर थे। फिर जो भगवान् श्रीद्रुमांक हैं। भगवान वासुपूज्यके समवसरणमें अनेक प्रकारके कल्पवृक्षोंकी शोभा थी इसलिये उनको श्रीद्रुमांक कहते हैं। फिर जो भगवान अथधर्म हैं। थ का अर्थ गंभीर है। और अ का अर्थ परब्रह्म है। धर्म स्वभावको कहते हैं। गंभीर स्वभावको थधर्म कहते हैं। जिनका गंभीर स्वभाव परब्रह्ममें लीन हो उनको अथधर्म कहते हैं। फिर जो भगवान हर्यंक हैं। हरि अर्थात् द्विपृष्ठ नामके दूसरे नारायण जिनके समीपमें हों उनको हर्यंक कहते हैं। अथवा जो भार या बोझेको ढोवे ऐसे भैंसेको हरि कहते हैं। भैंसेका चिन्ह जिनके हो उनको हर्यंक कहते हैं। श्रीवासुपूज्यके भैंसेका चिन्ह है। फिर जो भगवान् पुष्पदन्त हैं। जो विषयोंमें लगाकर स्त्रियोंमें विकसित हो ऐसे कामको पुष्पत कहते हैं। अन्तका अर्थ नाश है। जिनके द्वारा कामदेवका नाश हुआ हो उनको पुष्पदन्त कहते हैं। कदाचित् कोई यह कहेगा कि भगवान् वासुपूज्य कामदेवका नाश करनेवाले किस प्रकार हो सकते हैं; क्योंकि तीर्थंकरोंके पुत्र तो होते ही हैं? तो इसका उत्तर यह है कि वासुपूज्य भगवान् अर हैं। रा स्त्री को कहते हैं। जिनके स्त्री न हो उनको अर कहते हैं। भगवान् वासुपूज्य बालब्रह्मचारी थे। फिर जो भगवान् अमुनिसुव्रतजिन हैं। वृ शब्दका अर्थ आच्छादन करना है और जिन शब्दका अर्थ कामदेव है। जो मुनियोंके द्वारा सुव्रत अर्थात् आच्छादन किया जाय-नष्ट किया जाय ऐसे कामको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं। जिनके ऐसा काम देव न हो अथवा जिनके निमित्तसे भव्य जीवोंके भी

सा कामदेव न हो उनको अमुनिमुव्रतजिन कहते हैं । फिर जो
गवान् अनंतवाक् हैं । अनंतका अर्थ नारायण है । जिनकी वाणी
नन्त अर्थात् द्विपृष्ठ नारायणके लिए हो उनको अनन्तवाक् कहते हैं।
गवान् वासुपुज्यके अनन्तर नारायण द्विपृष्टने ही उनके उपदेशका
स्तार किया था और इसप्रकार उनकी वाणी नारायणके लिए थी
सलिए उनको अनन्तवाक् कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीसुपार्श्व
। जिनका समीपका भाग वा समवसरण बहुत सुशोभित हो उनको
ीसुपार्श्व कहते हैं। फिर जो भगवान् शांति हैं । जो संसारके परि-
मणसे होनेवाले दुःखोंको शांत करें उनको शांति कहते हैं। फिर जो
गवान् पद्मप्रभ हैं। लाल कमलको पद्म कहते हैं। जिनकी प्रभा
र्थात् शरीरकी कांति लाल कमलके समान हो उनको पद्मप्रभ
हते हैं। अथवा पद्मरागमणिके समान लाल वर्णकी जिनके शरीरकी
ा हो उनको पद्मप्रभ कहते हैं । भगवान् वासुपूज्यके शरीरकी
ा भी ऐसी ही है । फिर जो भगवान् विमलविभु हैं। वि विशेष
अधिकको कहते हैं और मा लक्ष्मीको कहते हैं ।
ीर ल इन्द्रको कहते हैं। जो विमानोंकी सम्पदा आदि महाविभूतिसे
शोभित हों ऐसे इन्द्रादिक महर्द्धिक देवोंको विमल कहते हैं। भग-
न् वासुपूज्य ऐसे अनेक इन्द्रोंके स्वामी हैं इसलिये उनको विमलविभु
हते हैं। फिर जो भगवान् वर्द्धमान हैं। वर्द्धमानका अर्थ एरड वृक्ष
। एरंडके पत्ते वायु रोगको नाश करनेवाले होते हैं। जो असाता
र्मके उदयसे होनेवाले महावायुरूपी रोगको शान्त करनेकेलिये वर्द्ध-
न अर्थात् एरंडके पत्तोंके समान हों उनको वर्द्धमान कहते हैं। फिर
भगवान् अजांक हैं। जन्ममरणके दूर होनेको अज कहते हैं।
क चिन्हको कहते हैं। जिनका चिन्ह जन्ममरणका दूर होना ही हो
नको अजांक कहते हैं। फिर जो भगवान् अनंगा हैं। कामक्रोध
ादिसे उत्पन्न होनेवाली आमको अ करते हैं। जिनके वा जिनसे
मक्रोधादिकसे उत्पन्न होनेवाला आम हो ऐसे रूपोंको अदद करते हैं

जिनसे अमन अर्थात् पापोंका नि अर्थात् नाश हो उनको अमनि कहते हैं। फिर जो भगवान् नेमि हैं। जो तीन लोकके औरोंमें समस्त कार्यो उनको नेमि कहते हैं। फिर जो भगवान् नमि हैं। फिर जो भगवान् सुमति हैं। सु अर्थात् श्रेष्ठ मा अर्थात् ज्ञानको—श्रेष्ठ केवलज्ञान को सुमा कहते हैं। ति शब्दका अर्थ धन है। जिनके केवलज्ञान ही महाधन हो उनको सुमति कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीजगन्ना हैं। ना शब्दका अर्थ नाथ वा स्वामी है। जो जगत्के नाथ हों उनको जगन्ना कहते हैं। और समवसरण वा अनन्त चतुष्टय आदिकी शोभा से विभूषित होने हुए जगन्ना अर्थात् तीनों लोकोंके स्वामी हों उनको श्रीजगन्ना कहते हैं। भगवान् वासुपूज्य भी ऐसे हैं इसलिये वे श्रीजगन्ना कहे जाते हैं। फिर जो भगवान् सत् अर्थात् श्रेष्ठ हैं सर्वश्रेष्ठ हैं। और जो वासुपूज्यके नामसे प्रसिद्ध हैं। महापुराणमें लिखा है " वासुरिन्द्रोऽस्य पूज्योऽयं वसुपूज्यस्य वा सुतः। वासुपूज्यः सतां पूज्यः सद्ज्ञानेन पुनातु नः।" अर्थात् वासु इन्द्रको कहते हैं। जो इन्द्रके द्वारा पूज्य हों उनको वासुपूज्य कहते हैं। अथवा जो महाराज वसुपूज्यके पुत्र हों उनको वासुपूज्य कहते हैं। ऐसे सज्जनों के द्वारा पूज्य वे भगवान् वासुपूज्य अपने सम्यग्ज्ञानसे हम लोगोंको पवित्र करें।" इसप्रकार अनेक विशेषणोंसे विभूषित बारहवें तीर्थंकर ये लोकोत्तर भगवान् वासुपूज्य युक्त धीर भी शब्दका अर्थ बुद्धि है और इरा शब्दका अर्थ वाणी है " इरा भूवाक्सुराप्सु स्यात्" अर्थात् इरा शब्दका अर्थ पृथ्वी वाणी जल आदि है " जिसकी वाणी बुद्धि पूर्वक आपमें लगी हो जो बुद्धि पूर्वक आपका भक्त हो उसको धीर कहते हैं। विद्वद्वर पण्डित जगन्नाथने भी बुद्धिपूर्वक भगवानकी भक्ति की है, उनने यह स्तोत्र बनाया है इसलिये उन्होंने अपने लिये ही धीर विशेषण दिया है, ऐसे धीर—वीरमुख्य पंडित जगन्नाथको इस संसारके भयसे रक्षा करें।

इति वासुपूज्यजिनस्तुति॥

गम्भीरे थः'। पुन· अहर्यंकः। हं हिंसा। 'हं दर्पे चैव हिंसायां'। री भ्रम. री भ्रमेरुभये'। 'हं न री च हरी। न स्तो हरी अंके यस्य सोऽहर्यंकः। वा हर्यकः शक्रांकः। भूय· नोमुनिसुव्रतजिनः। ना· व. ज्ञानसागरा मुनयः। मतिश्रुतावधिनरा इति नो मुनयः। तैः सु ष्ठता जिनाः मेरुमन्दरादयः पंचाशत्पंचाशद्गणधरा यस्य स नोमु- निसुव्रतजिनः। पुनः तवाक्श्रीसुपार्श्वः। तेन ज्ञानेन युक्ता वाचः इति तवाचः तासां श्रियः सुपार्श्वे यस्य स तवाक्श्रीसुपार्श्वः। पुनः शांतिः। शा शुभं अन्तो अन्तिके यस्य स शांतिः। मुहु· प· द्मप्रभः हेमवर्णः। पुनः अरः जितकंदर्पः। अनेनाष्टादशसहस्रशील- त्वमुक्तं। मुहुः असौवर्द्धमान·। न मा लक्ष्मीरित्यमा। तस्मा उः पीडनमित्यसौः। संसार शरणोद्धृत परमात्म गुण तिरोधान दूरी- करणं स्वपदप्राप्तिरित्यर्थः। असावा वर्द्धमानः असौवर्द्धमानः 'उः समुद्रजलेनन्ते पीडने पुंसि भाषणे'। मुहुः अप्यजांकः। न संन्ति पयः सोदरा येषां ते अपयः। कृतकुटुंबत्यागाः। 'पि पुंसि पीडिताराबे सागरे सोदरे दरे'। अपयश्च ते अजा महामुनय इति अप्यजाः। नेऽके यस्य सोप्यजाकः। भूयः मल्लिः। मदो मदस्य लिर्नाशोऽस्मादिति मल्लि·। पुनः नेमिः। जिना द्विधा मतमामाधात्मानं सुगतिं नयंति प्राप्नुवन्ति अस्मादिति नेमि·। पुनः नमि। न मि कामोऽस्मादिति नमिः। भूयः सुमतिः केवलज्ञानवान्। पुनः श्रीजगन्नाथधी· श्रीजगन्नाथैः धर्मस्वयंभुमध्वादिभिर्ध्यायते चिन्त्यते इति श्रीजगन्नाथधीः।

इति श्री चतुर्विंशतिजिनस्तुतावेकाक्षरप्रकाशिकाया भट्टारक श्री नरेन्द्रकीर्ति अन्तेवासिविपश्चिज्जगन्नाथकृतायां त्रयोदशार्हद्विमलामलस्तुतिः पूर्तिमगात् त्रयोदशार्थश्च पूर्ण.।

आगे तेरहवें तीर्थंकर श्रीविमलनाथकी स्तुति करते हैं।

अन्वयः—श्रेयान् श्रीवासुपूज्यः वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमाम्र कोथधर्म· अहर्यंक नोमुनिसुव्रतजिनः तवाकश्रीसुपार्श्वः शान्तिः

करः असौवर्द्धमानः अप्पन्नांकः मल्लिः नेमि. नमि सुमति मनु श्रीजगन्नाथधीः विमलविभुः अनंत पुष्पदं मां अवतु ।

अर्थ—जो श्री विमलनाथ भगवान् अर्थात् अत्यंत शोभायमान हैं । फिर जो भगवान् श्रीवासुपूज्य हैं । श्रीका अर्थ प्राण है । जिनके असु अर्थात् प्राण शुभ वेदनीय कर्मका उदय हो, जो सातावेदनीय कर्मके उदयमें दान देने भोगोपभोग सेवन करनेमें लगे हों ऐसे गृहस्थोंको श्रीवासु कहते हैं । उनके द्वारा जो पूज्य हों उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं । फिर जो भगवान् वृषभजिनपति हैं । दर्शनविशुद्धि आदि सोलह कारण भावनाओंसे उत्पन्न हुए धर्मको वृष कहते हैं । भ का अर्थ शोभायमान होना है । कर्मरूपी शत्रुओंको जीतनेवालेका नाम जिन है और तीनों लोकोंके स्वामीको पति कहते हैं । भगवान् विमलनाथ स्वामी सोलह कारण भावनाओंसे उत्पन्न होनेवाले तीर्थंकर प्रकृति के उदयसे उत्पन्न हुए पंचकल्याणक, समवसरण विभूति वा अनन्त चतुष्टय आदि धर्मसे सुशोभित हैं इसलिये वे वृषभ कहे जाते हैं । उन्होंने समस्त कर्मोंको जीत लिया है इसलिये जिन कहलाते हैं और तीनों लोकोंके स्वामी हैं इसलिये पति कहे जाते हैं । फिर जो

[illegible]

अहृयैक हैं। री का अर्थ श्रम है। जिनके समीपमें हिंसा और श्रम दो
न हों उनको अहृयैक कहेंगे। अथवा वे भगवान् हृर्यंक हैं। हरि सुअ
कहते हैं। जिनके सुअरका चिन्ह हो उनको हर्यंक कहते हैं। भग
विमलनाथके चरणोंमें सुअरका चिन्ह है। फिर जो भगवान् तो
निमुव्रतजिन हैं। तो का अर्थ ज्ञानका समुद्र है
मुमनका अर्थ घिरे रहना वा साथ रहना है। जि
गणधरदेव ज्ञानके समुद्र और अनेक मुनियोंके साथ विराज
हों उनको तोमुनिसुव्रतजिन कहते हैं। मेरुमन्दर आदि इनके पच
गणधर थे। फिर जो भगवान् तवाक्श्रीसुपार्श्व हैं। त ज्ञानको कहते
जो वाणी पूर्णज्ञान सहित हो उसको तवाक् कहते हैं। और जि
समीपमें पूर्ण ज्ञानसे सुशोभित होनेवाली दिव्य ध्वनि की शो
हो उनको तवाक्श्रीसुपार्श्व कहते हैं। फिर जो भगवान् शान्ति
शा शुभ वा कल्याणको कहते हैं और अन्ति समीप को कहते
जिनके समीप शुभ वा कल्याण हों उनको शांति कहते हैं। फिर
भगवान् पद्मप्रभ हैं। सुवर्णको पद्म कहते हैं। जिनके शरीर
कांति सुवर्ण के समान हो उनको पद्मप्रभ कहते हैं। फिर जो भग
अ हैं। जिनके कामदेव न हो उनको अ कहते हैं
फिर जो भगवान् अमौवर्द्धमान हैं। मा लक्ष्मीको कहते हैं। लक्ष्मी
अभावको अमा कहते हैं। उ का अर्थ पीड़न वा दूर करना
जो अमको दूर कर उनको अमौ कहते हैं। समस्त जीवों
शरण देने वाले भगवान अर्हन्तदेवके अनन्त चतुष्टय आदि गुणों
मा अर्थात लक्ष्मी कहते हैं। उसका अभाव कर्मोंसे होता है इसलि
अनन्त चतुष्टयको ढकनेवाले कर्मोंको अमा कहते हैं। और उन कर्म
दूर करनेको, नाश करनेको अथवा अपने शुद्ध आत्माकी प्राप्तिको अ
कहते हैं। जो अपने शुद्ध आत्माकी प्राप्तिसे वर्द्धमान रहें उनको अमौ
वर्द्धमान कहते हैं। फिर जो भगवान् मल्यामो. हैं। वि का अर्थ
मई है। जिनके मति मई न हो, जिन्होंने अपने सब कुटुंबका त्य

कर दिया हो उनको ऋषि कहते हैं। ऋजका अर्थ महामुनि है। जि-
न्होंने सब कुटुंबका त्याग कर दिया है ऐसे महामुनियोंको ऋष्यज कहते
हैं। ऐसे मुनि जिनके समीपमें हों उनको ऋष्यजोक कहते हैं। फिर
जो भगवान् मदि है। मद् अहंकारको कहते हैं। उसका दि अर्थात्
नाश जिनसे हो उनको मदि कहते हैं। फिर जो भगवान् नेमि हैं।
जिनसे शुभगतिका नाम हो उनको नेमि कहते हैं। फिर जो भगवान्
नमि है। मिका अर्थ कामदेव है। जिनके कामदेवका सर्वथा अभाव हो
उनको नमि कहते हैं। फिर जो भगवान् सुमति हैं। जिनके सर्वोत्तम
केवलज्ञान हो उनको सुमति कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीजगन्नाथध्यो
हैं। चक्रवर्ती मद्दे चक्री आदि राजाओंको जगन्नाथ कहते हैं। जो
अनेक प्रकारकी श्री अर्थात् लक्ष्मी वा शोभासे विभूषित हों ऐसे राजा-
ओंको श्रीजगन्नाथ कहते हैं और उनके द्वारा जिनका ध्यान किया जाय
उनको श्रीजगन्नाथध्यो कहते हैं। धर्म स्वयंभु मधु आदि उनके समवसरण
में होनेवाले राजाओंने भगवान् विमलनाथका ध्यान किया है इसलिये
भगवानको श्रीजगन्नाथध्यो कहते हैं। फिर जो भगवान् सत् हैं। ऐसे
श्री विमलनाथ स्वामी तेरहवें तीर्थंकर मुझ जगन्नाथको स्वीकार कर इस
संसारके भयसे रक्षा करो। मैं कैसा हूं अन हूं। न का अर्थ
नाथ है। भगवान अर्हन्त देवके सिवाय जिसका और कोई स्वामी न
हो उसको अन कहते हैं उसके सिवाय मैं [illegible] हूं। जो पूजाके
द्वारा भगवान् अर्हन्त देवको पद समर्पण कर उसको पुष्पद कहते हैं।
लिखा भी है "[illegible]"
अर्थात् जो [illegible] अर्हन्त देवकी पूजा करता है वह
हंसती हुई देवाङ्गनाओंके द्वारा पूजा जाता है। इस प्रकार मैं भगवान्
अर्हन्त देवको पुष्प समर्पण करनेवाला हूं और तुम्हींको एकमात्र स्वामी
माननेवाला हूं। इसलिये हे विमलनाथ स्वामिन् इस संसारके भयसे मेरी
रक्षा कीजिये।

इति विमलनाथस्तुतिः

अथ श्री अनंतनाथस्तुतिः

श्रेयान्श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोथधर्मो,
हर्यंकः पुष्पदंतो मुनिसुव्रतजिनोनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः ।
शांतिः पद्मप्रभो रो विमलविभुरसौ वर्द्धमानोप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मा सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ।

टीका— अथ विमलस्तुत्यनन्तरं मंगलार्थो वा । असौ अनन्तवाक् अनन्तनाथनामा चतुर्दशजिनदेवः श्रीजगन्नाथधीरवतादिति । श्रीजगति भुवने नाथस्य सर्वमतनाथस्य जैनमतस्य धीरः पण्डित इति श्रीजगन्नाथधीरस्तं श्रीजगन्नाथधीरम् । लोके जैनवादिनं पण्डितं धीर इति जातिवाचकशब्दः । जैनमतपण्डितान् इत्यर्थः । " जात्याख्यायामेकस्मिन् बहुवचनमन्यतरस्यामिति " । किंविशिष्टः श्रेयानश्रीवासुपूज्य । श्रेयं जिनं । अत दशधा धर्मं श्रयन्ति सेवन्त इति श्रेयान् श्रियः ते च ते वासव इन्द्राग्नेः पूज्य इति श्रेयान्श्रीवासुपूज्यः । मुहु वृषभजिनपतिः । उः सागरः । ऋ धर्मः । उवत् गंभीरः आ (ऋ) धर्मो येषां तानि वृणि । " ऋशब्दः पावके सूर्ये धर्मे दाने धने पुमान " इति । पः श्रेष्ठ । पानि श्रेष्ठानि स मुडौ । भानि नक्षत्राणि इति पभानि ज्योतिर्देवा । सूर्याचंद्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्चेति सूत्रकारवचनात । वृणि च तानि पभानि वृपभानि । जिनो नारायणः पुरुषोत्तमाभिधः । तत्समरन्ध्राद्रलमङ्गप्रतिनारायणाश्चपि । वृपभानि च जिनश्च वृपभजिनौ तत्पतिः वृपभजिनपति । पुन श्रीद्रुमांक । जीवानां श्रियै शोकनाशाय द्रुमा अशोकादयोऽङ्के यस्य स श्रीद्रुमांक । मुहु धर्मः अहिंसादिप्रवर्तनात् । पुनः हर्यंक । हरय सिंहादय एकीभावमिता अङ्के यस्य स हर्यंकः । पुनः पुष्पदन्तः । पुष्पन्तः स्याद्वादपुष्टाः

अन्ता जीवादयः पदार्था यस्य भवे स पुष्पदन्तः । " अन्त पदार्थसामीप्यधर्मसमत्वव्यतीतिषु " । पुनः मुनिसुव्रतजिनः । मुनिभिः सुव्रता जिना जयाद्या पश्चाद्गणधरा यस्य स मुनिसुव्रतजिनः । मुहुः श्रीसुपार्श्वः । श्रीर्लक्ष्मीः ईमहानन्दः । ते द्वे सुपार्श्वे यस्य स श्रीसुपार्श्वः । मुहुः शान्तिः । शां रमां अथवशात मोक्षलक्ष्मी अमति बध्नाति इति शान्तिः । मुहुः पद्मप्रभः सुवर्णवर्णः । पुनः रः गंभीरध्वनिमान् । मत्वर्थीयोऽकार । भूयः विमलविभुः । विमलविभुरिव विमलविभुः । तत्कान्तित्वात् तदनन्तरं वा विमलनाथनिमः । मुहुः वर्द्धमानः अनन्तचतुष्टयेन वर्द्धमान एधमान । अपि निश्चितं । पुनः अजांक । अजं शास्वतं अं ब्रह्म परमात्मज्ञानम् । कायति वदति अजांकः । मुहु मल्लि । मल्लते बिभर्ति निखिलजनमनोहारिणीं सम्पदमिति मल्लिः । भूयः नेमिः । नानामी (नां, ई) मोहः तो मिनोति नेमि । पुनः नमि । न जनैर्मीयते परिच्छिद्यते नमिः । पुन सुमतिः । सुमेषु शोभनलक्ष्मीमत्सु ति पूजा यस्य स सुमतिः । पुन मत श्रेयः ।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुतावनन्तनाथस्तुत

और उत्तम क्षमा आदि दश प्रकारके धर्मोकी सेवा करें उनको श्रेयान्श्री कहते हैं। अर्हन्तदेवकी और धर्मकी सेवा करनेवाले इन्द्रोंको श्रेयान्श्री-वासु कहते हैं। उनके द्वारा जो पूज्य हों उनको श्रेयान्श्रीवासुपूज्य कहते हैं। फिर जो भगवान वृषभजिनपति हैं। उ का अर्थ समुद्र है। ऋ का अर्थ धर्म है। जिनका ऋ अर्थात् धर्म उ अर्थात् समुद्रके समान गंभीर हो उनको वृ कहते हैं। ष का अर्थ श्रेष्ठ है और भ का अर्थ न-क्षत्र है। अतः श्रेष्ठ नक्षत्रोंको अर्थात् ज्योतिषी देवोंको षभ कहते हैं। जो समुद्रके समान गंभीर धर्म को पालन करने वाले ज्योतिषी देव हों उनको वृषभ कहते हैं। जिन का अर्थ नारायण है। नारायण कहनेसे भगवान् अनंतनाथके समयमें होनेवाले पुरुषोत्तम नारायणको और उनके सम्बन्धसे बलभद्र, प्रतिनारायणको भी लेना चाहिए। जो वृषभ अर्थात् गंभीर धर्मको सेवन करनेवाले ज्योतिषी देवोंके और जिन अर्थात् नारायण प्रतिनारायण दोनोंके स्वामी हों उन-को वृषभजिनपति कहते हैं। फिर जो भगवान श्रीद्रुमांक हैं। श्रीका अर्थ कल्याण अथवा शोकको दूर करना है। जिनके समीपमें जीवोंका कल्याण करनेके लिए अथवा उनका शोक दूर करनेके लिए अशोकवृक्ष हों उनको श्रीद्रुमांक कहते हैं। फिर जो भगवान धर्म हैं--अहिंसा आदि धर्मका पालन करनेवाले हैं। अथवा अहिंसा आदि धर्मका उपदेश देनेवाले हैं। फिर जो भगवान हर्यंक हैं। सिंह आदि जीवोंको हरि कहते हैं। जिनके समीपमें सिंह हिरण आदि सब जीव इकट्ठे होकर बैठते हों उनको हर्यंक कहते हैं। फिर जो भगवान् पुष्पदन्त हैं। [illegible] ष्ट होनेको पुष्पित कहते हैं और जीवादिक पदार्थोंको [illegible] है। जिनके मतमें जीवादिक पदार्थ अनेकांत वादसे [illegible] हों उनको पुष्पदंत कहते हैं। फिर जो भगवान मुनिसुव्रत हैं। जिनके [illegible] अनेक मुनियोंसे घिरे हों उनको मुनिसुव्रत कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीसुपार्श्व हैं। जिनके समीपमें समवसरणादिक लक्ष्मी और अनन्त सुख हो उनको श्रीसुपार्श्व कहते हैं। फिर जो भगवान् शान्ति हैं। यहांपर शास मोक्षलक्ष्मी लेनी

चाहिये। शान्ति प्राप्त होनेको कहते हैं। जो शा अर्थात् मोक्ष लक्ष्मीको प्राप्त हों उनको शान्ति कहते हैं। फिर जो भगवान पद्मप्रभ हैं। जिनके शरीर की प्रभा सुवर्णके समान हो उनको पद्मप्रभ कहते हैं। भगवान् अनन्त नाथ की प्रभा भी सुवर्ण के समान है इसलिये उनको पद्मप्रभ कहते हैं। फिर जो भगवान् र अर्थात् गंभीर हैं—जिनकी दिव्यध्वनि मेघ की गर्जनाके समान अत्यंत गंभीर है इसलिये उनको र कहते हैं। फिर जो भगवान् विमलनाथके समान हों उनको विमलविम कहते हैं। फिर जो भगवान् वर्द्धमान हैं। जो अनन्त चतुष्टयसे सदा वर्द्धमान अर्थात् वृद्धिको प्राप्त होते रहें उनको वर्द्धमान कहते हैं। फिर जो भगवान् अपि अर्थात् निश्चयसे भर्जाक हैं। नित्यको भज कहते हैं। र्ज का अर्थ ब्रह्म वा परमात्मज्ञान है। और क धातु का अर्थ कहना वा निरूपण करना है। जो सदा रहनेवाले र्ज अर्थात् परमात्मज्ञानका क अर्थात् निरूपण करें उनको भर्जाक कहते हैं। फिर जो भगवान मलि हैं। जो समस्त लोगोंके मनको हरण करनेवाली संपदाको धारण करें वे मलि कहाते हैं। फिर जो भगवान नेमि हैं। जो मनुष्योंके मोहको दूर करें उनको नेमि कहते हैं। फिर जो भगवान् नमि हैं। न का अर्थ नहीं है और मि का अर्थ जानना वा प्रमाणमें लाना है। जो साधारण मनुष्योंके ज्ञानमें न आसकें उनको नमि कहते हैं। फिर जो भगवान सुमति हैं। सु श्रेष्ठको कहते हैं, मा लक्ष्मीको कहते हैं और ति पूजाको कहते हैं। जिनकी त अर्थात पूजा सुम अर्थात् श्रेष्ठ लक्ष्मीको धारण करनेवाली हो उनको सुमति कहते हैं। फिर जो भगवान मन अर्थात अयन-शमन य हैं। एस व अनन्तनाथ स्वामी चौदहवें तीर्थंकर श्री जगन्नाथधीश अर्थात जैन धर्मके धुरंधर विद्वानोंकी रक्षा करें। जगत समस्त वा तीनों लोक को कहते हैं। नाथ स्वामीको कहते हैं। यहांपर नाथ शब्दसे सब धर्मोंके स्वामी जैन धर्मको लेना चाहिए। जो तीनों लोकोंमें सब धर्मोंका स्वामी हो ऐसे जैन मतको जैन धर्मको श्रीजगन्नाथ कहते हैं और धीश शब्दका अर्थ पंडित है।

इति अनन्तनाथस्तुति ॥

और उत्तम क्षमा आदि दश प्रकारके धर्मोंकी सेवा करें उनको श्रेयान्श्री
कहते हैं। अर्हंतदेवकी और धर्मकी सेवा करनेवाले इन्द्रोंको श्रेयान्श्री-
वासु कहते हैं। उनके द्वारा जो पूज्य हों उनको श्रेयान्श्रीवासुपूज्य
कहते हैं। फिर जो भगवान वृषभजिनपति हैं। उ का अर्थ समुद्र है।
ऋ का अर्थ धर्म है। जिनका ऋ अर्थात् धर्म उ अर्थात् समुद्रके समान
गंभीर हो उनको वृ कहते हैं। ष का अर्थ श्रेष्ठ है और भ का अर्थ न-
क्षत्र है। अतः श्रेष्ठ नक्षत्रोंको अर्थात् ज्योतिषी देवोंको षभ
कहते हैं। जो समुद्रके समान गंभीर धर्म को पालन करने वाले
ज्योतिषी देव हों उनको वृषभ कहते हैं। जिन का अर्थ
नारायण है। नारायण कहनेसे भगवान् अनंतनाथके समयमें होनेवाले
पुरुषोत्तम नारायणको और उनके सम्बन्धसे बलभद्र, प्रतिनारायणको भी
लेना चाहिए। जो वृषभ अर्थात् गंभीर धर्मको सेवन करनेवाले ज्योतिषी
देवोंके और जिन अर्थात् नारायण प्रतिनारायण दोनोंके स्वामी हों उन-
को वृषभजिनपति कहते हैं। फिर जो भगवान श्रीद्रुमांक हैं। श्रीका अर्थ
कल्याण अथवा शोकको दूर करना है। जिनके समवशरणमें जीवोंका कल्याण
करनेके लिए अथवा उनका शोक दूर करनेके लिए अशोकवृक्ष हो
उनको श्रीद्रुमांक कहते हैं। फिर जो भगवान धर्म हैं——अहिंसा आदि
धर्मको पालन करनेवाले हैं। अथवा अहिंसा आदि धर्मका उपदेश
देनेवाले हैं। फिर जो भगवान् हर्यक हैं। सिंह आदि जीवोंको हरि
कहते हैं। जिनके समवशरणमें सिंह हिरण आदि सब जीव इकट्ठे होकर
बैठते हों उनको हर्यक कहते हैं। फिर जो भगवान पुष्पदन्त हैं।
[illegible] ए होनेको पुष्पन कहते हैं और जीवादिक पदार्थोंको
[illegible] कहते हैं जिनके समस्त जीवादिक पदार्थ अनेकान्त वादसे
[illegible] हों उनको पुष्पदंत कहते हैं। फिर जो भगवान
मुनिसुव्रत हैं। जिनके [illegible] अनेक मुनियोंसे घिरे हों
उनको मुनिसुव्रत कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीसुपार्श्व हैं। जिनके
समीपमें समवसरणादिक लक्ष्मी और अनन्त सुख हो उनको श्रीसुपार्श्व
कहते हैं। फिर जो भगवान् शान्ति हैं। यहांपर शाम मोक्षलक्ष्मी लेनी

चाहिये। शान्ति प्राप्त होनेको कहते हैं। जो शा अर्थात् मोक्ष लक्ष्मीको प्राप्त हों उनको शान्ति कहते हैं। फिर जो भगवान पद्मप्रभ हैं। जिनके शरीर की प्रभा सुवर्णके समान हो उनको पद्मप्रभ कहते हैं। भगवान अनन्त नाथ की प्रभा भी सुवर्ण के समान है इसलिये उनको पद्मप्रभ कहते हैं। फिर जो भगवान् र अर्थात् गंभीर हैं—जिनकी दिव्यध्वनि मेघ की गर्जनाके समान अत्यंत गंभीर है इसलिये उनको र कहते हैं। फिर जो भगवान् विमलनाथके समान हों उनको विमलविभु कहते हैं। फिर जो भगवान् वर्द्धमान हैं। जो अनन्त चतुष्टयसे सदा वर्द्धमान अर्थात् वृद्धिको प्राप्त होते रहें उनको वर्द्धमान कहते हैं। फिर जो भगवान् ऋषि अर्थात् निश्चयसे अजांक हैं। निश्चयको अज कहते हैं। अं का अर्थ ब्रह्म या परमात्मज्ञान है। और क धातु का अर्थ कहना या निरूपण करना है। जो सदा रहनेवाले अं अर्थात् परमात्मज्ञानका क अर्थात् निरूपण करें उनको अजांक कहते हैं। फिर जो भगवान मलि हैं। जो समस्त लोगोंके मनको हरण करनेवाली संपदाको धारण करें वे मलि कहाते हैं। फिर जो भगवान नेमि हैं। जो मनुष्योंके मोहको दूर करें उनको नेमि कहते हैं। फिर जो भगवान् नमि हैं। न का अर्थ नहीं है और मि का अर्थ जानना वा प्रमाणमें लाना है। जो साधारण मनुष्योंके जानमें न आसकें उनको नमि कहते हैं। फिर जो भगवान सुमति हैं। सु श्रेष्ठको कहते हैं, मा लक्ष्मीको कहते हैं और ति पूज्यको कहते हैं। जिनको [illegible] अर्थात् पूज्य सुम अर्थात् श्रेष्ठ लक्ष्मीको धारण करें [illegible] कहते हैं। फिर जो भगवान मन अर्थात् [illegible] हैं। [illegible] अनन्तनाथ स्वामी चौदहवें तीर्थंकर [illegible] अर्थात् [illegible] धर्मके धुरंधर विद्वानोंकी रक्षा करें। [illegible] कहते हैं। नाथ स्वामीको कहते हैं। [illegible] नाथ [illegible] जैन धर्मको लेना चाहिए। जो [illegible] स्वामी हो ऐसे जैन मतको जैन धर्मको [illegible] करते हैं और [illegible] शब्दका अर्थ पंडित है।

इति अनन्तनाथस्तुति।

—

और उत्तम क्षमा आदि दश प्रकारके धर्मोंकी सेवा करें उनको श्रेयान्श्री कहते हैं। अर्हंतदेवकी और धर्मकी सेवा करनेवाले इन्द्रोंको श्रेयान्श्री-वासु कहते हैं। उनके द्वारा जो पूज्य हों उनको श्रेयान्श्रीवासुपूज्य कहते हैं। फिर जो भगवान वृषभजिनपति हैं। उ का अर्थ समुद्र है। ऋ का अर्थ धर्म है। जिनका ऋ अर्थात् धर्म उ अर्थात् समुद्रके समान गंभीर हो उनको वृ कहते हैं। ष का अर्थ श्रेष्ठ है और भ का अर्थ नक्षत्र है। अतः श्रेष्ठ नक्षत्रोंको अर्थात् ज्योतिषी देवोंको षभ कहते हैं। जो समुद्रके समान गंभीर धर्म को पालन करने वाले ज्योतिषी देव हों उनको वृषभ कहते हैं। जिन का अर्थ नारायण है। नारायण कहनेसे भगवान् अनंतनाथके समयमें होनेवाले पुरुषोत्तम नारायणको और उनके सम्बन्धमें बलभद्र, प्रतिनारायणको भी लेना चाहिए। जो वृषभ अर्थात् गंभीर धर्मका सेवन करनेवाले ज्योतिषी देवोंके और जिन अर्थात् नारायण प्रतिनारायण दोनोंके स्वामी हों उनको वृषभजिनपति कहते हैं। फिर जो भगवान श्रीद्रुमाक हैं। श्रीका अर्थ कल्याण अथवा शोकको दूर करना है। जिनके समवसरणमें जीवोंका कल्याण करनेके लिए अथवा उनका शोक दूर करनेके लिए अशोकवृक्ष हो उनको श्रीद्रुमाक कहते हैं। फिर जो भगवान धर्म हैं—अहिंसा आदि धर्मका प्रचार करनेवाले हैं। अथवा अहिंसा आदि धर्मका उपदेश देनेवाले हैं। फिर जो भगवान हर्यंक हैं। सिंह आदि जीवोंको हरि कहते हैं। जिनके समवसरणमें सिंह हिरण आदि सब जीव इकट्ठे होकर बैठते हों उनको हर्यंक कहते हैं। फिर जो भगवान पुष्पदन्त हैं। [illegible] होनेको पुष्पन कहते हैं और जीवादिक पदार्थोंको दन्त कहते हैं। जिनके मतमें जीवादिक पदार्थ अनेकान्त वादसे पुष्पित हों उनको पुष्पदन्त कहते हैं। फिर जो भगवान मुनिसुव्रत हैं। जिनके [illegible] अनेक मुनियोंसे घिरे हों उनको मुनिसुव्रत कहते हैं। फिर जो भगवान श्रीसुपार्श्व हैं। जिनके समीपमें समवसरणादिक लक्ष्मी और अनन्त सुख हो उनको श्रीसुपार्श्व कहते हैं। फिर जो भगवान् शान्ति हैं। यहांपर शान्ति मोक्षलक्ष्मी लेनी

चाहिये। अग्नि प्राप्त होनेको कहते हैं। जो शा अर्थात् मोक्ष लक्ष्मीको प्राप्त हों उनको शान्ति कहते हैं। फिर जो भगवान् पद्मप्रभ हैं। जिनके शरीर की प्रभा सुवर्णके समान हो उनको पद्मप्रभ कहते हैं। भगवान् अनन्त नाथ की प्रभा भी सुवर्ण के समान है इसलिये उनको पद्मप्रभ कहते हैं। फिर जो भगवान् र अर्थात् गंभीर हैं—जिनकी दिव्यध्वनि मेघ की गर्जनाके समान अत्यंत गंभीर है इसलिये उनको र कहते हैं। फिर जो भगवान् विमलनाथके समान हों उनको विमलविभ कहते हैं। फिर जो भगवान् वर्द्धमान हैं। जो अनन्त चतुष्टयसे सदा वर्द्धमान अर्थात् वृद्धिको प्राप्त होते रहें उनको वर्द्धमान कहते हैं। फिर जो भगवान् अपि अर्थात् निश्चयसे अजांक हैं। निश्चयको अज कहते हैं। अं का अर्थ ब्रह्म वा परमात्मज्ञान है। और क धातु का अर्थ कहना वा निरूपण करना है। जो सदा रहनेवाले अं अर्थात् परमात्मज्ञानका क अर्थात् निरूपण करें उनको अजांक कहते हैं। फिर जो भगवान् मलि हैं। जो समस्त लोगोंके मनको हरण करनेवाली मेरहाको धारण करें वे मलि कहाते हैं। फिर जो भगवान नेमि हैं। जो मनुष्योंके मोहको दूर करें उनको नेमि कहते हैं। फिर जो भगवान् नमि हैं। न का अर्थ नहीं है और मिका अर्थ जानना वा प्रमाणमें लाना है। जो साधारण मनुष्योंके ज्ञानमें न आनेके उनका नमि कहते हैं। फिर जो भगवान सुमति हैं। सु श्रेष्ठको कहते हैं, मा लक्ष्मीको कहते हैं और ति पूजाको कहते हैं। जिनकी ति अर्थात् पूजा सुम अर्थात् श्रेष्ठ लक्ष्मीको धारण [illegible] हो उनको सुमति कहते हैं। फिर जो भगवान सत् अर्थात् [illegible] हैं। [illegible] अनन्तनाथ स्वामी चौदहवें तीर्थंकर भी जैन धर्मके अर्थात् जैन धर्मके धुरंधर विद्वानोंकी रक्षा करें। [illegible] करते हैं। नाथ स्वामीको कहते हैं। [illegible] नाथ [illegible] सब [illegible] स्वामी जैन धर्मको ऐसा चाहिए [illegible] सब [illegible] स्वामी हो ऐसे जैन मतको जैन धर्मका [illegible] करते हैं और [illegible] शब्दका अर्थ [illegible] है

इति अनन्तनाथस्तोत्र।

अथ धर्मनाथस्तुतिः ।

श्रेयान् श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमाङ्कोऽथ धर्मो,
हर्यङ्कः पुष्पदंतोमुनिसुव्रतजिनोऽनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः ।
शांतिः पद्मप्रभोऽरोविमलविभुरसौ वर्द्धमानोऽप्यजाङ्को—
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ।

टीका—अथानन्तनाथस्तुत्यनन्तरम् । धर्मः धर्मनाथ पंचदशतीर्थनायकः । अथवा उ. अहो हे धर्म हे धर्मनाथ हे जगन्नाथ हे जगत्पते । तु पुनः त्वं मां धीरं जगन्नाथनामानं पंडितम् । अव रक्ष । किंलक्षण श्रेयान् । सर्वदेवेषु श्रेष्ठः । मुद्गः श्रीवासुपूज्यः । श्रिया सम्पदा वा वा। असवः प्राणा येषां ते श्रीवासवः सुखिनः । श्रीवासुभिः पूज्यः श्रीवासुपूज्यः । ' वो दन्तौष्ठ्यस्तयोष्ठ्योपि वरुणे वारुणे वरे । ' मुद्गः वृषभजिनपतिः । वृषेण मान्तीति वृषभाः ते च ते जिनाः अरिष्टसेनादयश्चित्रन्यारिगणधरास्तेषां पतिः वृषभजिनपतिः । भूयः श्रीद् । श्रियं मोक्षलक्ष्मीमयति गच्छति श्रीत् । मुद्गः रुमांकः । रु भयं अर्थात संसारभयं तस्य मं मोघवृत्तिर्निष्फलवृत्तिरिति रुमम् । रुमं अंके जनानां यस्मादिति रुमांक । ' मं मौलौ मोघवृत्तौ मं ' । भूयः हर्यंकः हरिः पुरुषसिंह—नारायणः अर्थवशात् सुदर्शनवलभद्रमधुकीटाभिधः प्रतिनारायणस्तेऽङ्के यस्य स हर्यंकः । अथवा हरी मघवत्सनत्कुमाराभिधौ चक्रिणौ अंके यस्य स हर्यंकः । पुनः पुष्पदन्तः । पुष्पन् पुष्टिं गच्छन् अन्तो जिनमततीर्थधर्मो यस्मादिति पुष्पदन्तः । तदुक्तं ' धर्मतीर्थमनघ प्रवर्तयन् धर्म इत्यनुमतः सतां भवान् ' इति । ' अन्तः पदार्थमार्गाप्यधर्मसन्त्वव्यतीतिषु ' । पुनः मुनिसुव्रतजिनः । मुना बन्धनेन अर्थवशात ज्ञानावरणेन सहिता ना नरा अनुत्पन्नकेवलज्ञानास्ते सुव्रताः परिव्रता जिना गणधरा यस्य स मुनिसुव्रतजिनः । " दीर्घहस्वौ मुम् शब्दौ बन्धनार्थे त्रिलिङ्गिकौ " इति ।

अथ इकारश्चपुनः । पुनः अनन्तशाक् अनन्तसदृश इत्यर्थः । अथवा अनन्तयोर्मध्यमनन्तकुमारयोश्चक्रिणोर्धाग् यस्य सोनन्तशाक् । पुनः श्रीसुपार्श्वः । श्रिया शोभनौ पार्श्वौ यस्य स श्रीसुपार्श्वः । पुनः शान्तिः । श ऋषयः पूजनार्थमायातः अन्तौ अन्तिके यस्य स शान्तिः । "श सुखे शोभने शांते" । पुनः पद्मप्रभः सुवर्णवर्णः । पुनः अर मद्भिर्यते गम्यते इति अरः । पुनः विमलविभुः । विगता मा मानं यस्या इति विमा मा सा लक्ष्मीर्येषां ते विमलास्तेषां इन्द्रादीनां विभु विमलविभुः । पुनः असौवर्द्धमानः । मा लक्ष्मी । न मा अमा तस्या उ पीडने असौः अनन्तसुखं येन वर्द्धमानः असौवर्द्धमानः । पुनः अप्यजांकोमल्लिः । नास्ति पि भयं संसारभयं यस्मादिति अपिः । अजो मोक्षो अंके यस्मादिति अजांकं रत्नत्रयं दर्शनज्ञानचारित्रलक्षणं निश्चयव्यवहारभेदेन । अपि च तद् अजांकं अप्यजांकं संसारसमरणविनाशकारि रत्नत्रयम् । तदेव उ समुद्रः इति अप्यजांकोः तं मल्लते धिमर्तीति अप्यजांकोमल्लिः । पुनः नेमि । ईः कुत्सार्थकः । इयः कुत्सार्थका बौद्धनैयायिकसांख्यदर्शनेमोपिकचार्वाकजैमिनीयागमास्तेषु नरेषु ईः कर्मपदभूताः मिनाति हरतीति नेमिः । पुनः नमिः । नास्ति मि परिमाण अस्य नमि । पनः मन शास्वतसुखम-गन । पुनः सुमतिः । शोभने मे प्रत्यक्षपरोक्षलक्षणे प्रमाणे एव तिर्महाधन यस्य स सुमति ।

इति श्री [illegible] अगन्नाथेन विरचित [illegible] [illegible]-भूषिता [illegible]

[illegible] ।

पंद्रहवें तीर्थंकर [illegible] स्तुति

अन्वयः अथ श्रेयान श्रीवासुपूज्यः वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकः हर्षंक पुष्पदन्तः मुनिसुव्रतजिनः अनन्तशाक श्रीसुपार्श्वः शान्तिः पद्मप्रभः अरः विमलविभुः असौवर्द्धमानः अप्यजांकोमल्लि

नेमिः नमिः मन सुमतिः उः अगस्त्राय धर्म तु मां धीरं अरा।

अर्थः—अब श्री अनन्तनाथको स्तुति के बाद भगवान श्रीधर्मनाथ की स्तुति करते हैं। जो भगवान् धर्मनाथ स्वामी श्रेयान् हैं सब देवोंमें श्रेष्ठ हैं। फिर जो भगवान श्रीवासुपूज्य हैं। श्री शब्दको कहते हैं। वाका अर्थ श्रेष्ठ है। और असुका अर्थ प्राण है। जिनके प्राण श्री अर्थात् सम्पत्तिसे व भक्ति श्रेष्ठ हैं ऐसे मुनी जीवोंको श्रीवासु कहते हैं। ऐसे मुनियोंके द्वारा जो पूज्य हों उन्हें श्रीवासुपूज्य कहते हैं। फिर जो भगवान वृषभजिनपति हैं। धर्मसे सुशोभित होनेवाले गणधरोंको वृषभजिन कहते हैं। ऐसे गणधरोंके स्वामीको वृषभजिनपति कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीन् हैं। जो मोक्षलक्ष्मीको प्राप्त हों उनको श्रीन् कहते हैं। फिर जो भगवान् स्मांक हैं। स शब्दका अर्थ भय है। भय शब्दसे यहांपर संसारका भय लेना चाहिये। म शब्दका अर्थ मोक्षवृत्ति अथवा निष्फल होना है। इस प्रकार स्म शब्दका अर्थ संसारके भयका निष्फल होना है। जिनके समीपमें रहकर लोगोंका संसारसंबंधी भय निष्फल हो जाय उनको स्मांक कहते हैं। फिर जो भगवान हर्यंक है। जिनके समीपमें प्रसिद्ध नारायण सुदर्शन बलभद्र और मधुक्रीड प्रतिनारायण हों उनको हर्यंक कहते हैं। अथवा जिनके समयमें मघवा और सनत्कुमार नामक चक्रवर्ती हुए हों उनको हर्यंक कहते हैं। फिर जो भगवान पुष्पदन्त हैं। जिनसे जैनधर्म रूपी तीर्थ पुष्ट हो उनको पुष्पदन्त कहते हैं। धर्मनाथके पूर्व अर्ध पल्यतक धर्मकी व्युच्छित्ति रही थी उसको दूर कर भगवान धर्मनाथने फिरसे जैनधर्मकी प्रवृत्ति की इसलिये उनको पुष्पदन्त कहते हैं। फिर जो भगवान् मुनिसुव्रतजिन हैं। मु शब्द का अर्थ बंध है और बंध शब्दसे ज्ञानावरण आदि घातिया कर्मोंका बंध लेना चाहिये। न शब्द का अर्थ मनुष्य है। यद्यपि मुनिसुव्रत शब्दमें नि है तथापि यहांपर इकार का अर्थ नहीं लेते हैं। ऐसे शब्दको च्युत या छूटा हुआ कहते हैं। ज्ञानावरणादिकर्मोंके बंध सहितको मुनी कहते हैं। सुव्रत घिरे रहनेको

कहते हैं। जिनके लिये अर्थात् गणधरदेव प्रमुख ज्ञानियोंके साथ समवसरणमें विराजमान हों उनको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं। फिर जो भगवान् अनन्तवाक् हैं। जो भगवान् अनन्तनाथके समान हों उनको अनन्तवाक् कहते हैं। अथवा मघवा और सनत्कुमार चक्रवर्तियोंको अनन्त कहते हैं। जिनकी वाणी इन दोनों चक्रवर्तियोंके लिये हो उनको अनन्तवाक् कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीसुपार्श्व हैं। जिनके पार्श्वोंका भाग बहुत ही सुशोभित हो उनको श्रीसुपार्श्व कहते हैं। फिर जो भगवान् शांति हैं। श सूर्यको कहते हैं और अन्ति समीपको कहते हैं। जिनके समीपमें पूजा करनेके लिये आया हुआ सूर्य उपस्थित हो उनको शांति कहते हैं। फिर जो भगवान् पद्मप्रभ हैं। सुवर्णको पद्म कहते हैं। भगवान् धर्मनाथके शरीरकी प्रभा सुवर्णके समान है इसलिये उनको पद्मप्रभ कहते हैं। फिर जो भगवान् अर हैं। ऋ धातुका अर्थ जानना है। ऋ धातुसे अर बना है। जो सज्जनोंके द्वारा जाने जांय उनको अर कहते हैं। फिर जो भगवान् विमलविभु हैं। वि का अर्थ रहित है। म का अर्थ मान है और ल का अर्थ लक्ष्मी है। जो मान रहित हो उनको विम कहते हैं तथा मान रहित लक्ष्मीको विमला कहते हैं। जिनके ऐसी लक्ष्मी हो उन इन्द्रादिकोंको विमल कहते हैं। इन्द्रादिकोंके स्वामीको विमलविभु कहते हैं। जो भगवान् असमौवर्द्धमान हैं। अस लक्ष्मीको कहते हैं। लक्ष्मीके अभावको दुःख वा दरिद्रताको अस कहते हैं। उ का अर्थ [illegible] है। नाश करना है। दुःख वा दरिद्रताके सर्वथा नाश होनेसे अर्थात् अनन्त सुखके प्राप्त होनेको असौ कहते हैं। अनन्त सुखमें जो वर्द्धमान अर्थात् सदा बढ़ते रहें उनको भी असमौवर्द्धमान कहते हैं। फिर जो भगवान् अपजांकपति हैं। जिनसे संसार का भय न हो उनको अपि कहते हैं। जिनके समीप रहनेसे अज अर्थात् मोक्ष प्राप्त हो जाय उनको अजांक कहते हैं। रत्नत्रयसे मोक्षकी प्राप्ति होती है इसलिये रत्नत्रयको अजांक कहते हैं। तथा यह अजांक अपि

अर्थात् संसारके भयका नाश करनेवाला है इसलिये इसको अप्य... कहते हैं। इस प्रकार संसारके परिभ्रमणको नाश करनेवाले रत्नत्रयको ... प्यजांक कहते हैं। ज शब्दका अर्थ समुद्र है। जो रत्नत्रय समुद्रके ... मान गंभीर हो उसको अप्यजांको कहते हैं। जो ऐसे रत्नत्रयको ... करें उनको अप्यजांकोमलि कहते हैं। फिर जो भगवान् नेमि हैं ... शब्दका अर्थ मनुष्य है। ई शब्दका अर्थ कुत्सित वा मिथ्या है ... नैयायिक सांख्य शैव वैशेषिक चार्वाक जैमिनीय आदि मिथ्या शास्त्र... ई कहते हैं। तथा मि का अर्थ दूर करना है। जो मनुष्योंके मि... शास्त्रोंको दूर करें उनको नेमि कहते हैं। भगवान् धर्मनाथके धर्मो... से भी अनेक भव्य जीवोंका मिथ्यात्व दूर हुआ है इसलिये उनको ... कहते हैं। फिर जो भगवान् नमि हैं। मि का अर्थ परिमाण है। ... नका कोई परिमाण न हो उनको नमि कहते हैं। फिर जो भगवान् ... हैं, सदा रहनेवाले अनन्त सुखमें निमग्न हैं। फिर जो भगवान् सु... हैं। ति का अर्थ धन है। श्रेष्ठ प्रमाण हो जिनका महाधन हो उ... सुमति कहते हैं। ऐसे वे जगन्नाथ अर्थात् तीनों लोकों के ... धर्मनाथ पंद्रहवें तीर्थंकर मुझ धीर अर्थात् पंडित की ... विद्वानकी रक्षा करो।

इति धर्मनाथस्तुति ॥

अथ श्री शांतिनाथस्तुतिः ।

श्रेयान श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपति ...
हर्यंकः पुष्पदंतोमुनिसुव्रतजिनोऽनंतवाक् ...
शांतिः पद्मप्रभोऽरोविमलविभुरसौ ...
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु ... श्रीजगन्नाथ ...

टीका:— असौ लोकनाथः शान्तिः ...
तिः श्रीजगन्नाथधीरमपि जगन्नाथनामान ...

आगे सोलहवें तीर्थंकर श्रीशान्तिनाथ की स्तुति करते हैं।

अन्वयः—श्रेयान् श्रीवासुपूज्यः अनुपमजिनपतिः श्रीद्रुमांकः अपवर्गः हर्यंकः पुष्पदन्तः अनन्तवाक्श्रीसुपार्श्वः पद्मप्रभः अरः विमलविभुः अमुनिसुव्रतजिनः अजांकः शान्तिः मल्लिः ईमिः मिः मांगुमविः सन् वर्द्धमानः अमी शान्तिः श्रीजगन्नाथधीरं अपि किं न भवतु इति न किंतु भवतु एव ।

अर्थ—जो भगवान श्री शान्तिनाथ स्वामी श्रेयान् हैं। शृ धातुका अर्थ हिंसा करना है। जो कर्मोंका नाश करें ऐसे सम्यग्दृष्टियोंको शृ कहते हैं। [illegible]का अर्थ धारण करना है। य शब्दका अर्थ यत्न है। जिनके निरूपण किये हुए यत्न अर्थात् उत्तम क्षमा आदि धर्म सम्यग्‌दृष्टियोंके द्वारा यथार्थ रीतिसे धारण किये जाते हों उनको श्रेयान् कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीवासुपूज्य हैं। जो छहों खंडों के सब देशोंमें उत्पन्न होनेवाली लक्ष्मी में ई अर्थात् मोहित हो रहे हैं ऐसे राजाओंको भी कहते हैं। व का अर्थ निवास स्थान है और असु धातुका अर्थ दूर करना है। श्री अर्थात् जो समस्त देशोंकी लक्ष्मीमें मोहित होनेवाले राजा [illegible] व अर्थात् निवास स्थानको

वाचः शास्त्रंताः पञ्च म्लेच्छाः । तेषां श्रियः कन्याहस्तिसुवर्ण-वस्त्रादयः सुपार्श्वे यस्य सोऽनन्तवाक्श्रीसुपार्श्वः । पुनः पद्मप्रभः हाटकक्रान्तिः । अथवा पद्मैः पद्मादिभिर्नवनिधिभिः प्रभाति शोभते इति पद्मप्रभः । उक्तं च " पद्मः कालो महाकालः सर्वरत्नश्च पाण्डुकः । नैःसर्पो मागव शंखः पिंगलो निवशे नव । एते चक्रिणां भवन्ति । पुनः अर । धर्मरथचक्रे अर इव अरः । " यस्मिन्नभूद्राजनि राजचक्रं मुनौ दयादीधितिधर्मचक्रम् " इति मुहुः विमलविभुः विशिष्टाश्च ते मा मन्दिराणीति विमाः । " मो मन्त्रे मन्दिरे माने " । विमानां विमेषु या ला लक्ष्मीर्येषां ते विमलाः षट्खण्डमध्यस्थमहाराष्ट्रपनयां राजानस्तेषां विभुः विमलविभुः । पुनः अमुनिसुव्रतजिनः । न मुनिभिः सुव्रतो जिनो यस्मादित्यमुनिसुव्रतजिन । पुनः वर्द्धमानः । सुखेन वर्द्धमानः । पुन अजांकः । न जा जेता सिंहस्येति अज अर्थवशान्मृगः । अजः अंके यस्य सोऽजांकः । " शान्ति स वः शान्तिजिनः करोतु विभ्राजमानो मृगलाञ्छनेन " । पुन मल्लि कर्मारिजये महामल्लः । पुनः ईभिः दिदृक्षमाणानां चक्रादीनामिव पापं भिनत्ति भक्षेरयति ईभि । " ई कुत्सार्थेऽपि पापेऽपि निषेधे नयनभ्रमे " । मुहुः मिः । केवलज्ञानेन जगन्ति मन इति मि । भूय सांशुमति । सांशवः प्रमाणकिरणा मा मन्त्रा मयोपदआदाननादयो यस्यां सा सांशुमा । सांशुमा नि पूजा यस्य स सांशुमति । पुनः सर्वशान्तव । एतन सादृश्यः श्रीशान्तिनाथो नामादिभिरस्मार्कं पूज्य इति ।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुत्या काशी[illegible]भट्टारक श्रीजिनेन्द्रकीर्ति
[illegible]बुधपरमानन्देन विरचितायां षोडशजिनश्रीशान्तिनाथ
[illegible] सम्पूर्ण ।

वाचः शास्त्रताः पञ्च म्लेच्छाः । तेषां श्रियः कन्याहस्तिसुवर्ण-वस्त्रादयः सुरार्थे यस्य सोऽनन्तवाक्श्रीसुरार्थः । पुनः पद्मप्रभः हाटककान्तिः । अथवा पद्मैः पद्मादिभिर्नवनिधिभिः प्रभाति शोभते इति पद्मप्रभः । उक्तं च " पद्मः कालो महाकाल- सर्वरत्नश्च पाण्डुकः । नैःसर्पो माणवः शंखः पिंगलो निधयो नव । एते च-क्रिणां भवन्ति । पुन अरः । धर्मरथचक्रे अर इव अरः । " यस्मि-न्प्रद्राजनि राजचक्रं मुनौ दयादीधितिधर्मचक्रम् " इति सुहृः विमलविभुः विशिष्टाश्च ते मा मन्दिराणोति विमाः । " मो मन्त्रे मन्दिरे माने " । विमानां विमेषु वा ला लक्ष्मीर्येषां वे विमला पट्खण्डमध्यस्थमहागम्भूपनयां राजानस्तेषां विभुः विमल-विभुः । पुनः अमुनिमुव्रतजिनः । न मुनिभिः सुव्रतो जिनो यस्मादित्यमुनिसुव्रतजिन । पुनः वर्द्धमानः । सुखेन वर्द्धमानः । पुन अजांकः । न जा जेना मिहरयेति अज अर्थरशान्मृगः । अजः अंके यस्य सोऽजाकः । " शान्ति स वः शान्तिजिनः करोतु वि-भ्राजमानो मृगलाञ्छनेन " । पुन मल्लि कर्मारिजये महामल्लः । पुन ईमिः दिदृक्षमाणानां यक्षादीनामिव पाप मिनुते प्रक्षेपयति ईमि । " ई कुन्थावेषि पावति निवधे नयनभ्रमे " । सुहृ मिः । केवलज्ञानेन जगन्निमन शंति मि । मय मानुमति । मांहरः प्रमार्गकिरणा मा मन्ता मध्यिरश्मादहाननादया यस्यां सा मानुमा । मा नुमा नि पूजा यस्य स मानुमति । पुनः मद्र नाम्बर । एवन मासम्यः श्राशान्तिनाथा नामादिभिरस्माकं पूज्य इति ।

इति श्रीचतुर्विंशति [illegible] महारक [illegible] श्रीजिनेन्द्रसूरि [illegible] पञ्चतीर्थजिनस्थानिनाम [illegible] संपूर्ण ।

आगे सोलहवें तीर्थंकर श्रीशान्तिनाथ की स्तुति करते हैं।

अन्वयः—श्रेयान् श्रीवासुपूज्यः अवृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकः अथधर्मः हर्यंकः पुष्पदन्तः अनन्तवाक्‌श्रीसुपार्श्वः पद्मप्रभः अरः विमलविभुः अमुनिसुव्रतजिनः अजांकः शान्तिः मल्लिः ईमिः मिः सांसुमतिः सत् वर्द्धमानः असौ शान्तिः श्रीजगन्नाथधीरं अपि किं न अवतु इति न किंतु अवतु एव ।

अर्थ—जो भगवान श्री शान्तिनाथ स्वामी श्रेयान् हैं। शृ धातुका अर्थ हिंसा करना है। जो कर्मोंका नाश करें ऐसे सम्यग्दृष्टियोंको शृ कहते हैं। धृञ्‌ शब्दका अर्थ धारण करना है। य शब्दका अर्थ यथार्थ है। जिनके निरूपण किये हुए अन अर्थात् उत्तम क्षमा आदि धर्म सम्यग्दृष्टियोंके द्वारा यथार्थ रीतिसे धारण किये जाते हों उनको श्रेयान कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीवासुपूज्य हैं। जो छहों खंडों के सब देशोंमें उत्पन्न होनेवाली लक्ष्मी में ई अर्थात् मोहित हो रहे हैं ऐसे राजाओंको श्री कहते हैं। व का अर्थ निवास स्थान है और असु धातुका अर्थ दूर करना है। श्री अर्थात् जो समस्त देशोंकी राज्यलक्ष्मीमें मोहित होनेवाले राजा महाराजाओंके व अर्थात् निवास स्थानको असु अर्थात् छुड़ा देवें ऐसे चक्रवर्तीको श्रीवास कहते हैं। ऊ का अर्थ तर्क वितर्क करना है। जो श्रीवास अर्थात् चक्रवर्तीके द्वारा इसको जीतूं इसको मारूं इस प्रकार उ अर्थात् तर्क वितर्क उठनेको श्रीवासु कहते हैं। पू का अर्थ पवित्र है और ज्याका अर्थ पृथ्वी है। जिनके लिए यह समस्त पृथ्वी श्रीवासु अर्थात् चक्रवर्तीके बलसे पू अर्थात् पवित्र हो—निष्कंटक हो उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं। फिर जो भगवान् अवृषभ जिनपति हैं साधारण मिथ्यादृष्टियोंको जिन कहते हैं। जिनके वृष अर्थात् श्रेष्ठ भ अर्थात् मिथ्यादृष्टियोंके भ अर्थात् न हों उनको अवृषभ कहते हैं। जिन्होंने समस्त क्रियाओंका त्याग कर महाव्रत धारण करलिया हो ऐसे गणधरोंको अवृषभ जिन कहते हैं और उनके स्वामीको अवृषभजिनपति कहते हैं। ऐसे व भगवान् वृषभजिनपति हैं।

वाचः शास्त्रताः पञ्च म्लेच्छाः । तेषां श्रियः कन्याहस्तिसुवर्ण-वस्त्रादयः सुपार्श्वे यस्य सोऽनन्तनाथश्रीसुपार्श्वः । पुनः पद्मप्रभः हाटककान्तिः । अथवा पद्मैः पद्मादिभिर्नवनिधिभिः प्रभाति शोभते इति पद्मप्रभः । उक्तं च " पद्मः कालो महाकालः सर्वरत्नश्च पाण्डुकः । नैःसर्पो मागरः शंखः पिंगलो निधयो नव । एते चक्रिणां भवन्ति । पुनः अरः । धर्मरथचक्रे अर इव अरः । " यस्मिन्नभूद्राजनि राजचक्रं मुनौ दयादीधितिधर्मचक्रम् " इति मुहुः विमलविभुः विशिष्टाश्च ते मा मन्दिराणीति विमाः । " मो मन्त्रे मन्दिरे माने " । विमानां विभेषु वा ला लक्ष्मीर्येषां ते विमलाः षट्खण्डमध्यस्थमहाराष्ट्रपतयो राजानस्तेषां विभुः विमलविभुः । पुनः अमुनिसुव्रतजिनः । न मुनिभिः सुव्रतो जिनो यस्मादित्यमुनिसुव्रतजिनः । पुनः वर्द्धमानः । सुखेन वर्द्धमानः । पुनः अजाङ्कः । न जः जेता सिंहस्येति अजः अर्थवशान्मृगः । अजः अंके यस्य सोऽजाङ्कः । " शान्तिं स वः शान्तिजिनः करोतु विभ्राजमानो मृगलाञ्छनेन " । पुनः मल्लिः कर्मारिजये महामल्लः । पुनः ईभिः दिदृक्षमाणानां यूकादीनामियं पापं मिनुते प्रक्षेपयति ईमिः । " ई कुत्सार्थेऽपि पापेऽपि निषेधे नयनभ्रमे " । मुहुः मिः । केवलज्ञानेन जगन्निमाति इति मिः । भूय मांशुमति । मांशवः प्रमाणकिरणा मा मन्त्रा सर्वोपद्रवाह्वाननादयो यस्यां सा मांशुमा । मांशुमा ति पूजा यस्य स मांशुमतिः । पुनः सतः शाश्वतः । एतेन सामस्त्यः श्रीशान्तिनाथो नामादिभिरस्माकं पूज्य इति ।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुतापञ्चाक्षरवर्णकारिकायां भट्टारकश्रीनरेन्द्रकीर्ति छात्रबुधजगन्नाथेन विरचितायां षोडशजिनश्रीशान्तिनाथ स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

आगे सोलहवें तीर्थंकर श्रीशान्तिनाथ की स्तुति करते हैं।

अन्वयः—श्रेयान् श्रीवासुपूज्यः अनृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकः अथधर्मः हर्यंकः पुष्पदन्तः अनन्तवाक्श्रीसुपार्श्वः पद्मप्रभः अरः विमलविभुः अमुनिसुव्रतजिनः अजांकः शान्तिः मल्लिः ईमिः मिः मांशुमतिः सत् वर्द्धमानः अमी शान्तिः श्रीजगन्नाथधीरं अपि किं न अवतु इति न किंतु अवतु एव ।

अर्थ—जो भगवान् श्री शान्तिनाथ स्वामी श्रेयान् हैं। शृ धातुका अर्थ हिंसा करना है। जो कर्मोंका नाश करें ऐसे सम्यग्दृष्टियोंको शृ कहते हैं। एतच्छब्दका अर्थ धारण करना है। य शब्दका अर्थ यथार्थ है। जिनके निरूपण किये हुए आन अर्थात् उत्तम क्षमा आदि धर्म सम्यग्दृष्टियोंके द्वारा यथार्थ रीतिसे धारण किये जाते हों उनको श्रेयान् कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीवासुपूज्य हैं। जो छहों खंडों के सब देशोंमें उत्पन्न होनेवाली लक्ष्मी में ई अर्थात् मोहित हो रहे हैं ऐसे राजाओंको श्री कहते हैं। व का अर्थ निवास स्थान है और अस् धातुका अर्थ दूर करना है। श्री अर्थात् जो समस्त देशोंकी राज्यलक्ष्मीमें मोहित होनेवाले राजा महाराजाओंके व अर्थात् निवास स्थानको अस् अर्थात् छुड़ा देवें ऐसे चक्रवर्तियोंको श्रीवास कहते हैं। उ का अर्थ वर्क वितर्क करना है। जो श्रीवास अर्थात् चक्रवर्तियोंके द्वारा इसको जीतूं इसको मारूं इस प्रकार अर्थात् तर्क वितर्क उठनको श्रीवासु कहते हैं। पू का अर्थ पवित्र है और ज्यका अर्थ पृथ्वी है। जिनके फिर यह समस्त पृथ्वी श्रीवासु अर्थात् चक्रवर्तिके बिना पू अर्थात् पवित्र हो—निष्कंटक हो उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं। फिर जो भगवान् अनृषभजिनपति हैं लोकालोकके पदार्थ स्थियोंका भ करन हैं। जिनके वृष अर्थात् श्रेष्ठ भ अर्थात् भावार्थियां अ अर्थात् न हों उनको अवृषभ कहते हैं। जिन्होंने समस्त क्रियाओंका त्याग कर सब मन धारण करलिया हो ऐसे गणधरोंको अनृषभजिन कहते हैं और उनके स्वामीको अनृषभजिनपति कहते हैं। भगवान् वे भगवान् वृषभजिन नाथ हैं।

वाचः शास्त्रंता: पञ्च म्लेच्छा: । तेषां श्रियः कन्याहस्तिसुवर्ण-वस्त्रादयः सुपार्श्वे यस्य सोऽनन्तवाक्श्रीसुपार्श्वः । पुनः पद्मप्रभः हाटककान्तिः । अथवा पद्मैः पद्मादिभिर्नवनिधिभिः प्रभाति शो-भते इति पद्मप्रभः । उक्तं च " पद्मः कालो महाकाल. सर्वरत्नश्च पाण्डुकः । नैःसर्पो मागव शंखः पिंगलो निधयो नव । एते च-क्रिणां भवन्ति । पुन. अर । धर्मरथचक्रे अर इव अर. । " यस्मि-न्नभूद्राजनि राजचक्रं मुनौ दयादीधितिधर्मचक्रम् " इति मुहुः विमलविभुः विशिष्टाश्च ते मा मन्दिराणोति विमाः । " मो मन्त्रे मन्दिरे माने " । विमानां विशेषु वा ला लक्ष्मीर्येषां ते विमला· षट्खण्डमध्यस्यमहाराज्यस्वपया राजानस्तेषां विभुः विमल-विभुः । पुनः अमुनिसुव्रतजिनः । न मुनिभिः सुव्रतो जिनो यस्मादित्यमुनिसुव्रतजिन । पुनः वर्द्धमानः । सुखेन वर्द्धमानः । पुन अजांकः । न जा येना सिंहस्येति अज अर्थवशान्मृगः । अजः अंके यस्य सोजांकः । " शान्ति म वः शान्तिजिन. करोतु वि-भ्राजमानो मृगलाञ्छनेन " । पुन मल्लि कर्मारिजये महामल्लः । पुन ईमिः दिदृक्षमाणानां शक्रादीनामियं पापं मिनुते प्रक्षेपयति ईमि । " ई कुत्सार्थेपि पापेपि निषेधे नयनभ्रमे " । मुहुः मिः । केवलज्ञानेन जगन्निमाति इति मि । भूप. मांशुमति । मांशवः प्रमाणकिरणा मा मन्त्रा सर्वोषटआह्वाननादयो यस्यां सा मांशुमा । मांशुमा ति पूजा यस्य स मांशुमति । पुनः सद· शास्वत । एतन मोक्षस्थः श्रीशान्तिनाथो नामादिभिरस्माकं पूज्य इति ।

इति श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरस्तुति-कारशप्रकाशिकाशा भट्टारकश्रीनेन्द्रकीर्ति छात्रबुधरत्नाश्रयेन विरचितायां षोडशजिनश्रीशान्तिनाथ स्तोत्र सम्पूर्णम् ।

वाचः शास्त्रना: पञ्च स्लेच्छाः । तेषां श्रियः कन्याहस्तिसुवर्णवस्त्रादयः सुपार्श्वे यस्य सोऽनन्तनाक्श्रीसुपार्श्वः । पुनः पद्मप्रभः हाटककान्तिः । अथवा पद्मैः पद्मादिभिर्नवनिधिभिः प्रभाति शोभते इति पद्मप्रभः । उक्तं च " पद्मः कालो महाकाल. सर्वरत्नश्च पाण्डुक: । नैःसर्पो माणव शंखः पिंगलो निधयो नव । एते चक्रिणां भवन्ति । पुन' अर.। धर्मरथचक्रे अर इव अरः । " यस्मिन्नभूद्राजनि राजचक्रं मुनौ दयादीधितिधर्मचक्रम् " इति मुहुः विमलविभुः विशिष्टाश्च ते मा मन्दिराणीति विमाः । " मो मन्त्रे मन्दिरे माने " । विमानां विमेषु वा ला लक्ष्मीर्येषां ते विमलाः षट्खण्डमध्यस्थमहाराष्ट्रस्तयां राजानस्तेषां विभुः विमलविभुः । पुनः असुनिसुव्रतजिन. । न मुनिभिः सुव्रतो जिनो यस्मादित्यमुनिसुव्रतजिन । पुनः वर्द्धमान'। सुखेन वर्द्धमानः। पुन अजांक । न जा जेना मिहस्येति अज अर्थवशान्मृगः । अजः अंके यस्य सोऽजांकः । " शान्ति म वः शान्तिजिनः करोतु विभ्राजमानो मृगलाञ्छनेन " । पुन मल्लि कर्मारिजये महामल्लः । पुनः ईभिः दिदृक्षमाणानां यक्षादीनामियं पापं मिनुते प्रक्षेपयति ईमि । " ई कुन्मार्थेऽपि पापेऽपि निषेधे नयनभ्रमे " । मुहुः मिः । केवलज्ञानेन जगन्मिमते इति मि । भूय मांशुमति । मांशवः प्रमाणकिरणा मा मन्त्रा सर्वोपद्रवाह्वाननादयो यस्यां सा मांशुमा । मांशुमा नि पूजा यस्य स मांशुमति । पुनः सत् शाश्वत । एतन मोक्षस्थः श्रीशान्तिनाथो नामादिभिरस्माकं पूज्य इति ।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुतिप्रकाशरत्नकोशप्रकाश भट्टारकश्रीनरेन्द्रकीर्तिछात्रबुधज्ञानसागरविरचिताया षोडशजिनश्रीशान्तिनाथस्तोत्र सम्पूर्णम् ।

आगे सोलहवें तीर्थंकर श्रीशान्तिनाथ की स्तुति करते हैं।

अन्वयः—श्रेयान् श्रीवासुपूज्यः अवृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकः अथधर्मः हर्यंकः पुष्पदन्तः अनन्तवाक्श्रीसुपार्श्वः पद्मप्रभः अरः विमलविभुः अमुनिसुव्रतजिनः अजांकः शान्तिः मल्लिः ईमिः मिः मांसुमतिः सत् वर्द्धमानः असौ शान्तिः श्रीजगन्नाथधीरं अपि किं न अवतु इति न किंतु अवतु एव ॥

अर्थ—जो भगवान श्री शान्तिनाथ स्वामी श्रेयान् हैं। शृ धातुका अर्थ हिंसा करना है। जो कर्मोंका नाश करें ऐसे सम्यग्दृष्टियोंको शृ कहते हैं। धाञ्शब्दका अर्थ धारण करना है। य शब्दका अर्थ यथार्थ है। जिनके निरूपण किये हुए उत्तम अर्थात् उत्तम क्षमा आदि धर्म सम्यग्दृष्टियोंके द्वारा यथार्थ रीतिसे धारण किये जाते हों उनको श्रेयान् कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीवासुपूज्य हैं। जो छहों खंडों के सब देशोंमें उत्पन्न होनेवाली लक्ष्मी में ई अर्थात् मोहित हो रहे हैं ऐसे राजाओंको श्री कहते हैं। व का अर्थ निवास स्थान है और अस् धातुका अर्थ दूर करना है। श्री अर्थात् जो समस्त देशोंकी राज्यलक्ष्मीमें मोहित होनेवाले राजा महाराजाओंके व अर्थात निवास स्थानको अस् अर्थात् छुड़ा देवें ऐसे चक्रवर्तीको श्रीवास् कहते हैं। उ का अर्थ तर्क वितर्क करना है। जो श्रीवास् अर्थात चक्रवर्तीके द्वारा "इसको जीतू इसको मारू" इस प्रकार उ अर्थात तर्क वितर्क उठनेको श्रीवासु कहते हैं। पू का अर्थ पवित्र है और ज्या का अर्थ पृथ्वी है। जिनके लिए यह समस्त पृथ्वी श्रीवासु अर्थात चक्रवर्तीके बलसे पू अर्थात् पवित्र हो—निष्कंटक हो उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं। फिर जो भगवान अवृषभजिनपति हैं। भोगोपभोगकी योग्य स्त्रियोंको भ कहते हैं। जिनके वृष अर्थात् धर्म भ अर्थात भोगस्त्रियां अ अर्थात् न हों उनको अवृषभ कहते हैं। जिन्होंने समस्त स्त्रियोंका त्याग कर संयम धारण कर लिया हो ऐसे गणधरोंको अवृषभजिन कहते हैं और उनके स्वामीको अवृषभजिनपति कहते हैं। अथवा व भगवान् वृषभाजन्[illegible]

...ये उनको पद्मप्रभ कहते हैं। फिर जो भगवान् अर हैं। धर्मरूपी
...के पहियेके लिये जो आरेके समान हों उनको अर कहते हैं। तीर्थ-
...के विहार करते समय धर्मचक्र सबसे आगे चलता है।
...र जो भगवान् विमलविभु हैं वि का अर्थ विशिष्ट वा शोभायमान
...। म का अर्थ मन्दिर है, ल का अर्थ लक्ष्मी है। वि अर्थात् विशिष्ट
...वा अधिक सुशोभित म अर्थात मन्दिरोंमें जिनकी ल अर्थात् लक्ष्मी हो
...को विमल कहते हैं। भारतवर्षके छहों खंडोंमें होनेवाले बडे बडे
...ज्यों के अधिपति राजा महाराजाओंकी लक्ष्मी श्रेष्ठ मन्दिरोंमें रहती
... इसलिये ऐसे राजा महाराजाओं को विमल कहते हैं। तथा
उनके स्वामीको विमलविभु कहते हैं। भगवान् शान्तिनाथ भी छयानवे
हजार राजाओंके स्वामी थे इसलिये उनको विमलविभु कहते हैं। फिर
जो भगवान् अमुनिसुव्रतजिन हैं। जिनके सम्बन्धसे गणधरदेव केवल
मुनियोंसे ही न घिरे रहें, मुनियोंके ही साथ न रहें किन्तु देव विद्याधर
श्रावक श्राविका सबके साथ रहें उनको अमुनिसुव्रतजिन कहते हैं।
फिर जो भगवान् अजांक हैं। अ का अर्थ नहीं है और ज का अर्थ
जीतना है। जो सिंहको न जीत सके उनको अज कहते हैं। हिरण
भी सिंहको नहीं जीत सकता इसलिये प्रकरणके वशसे हिरणको अज
कहते हैं। जिनके हिरणका चिन्ह हो उनको अजांक कहते हैं।
भगवान् शांतिनाथके चरणोंमें हिरणका चिन्ह है इसलिये
उनको अजांक कहते हैं। लिखा भी है " शान्ति म...
व शान्तिजिन करोतु विभाजमानो मृगलांछनेन " अर्थात हिरणके
चिन्हसे सुशोभित होनेवाले भगवान शांतिनाथ तीर्थंकर तुम लोगोंको
शांतिप्रदान करें। " फिर जो भगवान मल्लि हैं। जो कर्मरूपी शत्रुओं...
को जीतनेके लिये मल हों उनको मल्लि कहते हैं। फिर जो भग...
ईमि हैं। ई शब्दका अर्थ पाप है। मि का अर्थ दूर करना' ...
करना है। जो अपनी दृष्टि मात्रसे ही जूं आदि छोटे छोटे जीवों...
... अर्थात पापोंको मि अर्थात दूर कर देवें उनको ईमि कहते...

फिर जो भगवान् मि हैं। मि का अर्थ मान करना वा जानना है। जो भगवान् केवलज्ञानसे समस्त लोक अलोकको जानें, सब प्रमाण करके उनको मि कहते हैं। भगवान शांतिनाथ भी सर्वज्ञ हैं। समस्त लोक अलोकको प्रत्यक्ष जानते हैं, इसलिये उनको मि कहते हैं। फिर जो भगवान् मांशुमति हैं। मा अर्थात प्रभाकी किरणोंको मांशु कहते हैं। तथा म का अर्थ मंत्र है और ति का अर्थ पूजा है। जिनकी ति अर्थात पूजामें म अर्थात् मंत्रोच्चार आह्वानन आदि मंत्र मांशु अर्थात प्रभाकी किरणोंके समान हों उनको मांशुमति कहते हैं। फिर जो भगवान् सत् अर्थात् सदा रहनेवाले नित्य हैं। फिर जो भगवान वर्द्धमान हैं। जो सदा वृद्धिको प्राप्त होते रहे उनको वर्द्धमान कहते हैं। ऐसे ये लोकोत्तर श्रीशांतिनाथ भगवान सोलहवें तीर्थंकर क्या मुझ जगन्नाथकी भी रक्षा नहीं करेंगे? नहीं नहीं, अवश्य करेंगे।

इति श्रीशांतिनाथस्तुति ॥

अथ श्रीकुंथुनाथस्तुतिः।

श्रेयान्श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोऽथधर्मो,
हर्यंकः पुष्पदंतो मुनिसुव्रतजिनोऽनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः।
शांतिः पद्मप्रभोऽरो विमलविभुरसौ वर्द्धमानोऽप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम्।

टीका–अथ श्रीशांतिनाथस्तुत्यनन्तरं। उ अहो। आद्गुणः; एङः पदान्तादति हे श्रेय हे आश्रयणीय! हे अन् उत्तमक्षमादि-दशविधधर्मेण समस्तजगदनिति प्राणिति अन्। तत्सम्बुद्धौ हे अन्। तदुक्तम् 'कुंथुप्रभृत्यखिलसत्त्वदयैकतानः कुंथुर्जिनो ज्वरजरामरणोपशान्त्यै' भा श्रीवासुपूज्य! श्रियाः मनोहर-कन्याहस्तितुरंगमवस्त्राभूषणादिलक्षणाया वासो यस्यां सा श्रीवासा। श्रीवासा पूः पवित्रा षट्खण्डाज्ञा ज्या पृथिवी यस्य स

श्रीवासुपूज्यः तत्सम्बुद्धौ हे श्रीवासुपूज्य ! अत्र केचिदिज्या-
शब्दमाहुस्तदसत् " क्षोणी ज्या काश्यपी क्षितिरित्यमरः " अन्य-
त्रापि ज्या मौर्वी ज्या वसुधेति । पूः पवित्रे पुर्वौ पुवः । अत्रो-
कारस्त्पुरः । उः अहो हे वृष कामदेव " वृषो बलं वृषः कामः "
इति । हे श्रीदुर्पाक ! श्रीदुमे वृषभावलंको यस्य स श्रीदुमांक-
स्तत्सम्बुद्धौ हे श्रीदुमांक ! उ वितर्के । हे पुष्पदन्त ! पुष्पन्ति
तार्थाणि इति पुष्परत् अर्थवज्ञाप्तनिधिचतुर्दशरत्नानि चक्रा-
दीनि । संर्नति पघ्नाति म्लेच्छादीनिति पुष्पदन्तः । तत्सम्बुद्धौ हे
पुष्पदन्त ! हे उमुनिसुव्रतजिन ! उना निजनिजमवसम्बन्ध-
प्रश्नेन पुना मुनयः ऋषयः इति उमुनयः । तैः सुवृताः
परिवृता जिनाः पञ्चत्रिंशद्गुणभृतो यस्य स उमुनिसु-
व्रतजिनः तत्सम्बुद्धौ हे उमुनिसुव्रतजिन । हे पद्मप्रभ ! हिरण्य-
कान्ते ! अथवा नवनिधीश ! हे उरोविमलविभुर ! उरसा हृदयेन
विमला निर्मला विभव इन्द्रादयो मनुष्या वा तेषु रः पञ्चनमस्कार-
लक्षणः शब्दो यस्य स उरोविमलविभुरस्तत्सम्बुद्धौ भो उरोविमल-
विभुर ! एतेन ' ओं भू ओं भुवः ओं स्व ओं महः ओं जनः
ओं तपः ओं सत्य तत्सवितुर्वरेण्य भर्गोदेवस्य धीमहि धियो योनः
प्रचोदयात् ' इत्यादि गायत्रीमन्त्राणामुपाधिलक्षणानां निराकृ-
तिर्विहिता । हे मौन ' स्वमात्मान वेद इति मौनस्तत्सम्बुद्धौ हे मौन
हे आत्मज्ञ ' हे श्रीजगन्नाथ ' त्रिजगदीश्वर ! हे अजांक ' अजश्छा-
गोऽङ्कः यस्य सोऽजाङ्कस्तस्य सम्बुद्धौ हे अजांक ! एव विशेषणविशिष्ट-
श्रीकुंथुनाथमस्तदशजिनेशिन ! तव मत मतं उत्तमनरा धर्मं मां
जगद्धायनामान धीर पण्डित अथवात । किंविशिष्ट उनमपि नृ-
मात्रमपि । किंलक्षणा धर्मः भजिनपतिः भानि नक्षत्राणि जिना
नारायणा जना लोका वा इकारस्त्युन । भानि च जनाश्च भजना-
स्तान पातीति भजनपा भा ति पूजा यस्य धर्मस्य स भजिनपति ।
भूयः हर्यक हरीणा इन्द्रचन्द्रार्कविष्णुचक्रधरादीनामक पदवी य-

स्माद्धर्मादिति हर्यक्षः। ननु च हर्यादीनां पदवी तेषामेव। अन्ये ये धर्म कुर्वन्ति तेषां किं स्यात्तदर्थमुच्यते। मुहुः अक् श्रीसुपार्श्वः अकति कुटिलं गच्छति अक् कुटिला अस्थिरा सा चासौ श्रीर्धनादिसम्पत्तिः इति अकश्रीः। अकः सवर्णे दीर्घः। एतेन स्थिरलक्ष्मीरित्युक्तम्। सा सुपार्श्वे यस्माद्धर्माज्जननानामिति अकूश्रीसुपार्श्वः। पुनः शान्तिः पापं शाम्यति शान्तिः। पापनाशकः। "धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो धर्मं बुधाश्चिन्वते" इत्यादि ज्ञेयम्। पुनः ऋद्धमानः ऋद्धज्ञानजिनागमस्यमार्थमान्यत इति ऋद्धमानः। पुनः उमल्लिः उः शंकरो देवविशेषो येषां ते उमन्तः। मिथ्यामतगाः। शिवभक्ता लिङ्गिनः। तेषां लिनाशो यस्माद्धर्मादिति उमल्लिः। शिवेत्युपलक्षणं हरिहरहिरण्यगर्भबुद्धादयोपि दीप्यन्ते। पुनः नेमिः। ने नरे महापुरुषे मिमानं दशधा पूर्णत्वं यस्य स नेमिः। देवानामव्रतत्वात् मनुष्याणां महाभाग्यत्वात। अत्र सप्तम्या अलुक्। भूयः नमि। नास्ति मिर्हिंसा यस्मादिति नमिः। अहिंसालक्षणो धर्म इत्युक्तम्। भूयः सुमतिः शोभना श्रीजिनोक्तसप्ततत्त्वनवपदार्थषड्द्रव्यपञ्चास्तिकायादिलक्षणा त्यक्तमिथ्यामार्गा गृहीतसम्यक्त्वा मतिर्यस्मादिति सुमतिः।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुतावेकाक्षरप्रकाशिकायां भट्टारकश्रीनरेन्द्रकीर्तिशिष्य सुधीजगन्नाथविरचितायां सप्तदशजिनस्य श्रीकुंथुनाथस्य स्तुतिः पूर्णा॥

अब आगे सत्रहवें तीर्थंकर श्रीकुंथुनाथकी स्तुति करते हैं।

अन्वयः—अथ उ श्रेय। हे अन। भो श्रीवासुपूज्य। उ वृष। हे श्रीद्रुमांक। उ पुष्पदन्त। हे उमुनिसुव्रतजिन। हे पद्मप्रभ! हे उरोविमलविभुर। हे मीन। हे श्रीजगन्नाथ। हे अजांक। *तव अजितपतिः हर्यक्षः अकुश्रीसुपार्श्वः शांतिः ऋद्धमानः उमल्लिः* नेमिः नमिः सुमतिः सन् धर्म ऊनं धीरं मां अवतु।

अर्थ—आचार्य भगवान् कुंथुनाथकी स्तुति करते हैं। सबसे प-
हिले उनके बारह विशेषण संबोधनरूपसे लिखते हैं। श्रीद्रुमांकोपधर्मैः
इसके पदच्छेद श्रीद्रुमांक उ अव धर्मैः इस प्रकार करते हैं। पहले
श्री × उ मिलकर ओ कर लेते हैं। और फिर व्याकरणके नियमानुसार
अवके अकारका लोप कर देते हैं। इसी प्रकार और भी पदच्छेद अ-
र्थके अनुसार समझ लेना चाहिये। उ का अर्थ है अहो आदि
संबोधन है। उ श्रेय ! जो सबके आश्रय लेने योग्य हों उनको श्रेय
कहते हैं। हे अव ! जो उत्तम क्षमा आदि दश प्रकार के धर्मोंसे सब
जीवोंकी रक्षा करें उनको अव कहते हैं। अव धातुका अर्थ रक्षा कर-
ना है। लिखा भी है 'कुंथुप्रभृत्यखिलसत्त्वदयैकतानः कुंथुर्जिनो
ज्वरजरामरणोपशान्त्यै' अर्थात् "भगवान् कुंथुनाथ स्वामी
द्वीन्द्रिय आदि सब जीवों की रक्षा करनेमें ही लगे हुए
हैं। इसलिये वे भगवान् रोग बुढापा जन्म मरण आदि सब दोषोंको
दूर करें।" तथा भो श्रीवासुपूज्य ! कन्या हाथी घोडे वस्त्र आभूषण
आदि मनोहर लक्ष्मीको श्री कहते हैं। निवासस्थानको वास कहते हैं।
जिस आशा अथवा पृथिवीमें कन्या हाथी घोडे आदि की मनोहर
लक्ष्मीका निवास हो उसको श्रीवास कहते हैं। पू का अर्थ पवित्र है
तथा छहों खडों में होने वाली अखंड आज्ञा है और ज्याका अर्थ
पृथ्वी है। जिनकी पू अर्थात् छहों खंडों में होनेवाली अखंड आज्ञा
और ज्या अर्थात् समस्त पृथ्वी श्रीवास अर्थात् कन्या हाथी घोडे
आदि मनोहर लक्ष्मीके निवासस्थानसे सुशोभित हो उनको श्रीवासु-
पूज्य कहते हैं। भगवान् कुंथुनाथ चक्रवर्ती थे इसलिये उनकी आज्ञा
छहों खंडोंमें अखंड थी और समस्त पृथ्वी ऐसी ही लक्ष्मीसे सुशोभित
थी इसलिये उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं। यहांपर उकार च्युत शब्द है।
अर्थात् श्रीवासु का उकार छोडकर अर्थ किया गया है। तदनंतर हे
वृष ! वृष कामदेवको कहते हैं। भगवान् कुंथुनाथको कामदेवका पद
प्राप्त था। फिर हे श्रीद्रुमांक ! जिसपर वृक्षोंकी शोभा हो उसको

भगवान् कुंथुनाथ भी अपने केवलज्ञानके द्वारा आपको जानते हैं इसलिये उनको सौख्य करते हैं। फिर हे श्रीकुंथुनाथ! हे तीनों लोकों के स्वामी! हे अजांक! जिनके बकरेका चिन्ह हो उनको अजांक कहते हैं। भगवान् कुंथुनाथके चरणोंमें बकरेका चिन्ह है इस लिये उनको अजांक कहते हैं। इतने विशेषणोंसे सुशोभित होनेवाले हे कुंथुनाथ भगवन्! सत्रहवें तीर्थंकर! आपका मत् अर्थात् सबसे उत्तम धर्म अहिंसा रूप धर्म उन अर्थात् केवल मनुष्य मात्र पर्यायको धारण करने वाले मुग्ध अज्ञानपनी अर्थात् इस संघके बनानेवाले हिन्दु पंडित अज्ञान की रक्षा करे। आपका कहा हुआ वह सर्वोत्तम धर्म कैसा है! भजिनपति है। भ शब्दका अर्थ नक्षत्र या ज्योतिषी देव है। जिनका अर्थ नारायण है। अथवा इकार च्युत मानकर-इकारको छोड़कर जन शब्द लेना चाहिये। क्योंकि श्लेषमें अनुस्वार विसर्ग और मात्राओंके च्युत होनेमें कोई दोष नहीं होता। जनका अर्थ मनुष्य है। और पका अर्थ रक्षा करना है। जो ज्योतिषी देवों को नारायणों को अथवा साधारण (सर्व) मनुष्यों की रक्षा करे उनको भजिनप कहते हैं। ति शब्दका अर्थ पूजा करना है। जिस धर्मकी पूजा देव और मनुष्योंकी रक्षा करने वाली हो उसको भजिनपति कहते हैं। आपके कहे हुए धर्म की पूजा करनेसे सबकी रक्षा होती है इसलिये आपका धर्म भजिनपति कहा जाता है। फिर वो धर्म हर्यंक है। हरि शब्दका अर्थ इन्द्र सूर्य चन्द्रमा नारायण चक्रवर्ती आदि है। जिस धर्मके प्रसादसे इन्द्र चक्रवर्ती सूर्य चन्द्रमा नारायण आदि पद प्राप्त हों उसको हर्यंक कहते हैं। कदाचित् यहां पर कोई यह प्रश्न करे कि इन्द्र चक्रवर्ती आदिकी पदवी तो नियत जीवोंको मिलती हैं। यदि उनके सिवाय अन्य-मनुष्य धर्म धारण करें तो उनको क्या फल मिलता है? उसकेलिये कहते हैं। वह धर्म वक्श्रीपुरुषार्थ है। वक् शब्दका अर्थ कुटिल वा चंचल है। श्रीका अर्थ धन संपत्ति आदि लक्ष्मी है। जो लक्ष्मी चंचल और अ-

स्थिर हो उसको अकृश्री कहते हैं। कृ शब्दका अर्थ निषेध करना है। जो लक्ष्मी चंचल न हो सदा रहनेवाली स्थिर हो उसको अकृश्री हैं अथवा अकृश्री कहते हैं। ऐसी अनन्त चतुष्टयरूप लक्ष्मी जिसके प्रसादसे सुपार्श्व अर्थात् समीपमें आजाय उसको अकृश्रीसुपार्श्व कहते हैं। फिर जो धर्म शान्ति है। जो पापोंका नाश करदेवे उसको शांति कहते हैं। फिर वह धर्म ऋद्धमान है। ऋद्ध शब्दका जैनशास्त्रोंमें कहा हुआ परमार्थका स्वरूप है। और मान शब्दका अर्थ जानना है। जो शास्त्रोंमें कहे हुए परमार्थसे जाना जाय उसको ऋद्धमान कहते हैं। भगवान्‌का कहा हुआ धर्म भी ऐसा है इसलिये उसको ऋद्धमान कहते हैं। फिर वह धर्म उमलि है। उ शब्दका अर्थ महादेव है। जो महादेवको ही देव माननेवाले हैं ऐसे मिथ्यादृष्टी शिवभक्त उमत कहलाते हैं। लि शब्दका अर्थ नाश है। जिस धर्मके प्रसादसे ऐसे मिथ्या धर्मका नाश हो उस धर्मको उमलि कहते हैं। यहां पर लिंगायत या शिवभक्त उपलक्षण है। इससे हरि हर ब्रह्मा बुद्ध आदि सबका मत लेना चाहिये। फिर जो धर्म नेमि है। न शब्दका अर्थ पुरुष वा महापुरुष है। उसकी सप्तमीका ने बनता है। और यहां पर अलुक् समास है। । अर्थात इस अलुक् समासमें भी विभक्तिका लोप नहीं होता। तथा मि परिमाणको कहते हैं। जो दश प्रकारका धर्म महापुरुषोंमें ही पूर्ण हो उसको नेमि कहते हैं। भगवान्‌का कहा हुआ उत्तम क्षमा आदि दश प्रकारका धर्म इन्द्रादिक देवोंमें पूर्ण नहीं होता क्योंकि वे व्रती नहीं होते। वह धर्म गणधरादि महापुरुषों में ही पूर्ण होता है क्योंकि मोक्षमार्गमें प्राप्त हो जानेके कारण वे ही पुरुष महाभाग्यशाली गिने जाते हैं। अतएव उस धर्मको नेमि कहते हैं। फिर जो धर्म नमि हैं। जिसके प्रसादसे हिंसा न हो उसको नमि कहते हैं। भगवान् का कहा हुआ धर्म भी अहिंसास्वरूप है। अतएव उस धर्मसे उसके पालन करनेसे कभी कहीं हिंसा नहीं हो सक्ती इसलिये उस धर्मको नमि कहते हैं। फिर

मिदम् । तस्यास्त्वचिन्तनमेव कुर्वन्ति अस्माकं प्रभुश्चक्रीति । एवं विशेषणविशिष्ट हे अर हे अरनाथ! तव युष्पदः प्रयोगः । तव ममौ ङमीति असौ पद् पदयुगलम् । पदिति पद्न्नोमामृहृन्निशामनुपपेति पदादेशः । उक्तं हि स्वामिसमन्तभद्रैर्जिनशतालंकारे "पद्मया सहितायते" पद् मयासहि तायते । अं अंगीकारे । मां स्तुवन्तं नं मनुष्यं जगन्नाथनामानं । उ वितर्के । वर्द्धमानः पञ्चम्यन्तं । वा वेदना अर्थवशादसद्वेदना । तया ऋद्धं स्पष्टं मं पापं अनिति रक्षति वर्द्धमान् संसारः मिथ्यात्वं वा तस्माद्वर्द्धमान । अपि निश्चयेन भवतु रक्षतु इत्यर्थः । किं विशेषणगोचरः पद् श्रेयान् । अतिशयेन श्रेष्ठः । अनुपमत्वात् । पुनः श्रीवासुपूज्यः । उ शंकरः आ नारायणाः बहुवचनत्वात् सुभौमनन्दिषेणबलदेवादयस्तैः सुपूज्यः श्रीवासुपूज्यः । "आः स्वयंभून्तशोक्ते स्यादिति" एतेन रुद्रनारायण मुख्यैः पूज्यता कथिता । अथवा श्रीवासुपूज्यः श्रीव आस पूज्यः । तदा हे श्रीव लक्ष्मीपते तव पद् जनानां अं व्याधि आस दूरीचकार । अस क्षेपणे । किंलक्षण पद पूज्य । भूयः पतिः । पा परिरक्षका दुर्गतिभयहरणी सुखकरणी ति पूजा यस्य स पतिः । अथवा त्रिजगत्पतिः । पुनः श्रीद्रुमांकः । श्रीद्रुमा ऊर्ध्वरेखादयोऽका शुभचिन्हानि यस्य स श्रीद्रुमांक । भूय अधर्म । अधाः मत्यराचका धर्मा आचारा श्रावकयत्यादिभेदेन यस्मादिति अधधर्म । तर्हि धर्माचरणेन किं जातमित्युच्यते । पुन हर्यकः । हरीणां इन्द्रचन्द्रादीनां ईलक्ष्मीकं सेवकानां यस्मात् स हर्यकः । इन्द्रादिपदरूपा किं स्यादित्यनुयोगं वच्मः । पुष्पति पुत्रमित्रकलत्रादि निति पुष्पन् ममारन्तस्यान्तो विनाशोऽस्मादिति पुष्पदन्तः । एतेन मोक्षप्राप्तिरित्युक्तम् । तर्हि मुक्त्या किमित्युच्यते । मुहुः अकश्रीगुप्तार्श्वः । अकं इन्द्रियार्ति श्रयति अकश्रीः एवंविधा ईः श्रीः अकश्रीः । संसार

उनको वृषभजिन कहते हैं। भगवान् अरनाथ तीर्थंकर होकर भी कामदेव हैं इसलिये उनको वृषभजिन कहते हैं। फिर हे मुनिसुव्रतजिन! जिनके गणधर मुनियोंके साथ विराजमान हों उनको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं! भगवान् अरनाथके समवसरणमें भी कुंभार्य आदि तीस गणधर विराजमान थे इसलिये उनको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं। अथवा हे मुनिसुव्रत! निर्ग्रंथ साधुओंके द्वारा सेवा करने योग्य। हे जिन! हे कामदेव! इस प्रकार अलग अलग दो शब्द मान कर दो संबोधन करना चाहिये। तथा हे विम! वि का अर्थ रहित है और म का अर्थ परिमाण है। जिनका कुछ भी परिमाण करनेमें न आवे—जो अनन्त गुणोंको धारण करनेके कारण अनन्त स्वरूप हों उनको विम कहते हैं। तदनंतर हे सत! जन्म मरण जरा रहित। हे अर्जांक। सुभौम चक्रवर्ती और नंदिषेण बलदेव पुंडरीक आदि अर्द्ध चक्रवर्तियोंको अज कहते हैं। जिनके समीपमें सुभौम आदि चक्री और अर्द्धचक्री हुए हों उनको अर्जांक कहते हैं। अथवा जिनके बकरेका चिन्ह हो ऐसे भगवान् कुंथुनाथको अजांक कहते हैं। जो अजांकके समान हों उनको भी अजांक कहते हैं। भगवान् अरनाथ भगवान् कुंथुनाथके बाद हुए हैं इसलिये वे उन्हींके समान हैं अथवा उनके शरीरकी कांति भगवान् कुंथुनाथके समान है इसलिये उनको अजांक कहते हैं। हे श्री जगन्नाथ श्रीः ' कन्या हाथी घोड़े देश आदि लक्ष्मीको श्री कहते हैं। ऐसी लक्ष्मी से सुशोभित होनेवाले जगतको श्रीजगत् कहते हैं। ऐसे जगतमें जो राजा हों उन सबको श्रीजगन्नाथ कहते हैं। श्रीजगन्नाथ कहनेसे पांचो म्लेच्छखंड और आर्यखंड सब देशके राजा महाराजा समझलेना चाहिए। उन राजा महाराजाओंके द्वारा जो भी अर्थात् ध्यान किये जाय चिन्तवन वा स्मरण किये जाय उनको श्रीजगन्नाथधी कहते हैं। भगवान् अरनाथ [illegible] विशेषण चक्रवर्ती अवस्थामें छहों खंडके विजय करने समयका है। उस समय सब राजा महाराजा यही चिन्तवन करते हैं कि हमारा स्वामी तो चक्रवर्ती ही है

इन सब विशेषणोंसे सुशोभित होनेवाले हे अर! आपके चरणकमल मेरी रक्षा करें। वे चरणकमल कैसे हैं? श्रेयान हैं। अत्यंत श्रेष्ठ हैं। क्योंकि संसारमें उनकी कोई उपमा नहीं है। फिर वे चरणकमल श्रीवासुपूज्य हैं। उ का अर्थ महादेव है। आ का अर्थ नारायण है। उ और आ की संधि होकर वा बन जाता है। श्री का अर्थ शोभायमान है। जो सुशोभित रुद्र और नारायण हों उनको श्रीवा कहते हैं। जो श्रीवा अर्थात् सुशोभित रुद्रनारायणोंसे सुपूज्य हों उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं। भगवान् अरनाथके चरणकमल भी सुभौम नंदिषेण बलदेव आदिके द्वारा पूज्य हैं इसलिए उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं। अथवा श्रीव आस पूज्य ऐसे तीन परिच्छेद करने चाहिए। श्री का अर्थ लक्ष्मी है, व का अर्थ स्वामी है, आसका अर्थ दूर करना है। हे श्रीव! लक्ष्मीके स्वामी, आपके पूज्य चरणकमल लोगोंकी व्याधिको दूर करते हैं। इसलिये आपके चरणकमलोंको श्रीवासुपूज्य कहते हैं। यहांपर उकार च्युत शब्द है। उकार को छोडकर अर्थ किया गया है। फिर जो चरणकमल पांत हैं। र शब्दका अर्थ रक्षा करनेवाली, दुर्गति वा मिथ्यात्वके भयको दूर करनेवाली अथवा सुख देनेवाली है। [illegible] अर्थ पूजा है। भगवान अरनाथके चरणकमलोंकी पूजा मिथ्यात्वको दूर कर सुख देनेवाली है इसलिये [illegible] चरणकमलोंको [illegible] कहते हैं। अथवा व चरणकमल तीनों लोकोंके [illegible] है इसलिये भी [illegible] कहलाते हैं। फिर जो चरणकमल श्रीद्रुमांक हैं [illegible] होनेवाली वृक्षके आकार आदिकी रेखाओंको श्रीद्रुम [illegible] हैं। जिनमें वृक्ष आदि रेखाओंके चिह्न हों उनको श्रीद्रुमांक कहते हैं। तीर्थंकरोंके चरणकमलोंमें भी ऐसे चिह्न होते हैं इसलिये उन चरणकमलोंको श्रीद्रुमांक कहते हैं। फिर जो [illegible] हैं। जो मिथ्या न हो [illegible] नाश करते हैं [illegible] आदिके आचरणोंको [illegible] हैं। जिनके प्रसादसे मुनि श्रावकोंको यथार्थ [illegible]

अधधर्म कहते हैं। कदाचित् कोई यह कहे कि भगवानके चरणकमलोंके प्रसादसे धर्मकी प्राप्ति होती है इससे क्या लाभ हुआ? तो इसके समाधानके लिये कहते हैं कि फिर वे चरणकमल इर्यक हैं। जिन चरणकमलोंके प्रसादसे सेवकोंके समीपमें इन्द्र चक्रवर्ती आदिकी विभूति प्राप्त हो उनको इर्यक कहते हैं। कदाचित् कोई यह कहे कि इन्द्रादिक पदवीके प्राप्त होनेसे भी क्या होता है तो इसके लिये कहते हैं कि वे चरणकमल पुष्पदन्त हैं। जो पुत्र मित्र स्त्री आदिको पुष्ट करे ऐसे संसारको पुष्पत् कहते हैं। अन्त शब्दका अर्थ नाश है। ऐसे संसारका नाश जिनसे हो उनको पुष्पदन्त कहते हैं। फिर भी यदि कोई यह कहे कि मोक्ष प्राप्त होनेसे भी क्या होता है तो उसके लिये कहते हैं कि, वे चरणकमल अकुश्रीसुगर्भ हैं। अकु शब्दका अर्थ कुटिल गति है। श्री धातुका अर्थ गमन करना है। और ई शब्दका अर्थ लक्ष्मी है। जो कुटिल गतिसे गमन करनेवाली लक्ष्मी हो ऐसी संसारकी चंचल लक्ष्मीको अकुश्री ई अथवा अकुश्री कहते हैं। इसमें एक ई शब्द और है। और उसका अर्थ निषेध करना है। जो संसारकी चंचल लक्ष्मीका निवारण करे ऐसी सदा स्थिर रहनेवाली अनन्तचतुष्टय रूप लक्ष्मीको अकुश्री ई ई कहते हैं। सबको संधि होकर अकुश्री बन जाता है। तथा सुगर्भका अर्थ समीप है। जिनके प्रसादसे भव्य जीवोंके समीपमें ऐसी अनन्त चतुष्टयरूप लक्ष्मी प्राप्त हो जाय वे अकुश्रीसुगर्भ कहाते हैं। इससे सिद्ध हुआ कि भगवानके चरणकमलोंके प्रसादसे भव्य जीवोंको अनंत चतुष्टयरूप सुखकी प्राप्ति होती है। फिर वे चरणकमल शांति हैं। जो पूजा करनेसे अशुभ कर्मोंका नाश करदें उनको शांति कहते हैं। भगवान्के चरणकमलोंकी पूजा करनेसे भी अशुभ कर्मोंका नाश होता है इसलिये उन चरणकमलोंको शांति कहते हैं। फिर वे चरणकमल सप्रभ हैं। सशब्दका अर्थ सूर्य है। जिनकी प्रभा सूर्यके समान हो उनको सप्रभ कहते हैं। यह कथन उदाहरण मात्र है। भगवान्के चरणकमलों की प्रभा करोड़ों सूर्योंसे भी अधिक है किंतु सामान्यसे उनको सप्रभ कहते हैं।

फिर वे चरणकमल लविभु हैं। ल शब्दका अर्थ इन्द्र है। जो इन्द्रोंके विभु वा स्वामी हों उनको लविभु कहते हैं। भगवान् के चरणकमल भी अनेक इन्द्रोंके स्वामी हैं इसलिये उनको लविभु कहते हैं। फिर वे चरणकमल उमलि हैं। मीमांसक सांख्य बौद्ध आदिके मतोंके कुतर्क वितर्कों उ कहते हैं। जिनके ऐसे कुतर्क वितर्क हों उनको उमन कहते हैं। लि शब्दका अर्थ नाश होना है। जिनसे ऐसे कुतर्क वितर्क वालोंका नाश हो जाय—वे मिथ्यात्वको छोड़ कर मोक्षमार्ग में प्राप्त हो जांय उनको उमलि कहते हैं। फिर वे चरणकमल नेमि हैं। न का अर्थ मनुष्य है। न शब्दके सप्तमीका ने बनता है। यहांपर विभक्तिका लोप नहीं होता। मि शब्दका अर्थ परिमाण है। जिनका परिमाण न हो उनको अमि कहते हैं। ने अर्थात् मनुष्योंमें जिनका अमि अर्थात् परिमाण न हो उनको नेअमि, अथवा संधि हो जानेसे नेमि कहते हैं। भगवान् अरनाथके गुणोंको भी कोई वर्णन नहीं कर सकता इसलिये उनके चरणकमलोंको नेमि कहते हैं। फिर वे चरणकमल नमि हैं। जो दूसरोंसे नमस्कार करावें उनको नमि कहते हैं। फिर वे चरणकमल सुमति हैं। जिनमें अच्छे सुशोभित मंत्र हों उसको सुम कहते हैं। जिनकी ति अर्थात् पूजामें अच्छे सुशोभित मंत्र हों उनको सुमति कहते हैं। भगवान् अरनाथके चरण कमलोंकी पूजामें भी उत्तम मंत्रोंका उच्चारण किया जाता है इसलिये उन चरणकमलोंको सुमति कहते हैं। हे भगवन् आपके [illegible] पद अर्थात् चरणकमल आपकी स्तुति करते हुए न अर्थात् मनुष्य पर्यायको धारण करनेवाले मुझको इस स्तुतिके करनेवाले [illegible] [illegible] आप अर्थात् निश्चय करके वर्धमानसे रक्षा करें। [illegible] अर्थ वेदना वा असाता वेदना है। [illegible] शब्दका अर्थ स्पष्ट वा प्रगट होना है। [illegible] शब्दका अर्थ पाप है और [illegible] धातुका अर्थ [illegible] है। जो [illegible] अर्थात् असाता वेदनासे [illegible] अर्थात् प्रगट हो [illegible] अर्थात् पापोंको [illegible] करते हैं। और ऐसे पापोंको [illegible]

करे ऐसे संसारको वर्द्धमान् कहते हैं। उस वर्द्धमान् शब्दके पंचमी का एकवचन 'वर्द्धमानः' बनता है। अभिप्राय यह हुआ कि भगवान अरनाथके चरणकमल मुझ जगन्नाथ पंडितको इस वर्द्धमानसे अर्थात संसारसे रक्षा करें।

इति श्रीअरनाथजिन स्तुति.

अथ मल्लिनाथस्तुतिः।

श्रेयान्श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमाकोथधर्मो,
हर्यंकः पुष्पदंतो मुनिसुव्रतजिनोनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः।
शांतिः पद्मप्रभो रो विमलविभुरसौ वर्द्धमानोप्यजाको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम्।

टीका—अथेति स्तुतिवाचकोऽयम्। असौ मल्लिः श्रीमल्लिनाथ एकोनविंशजिनेशिता। अथवा मल्लिरिति अर्थवशाद्विभक्तिपरिणामः इति जैनेन्द्रकारः महाभाष्यकारोपि। मल्लेरिति षष्ठ्यन्तं ग्राह्यम्। अथवा सम्बन्धस्याद्यंतस्तरशतामिधायकत्वात्। मल्लेर्धर्मः असौ मल्लिप्रदितमार्गः। स पक्षान्तरं मां जगन्नाथधीरं किं न न अवतादपितु अवतु इत्यर्थः। किंलक्षणं मां, मुनिसुव्रतजिनोनम्। मुनीनपि सुवरति आच्छादयति मुनिसुव्रतः स चासौ जिनः कामः मुनिसुव्रतजिनः। उपलक्षणमेतत् कामक्रोधलोभमानमायादयो गृह्यन्ते। मुनिसुव्रतजिनेन ऊनः कदर्थितः मुनिसुव्रतजिनोनः तं कषायपीडितं संसारिणं मां। आद्गुणः। पुनः पुष्पदं जिनपूजायामार्त्तो द्रव्येषु पुष्पाणि द्यति निवारयति पुष्पदस्तं। एवं हि जलचन्दनादिद्रव्येण पूजाकारकः मूलसयस्य इत्यर्थः। अन्यत्र द्रव्याणां विपर्यय। किंलक्षण मल्लिः श्रेयान्श्रीवासुपूज्यः। श्रेयः अत्र अणिमादिसम्पद् यस्यां सा श्रेयान्। विख्यातः श्रुतसम्यो डीविति न डीप्। सा श्रीर्येषां ते श्रेयान्श्रियः। ते च ते वासव इन्द्राः। अथवा वासुरिति वासुकिः शेपः। तैः वेन या

अब आगे उन्नीसवें तीर्थंकर श्री मल्लिनाथकी स्तुति करते हैं।

अन्वयः—अथ श्रेयान्श्रीवासुपूज्यः अवृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकः धर्मः हर्यंकः त. तवाङ्श्रीः (अथवा तव अकश्रीः) सुपार्श्व शान्तिः पद्मप्रभः अरः विमलविभुः ऋद्धमानः ईमिः मिः अपि अजांकः सुमतिः सन असौ मल्लिः मल्लेर्धर्मः मुनिसुव्रतजिनोनं पुष्पदं मां श्रीजगन्नाथधीरं किं न अवतु इति न अपि तु अवतु एव।

अर्थ—अथ शब्द स्तुतिवाचक है। जो श्रीमल्लिनाथ भगवान् श्रेयान्श्रीवासुपूज्य हैं। श्रेय शब्दका अर्थ कल्याण करनेवाला है। अन शब्दका अर्थ अणिमा महिमा आदि ऋद्धियां हैं। जो अन् अर्थात् कल्याण करनेवाली हों उनको श्रेयान् कहते हैं। श्री शब्द का अर्थ लक्ष्मी है। वासुका अर्थ इन्द्र है। जो वासु अर्थात इन्द्रादिक देवोंके श्रेय अर्थात् कल्याण करनेवाली अन् अर्थात् अणिमादिक संपदासे सुशोभित श्री अर्थात् लक्ष्मी हो उनको श्रेयान्श्रीवासु कहते हैं। अथवा वासु शब्दका अर्थ वासुकि या शेषनाग भी है। जो अणिमादिक लक्ष्मीसे सुशोभित होनेवाले इन्द्रादिकोंके द्वारा पूज्य हों अथवा शेषनागके द्वारा (धरणेन्द्रके द्वारा) पूज्य हों उनको श्रेयान्श्रीवासुपूज्य कहते हैं। भगवान् मल्लिनाथ ऐसे इन्द्र धरणेंद्रके द्वारा पूज्य हैं इसलिये उनको श्रेयान्श्रीवासुपूज्य कहते हैं। फिर जो भगवान अवृषभजिनपति हैं। वृष धर्मको कहते हैं और वृष अर्थात् धर्मके अभावको पापको अवृष कहते हैं। भ शब्दका अर्थ भयभीत होना है। लिखा भी है ' पितृभ्रातृ पितृव्येषु भोतिभीते भयाकुले " अर्थात् " भका अर्थ अतिशय भय, भयभीत, पिता, भाई, काका है। " जो अवृष अर्थात पापसे भयभीत हों, पापोंसे डरते हों उनको अवृषभ कहते हैं। जिन गणधरोंको कहते हैं। तथा पति स्वामीको कहते हैं। जो पापोंसे डरनेवाले गणधरोंके स्वामी हों उनको अवृषभजिनपति कहते हैं। भगवान् मल्लिनाथ भी विशाख आदि ऐसे अट्ठाईस गणधरोंके स्वामी हैं। इसलिये उनको अवृषभजिनपति कहते हैं। फिर जो भगवान

श्रीदुर्मांक हैं। श्रीका अर्थ चन्द्रमाकी चांदनी है। दुका फैलाना है। द का अर्थ चन्द्रमा है। तथा अंक का अर्थ समीप है। जो श्री अर्थात् चांदनीरूपी अमृतको दु अर्थात् फैलावे ऐसे म अर्थात् चन्द्रमाको श्री-दुर कहते हैं। ऐसा चन्द्रमा जिनके अंक अर्थात् समीप वा कोठेमें हो उनको श्रीदुर्मांक कहते हैं। भगवान मल्लिनाथके समवसरणमें भी ज्यो-तिषी देवोंका इन्द्र चन्द्रमा स्वयं उपस्थित था इसलिये उनको श्रीदु-र्मांक कहते हैं। फिर जो भगवान् धर्म हैं। धर्मको फैलानेवाले हैं। तथा जो भगवान् हर्यंक हैं। नारायण चक्री आदिको हरि कहते हैं तथा अंक समीप को कहते हैं। जिनके समीपमें अर्थात् जिनके समयमें चक्रवर्ती नारायण आदि हुए हों उनको हर्यंक कहते हैं। भगवान् मल्लि-नाथके समयमें पद्म चक्रवर्ती, नंदिमित्र बलभद्र दत्त वासुदेव और बलीन्द्र प्रतिनारायण हुए हैं इसलिये उनको हर्यंक कहते हैं। फिर जो भगवान् त हैं त का अर्थ ज्ञानी वा सर्वज्ञ है। अथवा जो अनन्त सुखको देवें उनको त कहते हैं। भगवान् भी ऐसे हैं इसलिये उनको त कहते हैं। फिर जो भगवान् तवाक् श्री हैं। त शब्दका अर्थ ज्ञान है। वाक् शब्दका अर्थ कहना है। जो ज्ञानका वर्णन करें ऐसे केवलज्ञानको तवाक् कहते हैं। श्रीका अर्थ आश्रय अथवा प्राप्त करना है। जो केवलज्ञानको प्राप्त हो उनको तवाक्श्री कहते हैं। भगवान् मल्लिनाथ भी केवलज्ञानको प्राप्त हुए हैं इसलिये उनको तवाक्श्री कहते हैं। स्वामी समन्तभद्राचार्यने लिखा भी है " यस्य महर्षेः सकलपदार्थप्रत्यवबोधः समजनि साक्षात् "। अर्थात् जिन भगवान् मल्लिनाथ स्वामीको समस्त पदार्थोंको प्रत्यक्ष प्रगट करनेवाला केवलज्ञान प्रगट हुआ है उनको मैं नमस्कार करता हूं "। अथवा यदि तव शब्दको अलग रक्खा जाय और उसका संबंध धर्मके साथ लगाया तो यहांपर भगवानका विशेषण अकुश्री इतना ही लगाना चाहिये। अकु कुटिल रीतिसे गमन करनेको कहते हैं। श्री लक्ष्मीको कहते हैं तथा ई शब्दका अर्थ निषेध करना है। जिनके निमित्तसे कुटिल रीतिसे गमन करनेवाली संसारकी चंचल लक्ष्मीका निषेध हो और अनन्त सुखकी प्राप्ति हो उनको अकुश्री कहते हैं ·

भगवान् मल्लिनाथमें भी केवल गुणकी प्राप्ति होती है इसलिये उनको गुणी कहते हैं। फिर जो भगवान् गुणार्य हैं। गु का अर्थ सत् वा श्रेष्ठ है और आर्य समीपको कहते हैं। जिनके समीपमें सज्जन लोग रहते हों उनको गुणार्य कहते हैं। भगवान्‌के समीप भी गणधरादिक महापुरुष ही सेवामें उपस्थित रहते हैं इसलिये उनको गुणार्य कहते हैं। फिर जो भगवान् शांति हैं। श का अर्थ क्लेश कथन है और अंतिम अर्थ समीप है। जिनके समीपमें क्लेश कथन भी नष्ट हो उनको शांति कहते हैं। भगवान् मल्लिनाथके समीप भी अन्य जीवोंके अपने अपने पहलेके सबके सब कथन और संदेह नष्ट हो जाते थे इसलिए उनको शांति कहते हैं। इससे यह भी सिद्ध होता है कि भगवान्‌के समीपमें आकर अनेक भव्य जीव अपने अपने सब पूछते थे। फिर जो भगवान् पद्मप्रभ हैं। पद्म का अर्थ प्राप्ति और मा का अर्थ लक्ष्मी है। जिसमें लक्ष्मीकी प्राप्ति हो ऐसे सुवर्णको पद्म कहते हैं। जिनकी प्रभा सुवर्णके समान हो उनको पद्मप्रभ कहते हैं। भगवान् मल्लिनाथके शरीरकी कांति भी तपाये हुए सुवर्णके समान थी इसलिए उनको पद्मप्रभ कहते हैं। फिर जो भगवान् अर हैं। अ का नहीं है और र का अर्थ स्त्री है। जिनके स्त्री न हो उनको अर कहते हैं। भगवान् मल्लिनाथ ने कुमार अवस्था में ही दीक्षा धारण की थी इसलिए उनको अर कहते हैं। फिर जो भगवान् विमलविभु हैं। वि का अर्थ रहित है। मल का अर्थ पाप है और विभु का अर्थ इन्द्रादिक विभवशाली पुरुष है। जिनके प्रसादसे इंद्रादिक विभवशाली पुरुष भी पाप रहित हो जाय उनको विमलविभु कहते हैं। भगवान् मल्लिनाथकी सेवा पूजा कर अनेक इन्द्रादिक देव पाप रहित हुए हैं। इसलिए उनको विमलविभु कहते हैं। इससे यह भी सिद्ध होता है कि भगवान की सेवा करनेसे इन्द्रादिक विभवशाली पुरुष भी अपना जन्म सफल मानते हैं। फिर जो भगवान् ऋद्धमान हैं। ऋद्ध शब्दका अर्थ महापुरुष है जो महापुरुषोंके द्वारा मान अर्थात् मान्य हों उनको ऋद्धमान कहते हैं। भगवान् मल्लिनाथ भी इन्द्र चक्रवर्ती आदि पुरुषोंके द्वारा मान्य हैं

इसलिये उनको श्रद्धमान कहते हैं। फिर जो भगवान् ईमि हैं। ई मोह को कहते हैं और, मि नाश करनेको कहते हैं। जो मोहका नाश करें उनको ईमि कहते हैं। फिर जो भगवान् मि हैं। मि का अर्थ जानना है। जो अपने केवलज्ञानके द्वारा संसारके समस्त पदार्थोंको जानें उनको मि कहते हैं अरिका अर्थ तथा है। जो भगवान् अजांक हैं। जिसमें ज अर्थात् जन्म या मरण न हो ऐसे चौदहवें गुणस्थान को अज कहते हैं। जो चौदहवें गुणस्थानमें अंक अर्थात् प्राप्त हों उनको अजांक कहते हैं। भगवान् भी चौदहवें गुणस्थानमें प्राप्त हुए हैं इसलिये उनको अजांक कहते हैं। फिर जो भगवान् सुमति हैं। जिनसे सु अर्थात् श्रेष्ठ मति अर्थात् बुद्धि हो, जिनके प्रसादसे जिनकी सेवासे सम्यग्ज्ञान वा सर्वोत्तम केवलज्ञान प्रगट हो उनको सुमति कहते हैं। तथा जो भगवान् सत् वा श्रेष्ठ हैं ऐसे श्री मल्लिनाथ भगवान उन्नीसवें तीर्थंकर क्या इस अनाथ पंडितकी रक्षा न करेंगे ? नहीं नहीं, अवश्य करेंगे। मैं कैसा हूं। मुनिसुव्रतजिनोन हूं। मुनिका अर्थ साधु है। सुव्रतका अर्थ आच्छादन करना, ढकना है तथा जिनका अर्थ काम है। जो मुनियोंको भी आच्छादन करे ऐसे कामको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं। यह उपलक्षण है। काम कहनेसे काम क्रोध मान माया लोभ आदि सब दोष लेने चाहिये। ऊन शब्दका अर्थ कदर्थित वा दुःखी है। जो काम क्रोधादिकसे दुःखी हो ऐसे संसारी जीवको मुनिसुव्रतजिनोन कहते हैं। मैं भी संसारी हूं इसलिये मैं मुनिसुव्रतजिनोन कहलाता हूं। फिर मैं पुष्पद हूं। जो भगवान जिनेन्द्रदेवकी पूजा करनेमें रत हो पुष्पोंसे [illegible] करे उनको पुष्पद कहते हैं। आमूल अर्घ पूजा करनेवाले [illegible] दन अक्षत पुष्प नैवेद्य दीप धूप फल अर्घ हैं। परन्तु [illegible] चंदन अक्षत पुष्प [illegible] हैं मैं आमूल अर्घ हूं इसलिये [illegible] पुष्प नहीं चढ़ाता। [illegible] हूं इसलिये मैं पुष्पद हूं [illegible] मैं भगवानको पुष्प समर्पण करता हूं इसलिये मैं पुष्पद हूं। [illegible] मैं आपका भक्त [illegible] हूं इसलिये हे [illegible] मेरी रक्षा कीजिये।

॥ इति [illegible] स्तुति ॥

अथ श्रीमुनिसुव्रतजिनस्तुतिः ।

श्रेयान् श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोथधर्मो
हर्यंकः पुष्पदंतोमुनिसुव्रतजिनोनंतवाक्श्रीसुपार्श्वः ।
शांतिः पद्मप्रभोरोविमलविभुरसौ वर्द्धमानोप्यजांको—
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ॥

टीका—भो मुनिसुव्रतजिन! मुनिसुव्रतनाम विंशतीर्थंकर। अत्राह कश्चित् ननु पद्येषु सुव्रत इति सर्वत्र। ततस्तीर्थंकरनाम नास्ति सुव्रतशब्देन तीर्थंकरनाम कथम्! "स यस्य वस्तीर्थरथस्य सुव्रतः" इति द्विसंधानम्। "मुनिवृषभो मुनिसुव्रतो नघ" इति समन्तभद्रः। नियमो व्रतमस्त्रियामित्यमरः। ततः सुव्रतशब्दोऽस्यार्थे ध्येतव्यः। इतिचेत् व्रतशब्दनास्संयोगे गुरु इति सूत्रेण सु इत्यक्षरस्य गुरुत्वं प्रसज्येत। ततश्छन्दोहानिरिति चेन्न। लघुनापि गमाधेयम्। तद्यथा नरामरारामक्रमं क्रममित्यादिषु दृश्यते। मुनिसुव्रतश्चासौ जिनश्च मुनिसुव्रतजिनः। तत्सम्बुद्धौ भो मुनिसुव्रतजिन! हे वृषभश्रेष्ठ! तव युष्मदः षष्ठ्यन्तस्य प्रयोगः। तव ममौ ङसीति सूत्रेण। अष्टौश्रीः। अन्तरङ्गानन्तचतुष्टयलक्षणा बाह्या समवसृतिश्च। इति "नानुस्वारविसर्गौ तु चित्रभङ्गाय संमतौ" मां ऊनं नृभाग्यमपि अवतु पालयतु। कस्मात्पुष्पदन्तः पुष्यन् संसारपरिभ्रमं कारयन्। अं व्याधिव्यसनं चेति पुष्पदन्। तस्मात्पुष्पदन्तः। "पञ्चम्यास्तसिल्" इत्यनेन तसो विधानम्। "अमान्ता मत—संवादे परब्रह्मवाचकः व्यसने व्याधिर्व्याधौ ज्ञानविज्ञानवन्दने। तस्मान्मां पालयतु। किंलक्षणं मां श्रीजगन्नाथधीरम्। जगन्नाथं तीर्थंकरदेवं ध्यायत इति श्रीजगन्नाथधीः। एवंविधो रो ध्वनिर्यस्य स तं मां। अन्यान्यन्यानि पदानि लक्ष्मीकमयोर्विशेषणानि सन्ति। तथाहि—किंविशे-

पणता श्रीः श्रेया भवभीतिराश्रयणीया । समवसरणलक्षणा । अभ्यन्तरपक्षे नृणां त्रयोदशचतुर्दशगुणस्थानस्थानां रां गोचरा या यथार्था यस्याः सा श्रेया । " यो यथार्थे स्त्रियां च या " पुनः वा पक्षान्तरे । सुपूज्या शोभना कंटकोपलादिरहिता गंधोदकवृष्टया पूः पवित्रा ज्या पृथिवी यत्र सा पूज्या । उक्तं हि " व्युपशमितधूलिकण्टकतृणकीटकशर्करोपलं प्रकुर्वन्ति " । अन्यच्च, " प्रकरन्ति सुरभिगंधिगन्धोदकवृष्टिमाज्ञया त्रिदशपतेरिति "। अभ्यन्तरपक्षे सुपूज्या पूजनीया। 'निश्चयरत्नत्रयं वंदे' इति वचः। पुनः श्रीद्रुमांका । श्रीद्रुमाः कल्पवृक्षाः अंके यस्याः सा श्रीद्रुमांका । अशोकवृक्षचैत्यवृक्षादिरचनायुक्ता । " शालः कल्पद्रुमाणामिति " । पक्षे द्रवति कर्माणि द्रु । एवंभूतो मो मोक्ष इति द्रुमः । श्रियोपलक्षितो द्रुमः इति श्रीद्रुमस्तस्यांका चिन्हीभूता श्रीद्रुमांका । भूयः उः अहो । थधर्मा । थानां देवकूटानां सुरनिर्मितमानस्तम्भस्तूपादीनां धर्मो रचना यस्यां सा थधर्मा। "देवकूटे कषाये स्त्री दृढं परिवृढेऽपि था " । पक्षे थ अतिगम्भीरः शास्त्रतो धर्मः स्वभावो यस्या सा थधर्मा । पुन ऊहरी ऊहानां वितर्काणां अनुत्तरवाद्यन्यसमतभिदानां री भ्रवणं यत्र सा ऊहरी । अथवा ऊहाना परवादिवितर्काणा रीः स्रवनं यस्यां सा ऊहरी । " री पुंसि स्वार शब्दे ली स्रावणे त्रिषु " । रकारलकारयोः सावर्ण्यम् । अथवा ऊहरी ऊहा वितर्कानां परवादिनां हरतीति ऊहरी । पक्षे ऊः पीडनं संसारस्थितिम हरतीति ऊहरी । पुन अकश्री । कुत्सितानि श्रयन्ते अकश्री । प्रभोविहारस्थान । यत्र प्रभुस्तत्रश । अथवा अकश्रिया गृहस्थानां ईर्मोहो यस्यां सा अकश्रीः । पक्षे अकः श्रयास्तत्रलक्षणाः ईर्निषेधो यस्याः सा अकश्रीः । स्वरसप्राप्तिरिति युक्तम । कनासाधिपसोद्भवसंसृतिधनादिसंपत्तिनाशे स्वरसप्राप्तिरित्युक्तम । पुनः शान्तिः । शालापक्षा मुनयो अन्वो समीपे यस्या सा शान्तिः

" निर्ग्रंथकन्यवनितावनिकाममोम्नागम्भियो मवनमौमम-
कस्देशाः " इति वचः । " मः सोमे सोमपानेपि स्वर्गे पक्षिणि
तापसे वृपेच " शः सदानन्दं । अथवा शः वृषं पुण्यं जनानामन्तौ
यतः सा शान्तिः । पक्षे शः सदानन्दः अनन्तचतुष्टयलक्षणः अ-
न्तौ यस्याः सा शान्तिः । नहि संसारपरलक्ष्म्या सदानन्दो वो-
मोति । मुहुः ऋद्धमाना । अर्द्धार्द्धहीनादिभेदेन सार्द्धद्वययोज-
नमिता पक्षे ऋद्धानां षड्द्रव्याणां मानो यस्यां सा ऋद्धमाना ।
पुनः उ अहोप्यजांका । प्यजाः सागरसमानगंभीरमुनयस्तेषां
अंकाः पिच्छकमंडल्वादयो यस्याः सा प्यजांका । पक्षे अपि नि-
श्चयेन अजांका । अज्ञैर्योगिभिरंक्यते गम्यत इति अजांका । पुनः
अमल्लिः । अमन् निगर्वता । तल्लाति गृह्णाति जनाय इति अम-
ल्लिः । कथं उ वितर्के । पक्षे अः कामक्रोधाग्निरस्ति
यस्मिन् सोमान् कर्मसुभटस्तं लवयन्ति द्रवीकुर्वन्ति जना
यस्याः सा अमल्लि । पुनः सुमतिः शोभना मतिर्यतः इति सुमतिः
उभयत्र । किंविशेषणस्त्वं ? अन् पालकः । पुनः
जिनपतिः । जिनानां मल्लयाद्यष्टादशगणधराणां पतिरिति
जिनपतिः । मुहु अकः । अं ब्रह्म कायति वक्ति अकः ।
पुन सुपार्श्व ममचतुष्क । पुनः पद्मप्रभः नीलवर्णकमलदीप्तिः ।
उक्तं च परिणतशिखिकण्ठरागयेति । भूयः अरः । नास्ति रः काम-
क्रोधादिलक्षणः अग्निर्यस्य सोरः । अथवा अरः निर्ग्रंथः पूर्वोक्त-
संपद्युतोपि निर्ग्रंथ. । वाचिकल्पार्थे चित्रमेतत् । अनया सम्पदा
युतोपि निर्ग्रंथ इति । भूयः विमलविभुः । विमलानां हरिषेणचक्रि-
रामचन्द्रलक्ष्मणरावणादीनां विभुर्विमलविभुः । तत्समये हि एते ।
पुन. नेमिः तीर्थरथचक्रे नेमिरिव नेमिः । उक्तं च द्विसंधानकृता-,
तीर्थरथस्य सुव्रतः प्रवर्तको नेमिरनश्वरीं क्रियादिति । पुनः नमिः
न मीयते परिच्छिद्यतेन्यसादृश्येनेति नमिः । अनुपमत्वात् ।
अथवा न मीयते परैः सत्तादिलक्षणच्युतैरेकान्तवादिभिरिति ·

नमिः । यथाश्च " स्थितिजननिरोधलक्षणं चरमचरं च जगत् प्रतिक्षणम् । इति जिन सकललांछनं वचनमिदं वदतां वरस्य ते " इति । पुनः मन् अतिशयेन श्रेष्ठ ।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुत्येकाक्षरप्रकाशिकायां भट्टारकश्रीनरेन्द्रकीर्ति-
मुख्यशिष्यपण्डितजगन्नाथविरचितायां विंशतीर्थंकरस्य मुनिसुव्रतस्य
स्तुतिः पूर्णा ।

बीसवें तीर्थंकर श्रीमुनिसुव्रतनाथकी स्तुति ।

अन्वयः—अन् जिनपतिः अंक पद्मप्रभः सुपार्श्वः अरः विमलविभुः नेमिः नमिः मन् हे वृषभ ! हे मुनिसुव्रतजिन ! तव श्रेयान् वा सुपूज्यः श्रीकुंथुः वा धर्मः उड्डरी अकूश्रीशांतिः ऋद्धमाना अप्यजोका अमल्लिः उ सुमतिः असीधीः श्रीजगन्नाथवीरं ऊनं मां पुष्पदंतः अवतु ।

अर्थ—जो भगवान मुनिसुव्रतस्वामी मन अर्थात् सबके पालन करनेवाले हैं । फिर जो भगवान जिनपति हैं । जो गणधरोंके स्वामी हों उनको जिनपति कहते हैं । फिर जो भगवान अंक हैं ; अं का अर्थ ब्रह्म है तथा क का अर्थ कहते हैं , जो परब्रह्मका स्वरूप निरूपण करें उनको अंक कहते हैं । फिर वे भगवान सुपार्श्व हैं । जिनके शरीरके सब भाग बहुत सुन्दर हों उनको सुपार्श्व कहते हैं । फिर जो भगवान पद्मप्रभ हैं । जिनके शरीरकी कांति नील कमलके समान हो उनको पद्मप्रभ कहते हैं भगवान मुनिसुव्रतका शरीर नील वर्णका था । फिर जो भगवान अर हैं । र का अर्थ अग्नि है । अग्नि शब्दसे यहां पर काम क्रोधादिरूप अग्नि लेनी चाहिये । जिनके काम क्रोध रूप अग्नि न हो उनको अर कहते हैं । अथवा जिनके पास चौबीसों प्रकारका र अर्थात् परिग्रह न हो उनको अर कहते हैं । फिर जो भगवान विमलविभु हैं । मल शब्दका अर्थ पाप है । जो पाप रहित हों उनको विमल कहते हैं । चक्रवर्ती ना-

रायण आदि भी पुण्यकर्मके उदयसे होते हैं इसलिये पाप रहित होनेके कारण उनको भी विमल कहते हैं। जो उनके स्वामी हों उनको विमल-विभु कहते हैं। फिर जो भगवान नेमि हैं। जो तीर्थरूपी रथके पहियों को चलानेके लिये धुराके समान हों उनको नेमि कहते हैं। फिर जो नमि हैं। जो किसीके द्वारा न जाने जांय उनको नमि कहते हैं। अथवा संसारमें अन्य किसीमें भी जिनकी समानता न हो उनको नमि कहते हैं। अथवा जो सत्ता महासत्ता आदिके लक्षणोंको नहीं जानते ऐसे एकांत-वादी लोग जिनके स्वरूपको न जान सकें उनको नमि कहते हैं। फिर जो भगवान सन अर्थात् अतिशय श्रेष्ठ हैं। इन सब विशेषणोंसे सुशोभित होनेवाले हे वृषभ! वृष श्रेष्ठको कहते हैं और भ कांतिको कहते हैं। हे मुनिसुव्रतजिन। हे बीसवें तीर्थंकर! आपकी यह अंत-रंग और बहिरंग लक्ष्मी मेरी रक्षा करो। यहां तीर्थंकरका वाचक सुव्रत शब्द यदि माना जाय तो छंदोभंग होता है! परन्तु इसका समाधान यह है कि कहीं कहींपर गुरु वा दीर्घ अक्षर भी लघु माना जाता है। जैसे " नगमगरामकर्म कर्म कमम " इसमें कम शब्दके पहले गमके अंतका अकार गुरु होकर भी लघु माना है। इस प्रकार हे मुनिसुव्रत भगवन! आपकी यह अनन्त चतुष्टयरूपी अंतरंग लक्ष्मी और समवसरणरूपी बहिरंग लक्ष्मी मेरी रक्षा करो।

यहांपर श्रीवसुराज्य में जो श्री है उसका अर्थ लक्ष्मी होता है। यद्यपि इस श्रीमें प्रथमान्त विभक्तिका विसर्ग नहीं है जो कि अर्थके अनुसार होना चाहिए। परन्तु यह चित्र श्लोक है। चित्र श्लोकमें अनुस्वार वा विसर्ग हों और उन्हें छोड़कर अर्थ करना पड़े तो भी कोई हानि नहीं। तथा यदि विसर्ग न हों और उसका अर्थ विसर्ग लगाकर ही करना पड़े तो भी कोई हानि नहीं। यहांपर विसर्ग मान लेना चाहिए। लिखा भी है " नानुस्वारविसर्गौ तु चित्रभंगाय सम्मतौ " अर्थात् अनुस्वार और विसर्गोंसे चित्रश्लोकमें किसी प्रकारका भंग नहीं होता।

अब आगे अंतरंग और बहिरंग दोनों प्रकारकी लक्ष्मीके विशेषण लिखते हैं। वह लक्ष्मी कैसी है ? श्रेया है। श्रेयका अर्थ आश्रय लेने योग्य है। संसारसे भयभीत हुए भव्य जीव समवसरणरूप बहिरंग लक्ष्मी का आश्रय लेते हैं। इसलिये उसको श्रेया कहते हैं। तथा अंतरंग लक्ष्मीके पक्षमें श्रे शब्दका अर्थ कर्मोंके नाश करनेवाले तेरहवें चौदहवें गुणस्थान है। ए का अर्थ उसके गोचर अथवा उसमें होना है तथा य का अर्थ यथार्थ है। जो अनन्त चतुष्टयरूप लक्ष्मी यथार्थ रीतिसे तेरहवें चौदहवें गुणस्थानमें ही प्रगट हो उसको श्रेया कहते हैं। अनन्त चतुष्टय वहीं प्रगट होते हैं इसलिये भगवानकी अंतरंग लक्ष्मी श्रेया है। वा अथवा वह लक्ष्मी सुपृज्या है। सु का अर्थ शोभा-यमान है। पृ का अर्थ पवित्र है और ज्या का अर्थ पृथिवी है। जहां-की पृथ्वी अत्यंत शोभायमान और पवित्र हो उसको सुपृज्या कहते हैं। भगवान मुनिसुव्रतकी समवसरणरूप बहिरंग लक्ष्मीकी पृथ्वी कंकड़ पत्थर कांटे आदिसे रहित होनेके कारण अत्यंत शोभायमान थी और गंधोदक वृष्टिसे अत्यंत पवित्र थी इसलिये उस लक्ष्मीको सुपृज्या कहते हैं। लिखा भी है [illegible] कंटकोपलं प्रकर्वन्ति [illegible]

होना चाहिये। जिसके शांति अर्थात् सबीमें सदानंद अर्थात् अनंतसुख हो उसको शांति कहते हैं। अनंत चतुष्टयके प्राप्त होनेसे अनंत सुख प्राप्त होता है। संसारकी लक्ष्मीके साथ वह सुख प्रगट नहीं होता इसलिये उसको शान्ति कहते हैं। फिर वह लक्ष्मी ऋद्धमाना है। अथवा आधा योजन कम होती हुई है। योजन की है भगवान् ऋषभदेवका समवसरण बारह योजनका था। श्री अजितनाथका साढे ग्यारह योजनका, श्रीसम्भवनाथका ग्यारह योजनका था। इसी प्रकार आधा आधा योजन कम होते हुए भगवान् मुनिसुव्रतनाथका समवसरण ढाई योजन का था। अंतरंग पक्षमें ऋद्ध शब्दका अर्थ जहां द्रव्य लेना चाहिये और मान शब्दका अर्थ प्रमाण करना वा जानना है। जिसमें समस्त द्रव्योंका ज्ञान हो उसको ऋद्धमाना कहते हैं। अनन्त चतुष्टयके प्रगट होनेपर ही समस्त पदार्थोंका प्रत्यक्ष ज्ञान होता है इस लिये उसको ऋद्धमाना कहते हैं। फिर उ अर्थात् आश्चर्य है कि वह लक्ष्मी ध्यजांका है। ध्यजा शब्दका अर्थ समुद्रके समान गंभीरताको धारण करनेवाले महामुनि है। अंक का अर्थ चिन्ह है। जिसमें ध्यजा अर्थात् महा मुनियोंके अंक अर्थात् पीछी कमंडलु आदि चिन्ह हों उसको ध्यजांका कहते हैं। समवसरणमें भी मुनियोंके ये चिन्ह मुनियोंके साथ थे इसलिये उस समवसरण लक्ष्मीको ध्यजांका कहते हैं। अंतरंग पक्षमें अपिका अर्थ निश्चयसे है। अज शब्दका अर्थ आगे जन्म मरण धारण न करनेवाले महामुनि है। और अंक शब्दका अर्थ प्राप्त होना है। निश्चयसे जो महा मुनियोंके द्वारा प्राप्त हो उसको अप्यजांका कहते हैं। अनन्त चतुष्टय रूप लक्ष्मी भी आगे जन्म मरण धारण न करनेवाले महा मुनियोंके द्वारा प्राप्त होती है इसलिये उसको अप्यजांका कहते हैं। फिर वह लक्ष्मी अमलि है। मल् शब्दका अर्थ अभिमान है। तथा अभिमान न रहनेको अमल् कहते हैं। लि का अर्थ प्राप्त करना वा ग्रहण करना है। जिसके संबंधसे लोगोंमें अभिमान न रहे जिसके मानस्तंभको देखने मात्रसे ही अभिमान

नष्ट होजाय उसको अमति कहते हैं। समवशरणमें भी किसी।। अभिमान नहीं रहता इसलिये उसको अमतिक कहते हैं। अंतरंग पक्षमें–अ का अर्थ काम क्रोधादिरूप कर्म है। वह जिसमें हो उसको अम्-त् कहते हैं। काम क्रोधादिक कर्मोंके उदयसे होते हैं इसलिये कर्मोंको अमत् कहते हैं। तथा लिका अर्थ नाश करना है। जिसके निमित्तसे भव्य जीव कर्मोंका नाश करदें उसको अमलि कहते हैं। अनन्त चतुष्टयरूप लक्ष्मी के निमित्तसे ही कर्मोंका नाश होता है इसलिये उसको अमलि कहते हैं। फिर वह लक्ष्मी सुमति है। सु का अर्थ श्रेष्ठ है और मतिका अर्थ ज्ञान है। जिसके निमित्तसे श्रेष्ठ ज्ञान हो उसको सुमति कहते हैं। समवशरणके निमित्तसे भी जीवोंको सम्यग्ज्ञान प्रगट होता है। तथा अनंत चतुष्टयके निमित्तसे भी सम्यग्ज्ञान प्रगट होता है इसलिये उन दोनों प्रकारकी लक्ष्मीको सुमति कहते हैं। इन सब विशेषणोंसे सुशोभित होने वाली भगवान् मुनिसुव्रतनाथकी अंतरंग बहिरंग लक्ष्मी हमको पुष्पदंत अर्थात् पुष्पदंतसे रक्षा करो। पुष्पत् शब्दका अर्थ संसारमें परिभ्रमण कराना है। और अं का अर्थ व्याधि है। जो संसारमें परिभ्रमण करावे ऐसी व्याधि वा व्यसनको पुष्पदंत कहते हैं। पुष्पदं शब्दसे पंचमी अर्थमें तस् प्रत्यय होकर पुष्पदंत बनता है। भगवान् मुनिसुव्रतकी अंतरंग बहिरंग लक्ष्मी पुष्पदं अर्थात् संसारमें परिभ्रमण करानेवाली व्याधियोंसे अथवा ऐसे सर्व व्यसनोंसे मेरी रक्षा करो। मैं कैसा हूं। ऊन अर्थात् मनुष्य पर्यायको धारण करता हूं। तथा श्री जगन्नाथ-धीर हूं। तीर्थंकर परमदेवको श्रीजगन्नाथधी कहते हैं। र शब्दका अर्थ ध्वनि वा शब्द वा उपदेश है। " समस्त भव्य जीवों को श्री तीर्थंकर परमदेवका ही ध्यान करना चाहिये " इसप्रकार जिसका उपदेश सदा होता रहे उसको श्रीजगन्नाथधीर कहते हैं। मैं भी सदा यही उपदेश देता रहता हूं। इसलिये मैं श्रीजगन्नाथधीर हूं। हे मुनिसुव्रत भगवान् आपकी अंतरंग बहिरंग लक्ष्मी ऐसे हमको संसार की व्याधियोंसे रक्षा करो।

इति श्री मुनि सुव्रत जिन स्तुति ॥

अथ नमिनाथस्तुतिः ।

श्रेयान्श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोथधर्मो,
हर्यंकः पुष्पदंतो मुनिसुव्रतजिनोनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः ।
शांतिः पद्मप्रभोरो विमलविभुरसौ वर्द्धमानोप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मा सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ।

टीका— असौ नमिः श्रीनमिनाथतीर्थंकृत श्रीजगन्नाथधीरमवतात् । किमर्थम् ? श्रे शृणाति पापं दुःखं वेति श्र कल्याणं तस्मै श्रे कल्याणाय । असौ कः यः नमिः यान् याचकान् अथवा अतिकुत्सितान् अज्ञानान रुजालग्नान् वा अवति सोसौ श्रीजगन्नाथधीरमपि अवतात । " याचके योतिकुत्सने यो वातारिरुजालग्ने " उक्त हि— " अज्ञानवत्यपि सदैव कथंचिदेव ज्ञानं त्वयि " इति । अपिशब्दोत्र चकारार्थं । च पुनः यः नमिः मां । म पापं तदेव अं व्याधिरिति मां । अथवा मात् पापात् अं व्याधिरिति मां कर्मपदं । आम दूरीकृतवान । असु क्षेपणे । जनानामित्यध्याहारः । उकारश्च्युतोत्र । स एवंविधः श्रीजगन्नाथधीरमपि अवतात् । किंविशेषणगोचरः । श्रीवा । श्रियं वृणोति श्रीवा । क्विप्‌न्तः । अथवा श्रीर्लक्ष्मीस्तस्या ईः निषेधो यस्मादिति श्रीः पापं श्रियं वायति आच्छादयति श्रीवा, सेवकेभ्यः सुखदः । पुनः पूज्यः पूजनीयः । अथवा, षण्मासात्पूर्वं पूः पवित्रा हिरण्मयी ज्या भूर्यस्मादिति पूज्यः । अथवा मेरौ जन्मकल्याणसमये जलैः पूः पवित्रा ज्या यतः इति पूज्यः । " नूनं नयस्तदाप्लवनमिषेणाम्ममा विमाः " इति । अथवा विहारेण पूः ज्या यस्मादिति पूज्यः । पुनः वृषभजिनपतिः । वृषभानां रुचिरकान्तीनां जिनानां सुप्रमार्यादीनां सप्तदशगणेशानां पतिः वृषभजिनपतिः । पुनः सन अतिशयेन श्रेष्ठः । पुनः श्रीद्रुमांकोथधर्मोहर्य्यंकः । श्रीद्रुमांकः समवसरणं । उवत समुद्रवत् थधर्माः

पधर्मा:न्याय्या प्राधारा वा। देवों तेषु वा ऊर्ध्वेषु विचारेषु रिः भ्रमो
षां ते उपधर्मोदयः। अनन्तधर्मोपदार्थवस्तुविचारानभिज्ञाः।
कः पुष्पदन्ता इति। उमा ज्ञानेन युक्तः कः पुष्पदः
इति अंकः। "क कामदन्दर्पो." इति। पुष्पनश्च ते
अन्ता जीवादिपदार्था इति पुष्पदन्ता.। अंकमा ज्ञानध्वनिना।
पुष्पदन्तेषु मत्तः विरक्तो येषां ते अंकःपुष्पदन्तारः। एतेन
जिनोक्तनिपुणा मतिश्रुतावधियुता मुनय उपधर्मोदयश्च अंकः-
पुष्पदन्तारश्च उपधर्मोदयाः पुष्पदन्तारः। ते च ते मुनयः उप-
धर्मोदयंक पुष्पदन्तोमुनयः। श्रीद्रुमांके उपधर्मोदयंकःपुष्पदन्तो-
मुनिभिः अपण्डितैः पण्डितैश्च सुभक्ता परिवृताः जिना यस्य स
श्रीद्रुमांकोपधर्मोदयंक पुष्पदन्तोमुनिगुप्तजिनः। पुनः अनन्त-
दावक्श्रीसुपार्श्व। अनन्तवाक् अनन्तचतुष्टयनाम्नी श्रीसमवसर-
णादि ते द्वे श्रीसुपार्श्वे स्य सोऽनन्तवाक्श्रीसुपार्श्वः पुनः
शान्तिः। पापं हिंसादिकं शान्तयति शांतिः। तदुक्तम्
"अहिंसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्म परमम्" इति। पुनः पद्म-
प्रभः। टिमाभ। भृष अ० निर्भय। पुनः विमलविभुः विम-
लधामी विभुर्वृत। अथवा विमलानां जगते। चक्रगादीनां विभु-
र्विमलविभुः। पुन वर्द्धमानः जनानामनादिमिथ्यात्वगाघुरोगोपशा-
न्तये वर्द्धमान इव वर्द्धमानः एरण्डसमान। "दन्तु पञ्च.ङगुलामेव
वर्द्धमानव्यपदेशकाः इत्यमरः"। पुनः अजांकोमहि अजस्य भ्रमणः
अंक आगनं कमलमित्यजांकः।' विरंचि कमलासनः' इति।
तस्य उः प्राप्तिः रक्षण वेति अजांकोः अजांकार्थमहते विभर्ति
अजांकोमहि। उत्पलाक इत्यर्थः। पुनः नेमि ने नरे भमिः
नास्ति मोहिमा यस्येति नेमिः। अत्र मनुष्या अलुक। दयालुः।
उपलक्षणमेतत एकेन्द्रियादिपञ्चेन्द्रियाणां रक्षणम्। पुनः सुमतिः
सुः पूजनीया मतिर्यस्य सोय सुमतिः।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुतादिकाऽपरप्रकाशकाया पण्डितजगन्नाथनिर्मिताया
एकविंशतिजिनस्य श्रीनमिनाथस्य स्तोत्र समाप्त। एकाधिशतांक पूर्णः

अब आगे इकईसवें तीर्थंकर श्री नमिनाथकी स्तुति करते हैं।

अन्वय— श्रीवा पूज्यः वृषभजिनपतिः मम श्रीद्रुमांकोपधर्मोऽर्यकः पुष्पदन्तो मुनिसुव्रतजिनः अनन्तवाकश्रीसुपार्श्वः शान्तिः पद्मप्रभः अरः विमलविभुः वर्द्धमानः अजांको मल्लिः नेमिः सुमतिः असौ नमिः अपि मां आम यथा यान् अवति तथा श्रीजगन्नाथधीरं श्रे अवतु।

अर्थः— जो भगवान नमिनाथ स्वामी श्रीवा हैं। श्री शब्दका अर्थ लक्ष्मी है। तथा वा शब्द वृ धातुसे बना है जिसका अर्थ स्वीकार करना है। जो अन्तरंग बहिरंग लक्ष्मी को स्वयं स्वीकार करें उनको श्रीवा कहते हैं। भगवान नमिनाथको भी वह लक्ष्मी स्वयं प्राप्त हुई है इसलिये उनको श्रीवा कहते हैं। अथवा श्री लक्ष्मीको कहते हैं। ई का अर्थ निषेध है। जिससे श्री अर्थात् लक्ष्मीका ई अर्थात् निषेध हो ऐसे पापको श्री ई-श्री कहते हैं। वा का अर्थ आच्छादन करना है। जो पापोंको आच्छादन करें उनको श्रीवा कहते हैं। भगवान नमिनाथ भी सेवकोंके पापोंको नाश कर उन्हें सुख देते हैं इसलिये उनको श्रीवा कहते हैं। फिर जो भगवान पूज्य हैं पूजनीय हैं। अथवा पू का अर्थ पवित्र है और ज्या पृथिवीको कहते हैं। जिनके पुण्योदयमें यह ज्या अर्थात् पृथ्वी जन्मसे पन्द्रह महिने पहलेसे ही पू अर्थात् सुवर्णमयी पवित्र हो जाय उनको पूज्य कहते हैं। भगवान नमिनाथके जन्म कल्याण कसे पहले रत्नोंकी वर्षा हुई था इसलिये उनको पूज्य कहते हैं। अथवा जिनके जन्म कल्याणके समय यह ज्या अर्थात् पृथ्वी मेरुपर्वतपर किये हुए अभिषेकके जलसे पवित्र हो गई हो उनको पूज्य कहते हैं। जन्म कल्याणके समय इन्द्रोंने मेरुपर्वतपर जो भगवान् नमिनाथका अभिषेक किया था उसमें यह समस्त पृथ्वी पवित्र होगई थी इसलिये भगवानको पूज्य कहते हैं। लिखा भी है। " नूनं नयस्तदामुवनमपेकाम्भसा विभोः " अर्थात् ' भगवानके अभिषेकके जलसे उस समय

मेरु पर्वतपर नदियां वह निकली थीं। " अथवा भगवान नेमिनाथने विहार कर इस समस्त ज्या अर्थात् पृथ्वीको पू अर्थात् पवित्र कर दिया इसलिये उनको पूज्य कहते हैं । फिर जो भगवान वृषभजिनपति हैं। वृषका अर्थ श्रेष्ठ है । भ का कान्ति है। जो श्रेष्ठ कान्तिको धारण करें उनको वृषभ कहते हैं । जिन शब्दका अर्थ गणधर है और पति का अर्थ स्वामी है । जो श्रेष्ठ कान्तिको धारण करने वाले गणधरों के स्वामी हों उनको वृषभजिनपति कहते हैं । भगवान् नेमि-नाथ भी श्रेष्ठ कान्ति को धारण करनेवाले गुणधर्य आदि सब गणधरोंके स्वामी हैं इसलिये उनको वृषभजिनपति कहते हैं। फिर जो भगवान सन् अर्थात् भलिप्रकार श्रेष्ठ हैं। फिर जो भगवान् श्रीद्रुमांक-परमोदयैक पुष्पदन्तोपुनिपुरनजिन हैं। श्रीद्रुमका अर्थ कल्पवृक्ष है। अंकका अर्थ गोद है। जिनकी गोदमें वा जिनमें कल्पवृक्ष हों ऐसे समव-सरणको श्रीद्रुमांक कहते हैं। उ शब्दका अर्थ समुद्र है, य शब्दका अर्थ अत्यंत गंभीर है, धर्म शब्दका अर्थ आचरण है । जो उ अर्थात् समुद्र के समान य अर्थात् अत्यंत गंभीर धर्म अर्थात् आचरण हों, न्यायपूर्वक आचरण हों उनको उयधर्म कहते हैं । ऊह शब्दका अर्थ विचार है और री शब्दका अर्थ भ्रम है। जिनके न्यायपूर्वक आचरणोंके विचारमें भी भ्रम हो जो भगवान् वीतराग सर्वज्ञके कहे हुए आचरणोंको भी ठीक न समझते हों अथवा अनेक धर्मात्मक पदार्थों के विचार करनेमें निपुण न हों ऐसे अज्ञानी मिथ्यादृष्टियोंको उयधर्मोहरि कहते हैं। अं शब्दका अर्थ ज्ञान है । क शब्दका अर्थ शब्द है। " क, काक-शब्दयोः" अर्थात " क का अर्थ कौआ और शब्द है "। जो शब्द ज्ञानपूर्वक हो उनको अंक कहते हैं । पुष्पन्नु शब्दका अर्थ विक-सित होना है। अन्नशब्दका अर्थ जीवादिक पदार्थ है जो अपनी अपनी पर्यायोंके द्वारा सदा विकसित होते रहें ऐसे जीवादिक पदा-र्थोंको पुष्पदन्त कहते हैं । उ का अर्थ तर्क वितर्क करना है । तथा मुनि शब्दका अर्थ साधु है । जो अंक अर्थात् ज्ञानपूर्वक निकले हुए

शब्दोंके द्वारा पुष्परन्त अर्थात् अपनी गुणपर्यायों को प्राप्त होनेवाले जीवादिक पदार्थोंमें उ अर्थात् तर्क वितर्क या विचार करें ऐसे मुनियोंको अंकःपुष्पदन्तोमुनि कहते हैं। मतिज्ञान श्रुत ज्ञान अवधिज्ञानको धारण करनेवाले मुनि ही अपने सम्यग्ज्ञानमें भरे हुए शब्दोंके द्वारा पदार्थोंका विचार करते हैं इसलिये ऐसे मुनियोंको अंकःपुष्पदन्तोमुनि कहते हैं। सुव्रतशब्दका अर्थ घिरे रहना है और जिन शब्दका अर्थ गणधर है। जिनके श्रीद्रुमांक अर्थात् समवसरणमें जिन अर्थात गणधर देव उथधर्मोदरि अर्थात् वीतराग सर्वज्ञदेवके वचनोंमें भी भ्रम करनेवाले अज्ञानी मिथ्यादृष्टी मुनि और अंकःपुष्पदन्तोमुनि अर्थात् सम्यग्ज्ञान पूर्वक कहे हुए शब्दोंके द्वारा जीवादिक पदार्थोंमें विचार करनेवाले अवधि ज्ञानी मुनि इन दोनोंमें सुव्रत अर्थात् घिरे हुए हों उनको श्रीद्रुमांकोथधर्मोदर्यंकःपुष्पदन्तोमुनिसुव्रतजिन कहते हैं। भगवान नमि नाथके समवसरणमें भी गणधरदेव मुनि और मिथ्यादृष्टि मुनि सबके साथ विराजमान थे इसलिये उन भगवानको श्रीद्रुमांकोयधर्मोदर्यंकपुष्पदन्तोमुनिसुव्रतजिन कहते हैं। फिर जो भगवान अनन्तवाक्श्रीसुपार्श्व हैं। अनन्त शब्दका अर्थ अनन्त चतुष्टय है। वाक् शब्दका अर्थ नाम है। तथा श्री शब्दका अर्थ लक्ष्मी है। जिस श्री अर्थात् लक्ष्मीका वाक् अर्थात् नाम अनन्त चतुष्टय हो उसको अनन्तवाक्श्री कहते हैं। तथा श्री शब्दसे समवसरण आदि बहिरंग लक्ष्मी भी लेलेनी चाहिये। सुपार्श्व शब्दका अर्थ समीप है। जिनके समीपमें अनंत चतुष्टयरूप अंतरंग लक्ष्मी और समवसरण आदि बहिरंग लक्ष्मी हो उनको अनन्तवाक्श्रीसुपार्श्व कहते हैं। भगवान् नमिनाथके समीपमें भी दोनों प्रकारकी लक्ष्मी शोभायमान थी इसलिये उनको अनंतवाक्श्रीसुपार्श्व कहते हैं। फिर जो भगवान शांति हैं। जो हिंसादिक पापोंको शांत करें उनको शांति कहते हैं। भगवान् नमिनाथ भी पापोंको नाश करनेवाले हैं इसलिये वे शांति कहलाते हैं। लिखा भी है " अहिंसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्म परमम् " अर्थात् ' अहिंसा धर्मको माननेवाले

ही परम ब्रह्मको प्राप्त होते हैं यह बात संसारभरमें प्रसिद्ध है"। फिर जो भगवान् पद्मप्रभ है। पद्का अर्थ प्राप्ति और मा का अर्थ लक्ष्मी है। जिसमें लक्ष्मीकी प्राप्ति हो ऐसे सुवर्णको पद्म कहते हैं। जिनकी प्रभा सुवर्णके समान हो उनको पद्मप्रभ कहते हैं। भगवान् नमिनाथके शरीर की प्रभा भी सुवर्णके समान थी इसलिये उनको पद्मप्रभ कहते हैं। फिर, जो भगवान् अर हैं। अका अर्थ नहीं है और रका अर्थ धन है। जिनके पास र अर्थात् धन, अ अर्थात न हो उनको अर कहते हैं। भगवान नमिनाथ भी चौवीसों प्रकारके परिग्रहसे रहित निर्ग्रंथ हैं इसलिये उनको अर कहते हैं। फिर वे भगवान विमलविभु हैं। विमल निर्मलको कहते हैं और विभु स्वामीको कहते हैं। भगवान नमिनाथका आत्मा अत्यंत शुद्ध है और वे सबके स्वामी हैं इसलिये विमलविभु कहलाते हैं। अथवा पुण्यकर्मके उदयसे होनेवाले चक्रवर्ती आदिके जो स्वामी हों उनको विमलविभु कहते हैं। भगवान नमिनाथ भी जयसेन चक्रवर्ती आदिके स्वामी हैं इसलिये उनको विमलविभु कहते हैं। फिर जो भगवान वर्द्धमान हैं। वर्द्धमान शब्दका अर्थ एरंड है। लिखा भी है "चञ्चुः पञ्चांगुलाऽमंड वर्द्धमानव्यडंबकाः" अर्थात् चंचु पंचांगुल अंड वर्द्धमान व्यडंबक ये सब एरंडके नाम हैं। एरंड वायुरोगको दूर करता है। भगवान नमिनाथ भी लोगोंके अनादि कालसे लगे हुये मिथ्यात्व रूपी वायुरोगको नाश करनेके लिये वर्द्धमान अर्थात् एरंडके समान हैं इसलिये उनको वर्द्धमान कहते हैं। फिर जो भगवान अजांकोमलि हैं। अज ब्रह्माको कहते हैं और अक आसनको कहते हैं। ब्रह्माके आसनको अजांक कहते हैं। ब्रह्माका आसन कमल है इसलिये कमलको अजांक कहते हैं। उ शब्दका अर्थ प्राप्ति है। अजांक अर्थात् कमलकी उ अर्थात प्राप्ति वा रक्षाको अजांको कहते हैं। तथा मल धातुका अर्थ धारण करना है। जो कमलकी रक्षा वा प्राप्तिको मलि अर्थात धारण करें उनको अजांकोमलि कहते हैं। भगवान नमिनाथ भी कमलका चिन्ह धारण करते हैं

इसलिये उनको अजांकोमस्ति कहते हैं। फिर जो भगवान 'नेमि' हैं। न का अर्थ मनुष्य है। उसकी सप्तमीका ने बनता है। अं का अर्थ नहीं है और मि का अर्थ हिंसा है। जिनके हिंसा न हो उनको अमि कहते हैं। जो ने अर्थात् मनुष्यों में किसी प्रकारकी हिंसा न करें उनको नेमि कहते हैं। नेमिका अर्थ दयालु है। और यह उपलक्षण है। वे भगवान एकेन्द्रियसे लेकर पंचेन्द्रिय तक समस्त जीवोंपर दयालु हैं सबकी रक्षा करते हैं इसलिये नेमि हैं। यहांपर अलुक् समास है। सप्तमी विभक्ति का लोप नहीं हुआ है। फिर जो भगवान 'सुमति' हैं। सु का अर्थ पूज्य है और मति का अर्थ ज्ञान है। जिनका ज्ञान पूज्य हो उनको सुमति कहते हैं। भगवान नमिनाथका केवल ज्ञान भी पूज्य है इसलिये उनको सुमति कहते हैं। ऐसे वे श्री नमिनाथ इक्कीसवें तीर्थंकर शं अर्थात् कल्याण करनेके लिये मुझ जगन्नाथ पंडित की भी रक्षा करो। मी मका अर्थ पाप है और शं का अर्थ व्याधि है। अंस का अर्थ दूर करना है। जिस प्रकार भगवान्ने पाप रूप व्याधि को दूर किया है। अथवा पापसे उत्पन्न हुई लोगोंकी व्याधियों को दूर किया है। य शब्दका अर्थ—याचक कुत्सित वा रोगी है। लिखा भी है; "याचके योऽतिकुत्सिते। यो जानरि रुजागते" अर्थात् य शब्दका अर्थ याचक, कुत्सित, उत्पन्न होना और रोगी है। य शब्दका द्वितीया का बहुवचन यान् बनता है। जिसप्रकार भगवान नमिनाथने यान् अर्थात् याचकोंकी रोगियोंकी वा कुत्सित अर्थात् अज्ञानियोंकी रक्षा की है उसी प्रकार वे अर्थात् पाप वा दुःखोंको नाश करनेवाले कल्याणके लिये इस स्तुतिके करनेवाले मुझ विद्वद्वर पंडित जगन्नाथकी भी रक्षा कीजिये।

इति श्री नमिनाथ स्तुति।

---

* यहांपर [illegible] शब्द है। इसको छोड़कर अर्थ किया गया है।

स श्रीद्रुमांकः । विवाहार्थं रचिततोरणः । तस्मादुत्थः उत्पन्नः धर्मः दीक्षामतां यस्य स श्रीद्रुमांकोत्थधर्मः । अथवा श्रीद्रुमांके राजलोलुपवासुदेवनिर्मापितवाटस्थनानाजीवरादिपूत्कृतिमाकर्ण्य उत्थः उत्पन्नः धर्मो दयालक्षणो यस्य स श्रीद्रुमांकोत्थधर्मः । त्वदर्थमेते सत्वा हन्यन्ते इति श्रुत्वा धिग्विवाहं धिग् राज्यं चेति मत्वा ऊर्जयन्तमाजगाम इति । पुनः अरः । नास्ति रा रमणी राजीमती य स्य सोऽरः । एतेन स्त्रीत्यागं कृत्वाऽददे दीक्षाम् । पुनः नमिः समुद्रविजयकृष्णोग्रसेनादीन् नामयति नमिः । स्वामिन् क्षमस्वापराधमिति ब्रुवाणाः । अथवा नमिरिव नमिस्तदनंतरत्वात् । पुनः ऋषभजिनपतिः । आय नारायणाय ऋषभः श्रेष्ठः जिनः कामः इति ऋषभजिन । वासुदेवप्रियाः कामक्रोधादयः । तस्य तेषां इति पतिः ऋषभजिनपतिः । एव हि कामं जित्वा तत्पतिरजनिष्ट । अत्र निदर्शनं अन्योऽपि कश्चन बली राजा रिपुं विजित्य तत्पतिर्भवति । अन्यथा तदधीन एवेति समाधिः । यथा वासुदेवस्तदधीनो न तथा नेमि । पुन वा उपमार्थे । पद्मप्रभः नीलपद्माभः । अथवा पद्मस्य बलभद्रस्य प्रभा इव प्रभा यस्य स पद्मप्रभ । नीलवर्णैकदेशत्वात् । यथा पुरुषोऽयं सिंह । उक्तं च " नाल्पत्वमल्पगयिक्षिपुरिति " । पुनः श्रद्धमा । श्रद्ध मोक्षम मन्यत मा त्यक्त्वा इति श्रद्धमा । राजन्यश्रद्धवत् । अथवा श्रद्धे पूर्वापरदोषरहिते मे प्रमाणे प्रत्यक्षपरोक्षे यस्य स श्रद्धमा । अथवा श्रद्धा मा केवलज्ञानं यस्य स श्रद्धमा सोमभासत । केवलज्ञानविराजमानः । पुनः पुष्पद् । पुष्णाति सुखं भक्तानामिति पुष । पुष् पद यस्य सोऽयं पुष्पद सेवकमुकुटवाचरणकमल । पुन श्रीवासुपूज्य । श्रीवासुमि पाकशासनैः पूज्यः श्रीवासुपूज्य । तदुक्त त्रिदशेन्द्रमौलिमणिरत्नकिरणविसर्गोपचुम्बितं पादयुगलममलमिति । अथवा श्रीवासुपूज्यश्रीवा आम पूज्य यो नेमि आम दिदीपे । आम दीप्त्यादानयोश्च । अथवा आसीति पूर्व योऽयम । यः नेमिरत्न आम दीक्षां

और म शब्दका अर्थ मानना है। जो सबको छोडकर मोक्षको ही मानें उनको ऋद्धमा कहते हैं। अथवा ऋद्धका अर्थ पूर्वापर दोष रहित है। और म का अर्थ प्रमाण है। जिनके प्रत्यक्ष परोक्ष दोनों प्रमाण पूर्वापर दोष रहित हों उनको ऋद्धमा कहते हैं। अथवा ऋद्ध शब्दका अर्थ सहित है और मका अर्थ केवलज्ञान है जो केवलज्ञान सहित हों उनको ऋद्धमा कहते हैं। भगवान् नमिनाथ भी केवलज्ञान सहित विराजमान हैं। फिर जो भगवान् पुष्पद् हैं। जो भक्तोंको सुखकी पुष्टि करें उनको पुष् कहते हैं। जिनके चरण कमल भक्तोंको सुख देनेवाले हों उनको पुष्पद् कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीवासुपूज्य हैं। श्रीवासु इन्द्रको कहते हैं। इन्द्रोंके द्वारा जो पूज्य हों उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं। अथवा इस शब्दको उकारच्युत मानकर श्रीवा आस पूज्य ऐसे तीन पदच्छेद करने चाहिये। और उनके अर्थ इस प्रकार करने चाहिये। जो भगवान् श्रीवा हैं। श्रीका अर्थ मोक्षलक्ष्मी है और वा का अर्थ वरण करना वा स्वीकार करना है जो संसार की लक्ष्मी का त्याग कर मोक्ष लक्ष्मी को स्वीकार करें उनको श्रीवा कहते हैं। तथा वे पूज्य हैं। ऐसे वे श्री नेमिनाथ भगवान् आस अर्थात् हुए थे। आस धातुका अर्थ होना है। अथवा दैदीप्यमान अर्थको कहनेवाली अस् धातु से आस बनाना चाहिये। और फिर ऐसा अर्थ करना चाहिये कि ऐसे वे श्री नेमिनाथ भगवान दैदिप्यमान हो रहे थे। अथवा आस धातुका अर्थ ग्रहण करना भी है। भगवान् नेमिनाथने स्त्रीका त्याग कर आस अर्थात् दीक्षा ग्रहण की थी। फिर जो भगवान् हर्यंक हैं। जो हरिवंशमें चिन्हके समान प्रसिद्ध हों उनको हर्यंक कहते हैं। फिर वे भगवान् अमुनिमुव्रतजिन हैं। जो मुनि न हों उनको अमुनि कहते हैं। प्रकरण वशसे अमुनि शब्दसे बलदेव कृष्ण लेने चाहिये। मुव्रतका अर्थ घिरे रहना है। जिनके गणधर कृष्ण बलदेव के साथ विराजमान हों उनको अमुनिमुव्रतजिन कहते हैं। भगवान् नेमिनाथ के समवसरणमें वरदत्त आदि ग्यारह गणधर कृष्ण बलदेव

के साथ विराजमान थे इसलिए भगवानको अमुनिसुव्रतजिन कहते हैं। फिर जो भगवान् अनन्तवाक् हैं। अनन्त शब्दका अर्थ नारायण है। वाक् का अर्थ वचन है। जिनके वचन नारायणके लिए हों उनको अनन्तवाक् कहते हैं। यह बात प्रसिद्ध है कि कृष्णने भगवान नेमिनाथसे ही सम्यक्त्वरूपी रत्न प्राप्त किया था इसलिए उनको अनन्तवाक् कहते हैं। फिर जो भगवान् अजांक हैं। अ शब्दका अर्थ नारायण है। जो नारायणसे उत्पन्न हों ऐसे प्रद्युम्न आदि नारायणके पुत्रोंको अज कहते हैं। वे जिनके समीपमें हों उनको अजांक कहते हैं। फिर जो भगवान् नमल हैं। कर्मोंको जीतनेके लिए महामल्ल हैं। अथवा जिनसे मदका नाश हो उनको मल्ल कहते हैं। भगवान् नेमिनाथने बालक अवस्थामें शंखध्वनि कर कृष्णका मद नाश किया था तथा निर्ग्रंथ अवस्थामें मानस्तंभ, कोट, तीन छत्र बारह सभा स्तूप आदि समवसरणकी लोकोत्तर विभूति के द्वारा कृष्णका मद चूर किया था। समवसरण की विभूति को देखकर कृष्णको भी यह चिंता होगई थी कि यह ऐसी विभूति इनको कैसे प्राप्त होगई। फिर जो भगवान् मांसुमति हैं। जिनका मति अर्थात ज्ञान म अर्थात् चन्द्रमाके समान निर्मल है अर्थात् ज्ञानके द्वारा सु अर्थात मान्य हो उनको मांसुमति कहते हैं। फिर जो भगवान् सन् हैं जन्म मरण रहित अथवा आठों कर्मोंसे रहित सर्वश्रेष्ठ हैं। फिर जो भगवान् श्रीजगन्नाथ हैं। अनेक प्रकारकी लक्ष्मी से सुशोभित ऐसे जगतके नाथ इन्द्रादिकोंके द्वारा अथवा कृष्ण बलदेव आदिके द्वारा जो चिंतन किये जांय उनको श्रीजगन्नाथघी कहते हैं सब भगवान नेमिनाथका ध्यान करते हैं अथवा इस ग्रंथके बनानेवाले विद्वद् पंडित जगन्नाथके द्वारा जो ध्यान किये जांय उनको श्रीजगन्नाथघी कहते हैं। ऐसे ये श्री अरिष्ट नेमिनाथ बाईसवें तीर्थंकर हैं अर्थात् अनेक व्याधियोंसे दुःखी हुए हम लोगोंकी भी रक्षा करो। हे भगवन् ! जिस प्रकार आपने अन्य जीवोंकी रक्षा की है उसी प्रकार हम लोगों की र

रक्षा कीजिये। नः इसको द्वितीया न मान कर षष्ठी मानना चाहिये। और अव धातुका अर्थ नाश मानना चाहिये ! फिर ऐसा अर्थ करना चाहिये कि वे भगवान् नेमिनाथ स्वामी हम लोगोंके अन्त अर्थात् दुःखोंको नाश करो। अथवा नः को चतुर्थी विभक्ति मानना चाहिये। अं शब्दका अर्थ सुख वा लक्ष्मी लेना चाहिये और अव धातुका अर्थ उत्पन्न करना चाहिये। फिर ऐसा अर्थ करना चाहिये कि वे श्रीनेमिनाथ स्वामी हम लोगोंके लिये सुख वा लक्ष्मी उत्पन्न करें।

इति श्रीनेमिनाथ स्तुति ॥

—०—

अथ पार्श्वनाथस्तुतिः।

श्रेयान्श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोऽथधर्मो,
हर्यंकः पुष्पदंतो मुनिसुव्रतजिनोऽनंतवाक् श्रीसुपार्श्वः।
शांतिः पद्मप्रभोऽरो विमलविभुरसौ वर्द्धमानोऽप्यजांको,
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम्।

टीका—अथ श्रीनेमिनाथस्तुतेरनन्तरम्। हर्यंकः हरिः सर्पः अर्थाद्धरणेन्द्रः अंके यस्य स हर्यंकः श्रीपार्श्वनाथदेवः। अथवा श्रीसुपार्श्वः श्रिया समवसरणादिना शोभनश्चासौ पार्श्वः पार्श्वनाथ इति श्रीसुपार्श्वः। एतद्विशेष्यं हर्यंक इति विशेषणम्। अथवा हर्यंक इति विशेष्यं श्रीसुपार्श्व इति विशेषणम्। तदा इत्यमर्थः। किंलक्षणो हर्यंकः श्रीसुपार्श्वः। श्रीसुपार्श्व इव श्रीसुपार्श्वः। सुपार्श्वसदृश इत्यर्थः। हरिद्वर्णत्वात्। स श्रीसुपार्श्वनाथः अर्थात् विंशजिनः परिवृढः मामपि जगन्नाथनामानमपि अवतु रक्षतु किंलक्षणः सन्। सन साधु। सन् मयि जगन्नाथनाम्नि पण्डितं। किंलक्षणं मां धर्यांग्म्। धर्धिया अतिगम्भीरबुद्ध्या श्रीपार्श्वनाथं स्तौति स्वधीर्यवाति धधीरस्तं धधीरम्। इत्येकान्वयः।

अथवा यं स्तोकार्थे नपुंसकम् । धधिया स्तोत्रपुदय रवीति धधीरस्तं स्तोकधियम् । "शक्त्यप्यशक्तस्तत्र पुष्पकीर्ते स्तुन्यो मवतः किमु मादृशाम् " इति । अथवा विलक्षणे अधधीरम् । नास्ति धो मिथ्यावाचको रवो यस्यां सा अधा । एवंविधा धीर्बुद्धिरित्यधधीः । तया रौति जिनमिति अधधीर-स्तमधधीरम् । सुदृष्टिमित्यर्थः । धा अधे सत्यवाचके जैनमते धीरं पण्डितम् । अथ किलक्षणः श्रीपार्श्वनाथः श्रीजगन्ना । श्रीजगतां त्रिलोकानां ना नाथ इति श्रीजगन्ना । त्रिजगत्पतिरित्यर्थः । अत्र नृशब्दः ऋकारान्तः । वचनं हि " नृश-ब्दोपि नरे नाथे " ना नरौ नरः इत्यादि । पुनः सुमतिः सुमस्य महामायाविनः कमठस्य तिः तिरस्कारो यस्मादिति सुमतिः । तिरिति नामैकदेशो नाम्नि । " मायाविनि कुधामन्त्रे मः " । पुनः कौमलिः । का अगनयः पवना वा । उशब्देन जलानि । ते विद्यन्ते यस्य स कोमान् । प्रकीर्णकवलाहकापुपद्रवः कमठः । तस्य लिर्नाशो यस्मादिति कोमलिः । वचनं हि " तमालनीलैः सधनुस्तडिद्गुणैः प्रकीर्णभीमाशनिवायुवृष्टिभिः । बलाहकैर्वैरिवशी-कृतादुतो महामना यो न चचाल योगतः " इति । अन्यच्च "क-मठस्य धमकेलीरिति " । एवं चेत्तर्हि शत्रून् घातुकस्तर्हि भावकर्म-वशीति चेन्न। कथम् पुन नमि नास्ति मीर्हिंमा यस्य सोयं नमिः। दयालु । शत्रुमित्रसमानः । यतो हि—" उपैति भक्त्या सुमुखः सुखानि त्वयि स्वभावाद्विमुखश्च दुःखम् । " इति । पुनः नेमिः नेमिरिव नेमि । तदनन्तरत्वात् । अन्यदुपमानं नास्ति अतो नेमेरोपमा। पुनः श्रीवासुपूज्यः श्रिया पद्मावत्या सहित वासुः वासुकि धरणेन्द्रस्तेन पूज्यः श्रीवासुपूज्य । नामैकदेशो नाम्नि वासुरिति वासुकिः । यच्च " बृहत्फणामण्डलमण्डपेन यं स्फुरत्तडित्पिङ्गरुचोपसर्गिणम् । जुगूह नागो धरणो धराधरं विरागसन्ध्यातडिदम्बुदो यथा " इति । अन्यत्रापि " पार्श्वो

नागेन्द्रपूजितः " । पुनः श्रेयान् इन्द्रादिभिरपि पूज्यः । एतेन केवलावगमः । पुनः वृषभजिनपतिः । वृषभा धर्मभारवहने वृषभा इव वृषभाः धर्मधुरंधरीणास्तेच ते जिनाः स्वयंभूमुख्या दश गणधरास्तेषां पतिः वृषभजिनपतिः । पुनः श्रीत् द्वादशगणे श्रियं अयति श्रीत् । मुहु रुमांकः । " मेरौ परिश्रमे मानों रुः पुंसि रसने स्त्रियाम् " । रुः परिश्रमः अर्थवशात् संसारभ्रमणं तस्य मः मारणं निवारणं अंके सन्निधे यस्य स रुमांकः पुनः धर्मः धर्मवान् । पुनः पुष्पदन्तः कंदर्पहन्ता । अष्टादशसहस्र-शीलधारी । पुनः अरः नास्ति रा रमणी यस्य सोरः । अपरिणीत-त्वात् । पुनः मुनिसुव्रतजिनः । मुनिभिः मतिश्रुतावधिमनःपर्ययचो-धराद्भिः सुव्रतः मुनिसुव्रतः स चासौ जिनश्च मुनिसुव्रतजिनः । अथवा मुनिषु सुव्रतं स्वाचरणं यस्मादिति मुनिसु॰तः सचासौ जिनश्च मुनिसुव्रतजिन । पुन अनन्तवाक् अनन्तसरस्वतीकः । " गीर्वाग्वाणी सरस्वती " । अथवा अनन्तो शेषशार्ङ्गिणौ । अन-न्तात् शेषाद्गणेन्द्रात् वायोऽशावातस्य अक निवारणं यस्य सो-नन्तवाक् । ' अंशावाते तथा मेत्र मरुमन्त्रे मृनात्मक " । "वृष्यां कुलवडस्तु झझावात " । पुन शान्ति न सदानन्द शान्तवश्रि-न शा श्रीराम वन वा अन्तो अनिरुः यस्य यस्माद्वा जनाना-मिति शान्ति । उक्त च नपाधनाश्नपि नथा यृभूपवः " । मुपः पद्मप्रभ । पद्मः सुर्वनिर्मितकनककमलं प्रभाति शोभते इति पद्मप्रभः । पुनः विमलविभुः । विमलानां अक्षचरदत्तकन्यादीनां विभुः विमलविभु । अथवा विया कान्त्या युता माः सूर्यादयः ला इन्द्राग्नेशा विभुः विमलविभुः " वी गनार्थ विशषार्थे विनिषा-विनाश्वादने जनने प्रजनन कान्तौ नद्धृप वीः स्त्रियं वियः । पुन अर्मावर्द्धमानः अर्मो वा ऋद्धमानः । वा उत्प्रक्षार्थे । जनानां अर्मो प्राप्तं ऋद्धमान इ पारपूर्णचन्द्रविम्बानन इव । आन्हादक-त्वात् । अम इति नामकदेशा नाम्नीति । अर्मो इति आरपंकव-

यह बात नहीं है। क्योंकि वे भगवान् नमि हैं। जिनके हिंसा न हो उनको नमि कहते हैं। फिर जो भगवान् नेमि हैं। जो भगवान् नेमिनाथके समान हों उनको नेमि कहते हैं। भगवान् पार्श्वनाथ स्वामी नेमिनाथके अनंतर हुए हैं इसलिये वे उन्हींके समान हैं। फिर जो भगवान् श्रीवासुपूज्य हैं। श्री शब्दका अर्थ पद्मावती है। तथा वासु शब्दसे वासुकि लेते हैं। नामके एक देशसे भी वह पूरा नाम लिया जाता है। वासुकि शब्दका अर्थ धरणेंद्र है। जो पद्मावती सहित धरणेंद्र के द्वारा पूज्य हों उनको श्रीवासुपूज्य कहते हैं। लिखा है " पार्श्वो नागेन्द्रयुजि। " अर्थात् भगवान पार्श्वनाथ स्वामी नागेन्द्र या धरणेन्द्र के द्वारा पूज्य हैं "। फिर जो भगवान् श्रेयान् हैं। इंद्रादिकोंके द्वारा पूज्य हैं। फिर जो भगवान् वृषभजिनपति हैं। जो धर्मके भारको धारण करनेके लिये वृषभ या बैलके समान हों, धर्मके धुरंधर हों उनको वृषभ कहते हैं। जो धर्मके धुरंधर गणधरोंके पति हों उनको वृषभजिनपति कहते हैं। भगवान् पार्श्वनाथ स्वामी भी स्वयंभू आदि धर्मके धुरंधर दश गणधरों के स्वामी हैं इसलिये उनको वृषभजिनपति कहते हैं। फिर जो भगवान् श्रीन हैं। समवसरणकी बारह सभाको श्री कहते हैं। इन का अर्थ प्राप्त होना है। जो समवसरणकी बारह सभाओंको प्राप्त हों उनको श्रीन् कहते हैं। भगवान् भी बारह सभाओंके नायक हैं इसलिये उनको श्रीन् कहते हैं। फिर जो भगवान् [illegible] हैं। [illegible] शब्दका अर्थ [illegible] है। [illegible] है। जिनके [illegible] कहते हैं। फिर जो भगवान् [illegible] हैं। अर्थात् [illegible] हैं। [illegible] हैं। जो [illegible] हैं [illegible] अर्थात् [illegible] [illegible] हैं। [illegible] किया है और वे [illegible] इसलिये उनको [illegible] कहते हैं। फिर जो भगवान् [illegible] हैं। जिनके [illegible]

नको अर कहते हैं। भगवान् पार्श्वनाथने भी अपना विवाह नहीं क-
राया था इसलिये उनको अर कहते हैं। फिर जो भगवान् मुनिसुव्रत
जिन हैं। जो तीर्थंकर परमदेव चारों ज्ञानोंको धारण करनेवाले मुनि-
योंसे घिरे हों उनके साथ विराजमान हों उनको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं।
अथवा जिन तीर्थंकर परमदेवसे मुनियोंमें भी सुव्रत अर्थात् अच्छे पवित्र
व्रत या आचरण हों उनको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं। भगवान भी मुनियों-
के साथ विराजमान रहते हैं अथवा उनके निमित्तसे ही मुनियोंका आचरण
उत्तम रहता है इसलिये उनको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं। फिर जो भगवान्
अनन्तवाक् हैं। जिनकी सरस्वती अनन्त हो उनको अनन्तवाक् कहते
हैं। अथवा अनन्त शब्दका अर्थ शेषनाग है। वा का अर्थ झंझावायु है।
तथा अक् शब्दका अर्थ निवारण करना है। अनंत अर्थात धरणेन्द्रके
द्वारा जिनकी वा अर्थात झंझावायु अक् अर्थात निवारण की गई हो
उनको अनन्तवाक् कहते हैं। भगवान्पर किया हुआ ऐसा उपद्रव
भी धरणेन्द्रके द्वारा निवारण हुआ था इसलिये उनको अनन्तवाक्
कहते हैं। फिर जो भगवान् शान्ति हैं। श का अर्थ सदानंद है।
अथवा श का अर्थ तपस्वी है। अथवा श का अर्थ लक्ष्मीका निवास-
स्थान धन है। अन्ति शब्दका अर्थ समीप है। जिनके समीपमें सदा-
नंद या अनंत सुख हो अथवा जिनके समीपमें तपस्वी निर्ग्रंथ मुनि हों
उनको शान्ति कहते हैं अथवा जिनके संबंधसे धनकी प्राप्ति हो उनको
शान्ति कहते हैं। फिर जो भगवान पद्मप्रभ हैं। विहार करते समय जो
देव लोग भगवान्के चरणकमलोंके नीचे सुवर्णमय कमलोंको रचते हैं
उन्हें पद्म कहते हैं। भगवान् उन कमलोंसे अत्यन्त सुशोभित
होते थे इसलिये उन्हें पद्मप्रभ कहते हैं। फिर जो भगवान विमल-
विभु हैं। भगवान् पार्श्वनाथके समयमें ब्रह्म चक्रवर्ती आदि महापुरुष
जो पुण्य कर्मके उदयसे हुए हैं उनको विमल कहते हैं। भगवान् उनके
स्वामी हैं इसलिये उनको विमलविभु कहते हैं। अथवा वि शब्दका अर्थ
कान्ति है, म शब्दका अर्थ सूर्य है और ल शब्दका अर्थ इन्द्र है। वि

अर्थात् कान्तिसे सुशोभित होनेवाले म अर्थात् सूर्यादिक और ल अर्थात् इन्द्रादिकों को विमल कहते हैं। भगवान् पार्श्वनाथ उन सबके स्वामी हैं इसलिये वे विमलविभु कहलाते हैं फिर जो भगवान् असौ-वर्द्धमान हैं। इसमें असौ वा ऋद्धमान ऐसे तीन पदच्छेद करने चाहिये। असु शब्दका अर्थ प्राण है। असु शब्दका सप्तमी का एक वचन असौ बनता है। यह एकवचन जातिमें है। जो एकवचन जातिमें होता है वह बहुवचनमें भी माना जाता है। अतः असौ शब्दका अर्थ 'प्राणोंमें' ऐसा बहुवचन लेना चाहिये। वा शब्द उत्प्रेक्षा अर्थमें आया है। ऋद्ध शब्दका अर्थ चन्द्रबिंब है तथा आन शब्दसे आनन लेना चाहिये। आनन शब्दका अर्थ मुख है। जिनका आन अर्थात् मुख प्राणों वा प्राणियों के लिये ऋद्ध अर्थात् पूर्ण चंद्र मंडलके वा अर्थात् समान हो उनको असौवर्धमान कहते हैं। फिर जो भगवान् अजाम् हैं। अज शब्दका अर्थ जन्ममरणसे रहित मुनि है और अं शब्दका अर्थ ज्ञान है। जिनका निर्मल ज्ञान जन्ममरणसे रहित होनेवाले मुनियोंमें हो उनको अजां कहते हैं। भगवान पार्श्वनाथका ज्ञान भी ऐसे ही मुनियोंमें होता है इसलिए उन भगवानको अजाम् कहते हैं। फिर जो भगवान् सत् अर्थात् सर्वश्रेष्ठ हैं। तथा जो भगवान श्रीसुपार्श्व हैं। जो श्रीसुपार्श्वनाथके समान हों उनको श्रीसुपार्श्व कहते हैं। भगवान पार्श्वनाथके शरीरकी कान्ति भी श्रीसुपार्श्वनाथके समान हरित वर्ण है इसलिए उनके समान होनेसे पार्श्वनाथको भी श्रीसुपार्श्व कहते हैं। ऐसे वे हर्यंक-हरि सर्पको कहते हैं और अंक चिन्हको कहते हैं - जिनके चरणकमलमें सर्पका चिन्ह हो उनको हर्यंक कहते हैं। भगवान पार्श्वनाथके चरणकमलोंमें सर्पका चिन्ह है इसलिए उनको हर्यंक कहते हैं। ऐसे वे हर्यंक अर्थात् तेईसवें तीर्थंकर श्रीपार्श्वनाथ स्वामी मुझ जगन्नाथ पंडितकी भी रक्षा कीजिए। अथवा जो भगवान हर्यंक हैं - सर्पके चिन्हको धारण करनेवाले हैं ऐसे वे श्रीसुपार्श्व, जो श्री अर्थात् समवसरणकी लक्ष्मीसे सु अर्थात् शोभायमान हैं ऐसे पार्श्व

अर्थात् पार्श्वनाथ स्वामी मुझ जगन्नाथकी रक्षा कीजिये । मैं कैसा हूं ! धधीर हूं । जो ध अर्थात् अत्यंत गंभीर धी अर्थात बुद्धिसे श्रीपार्श्वनाथकी र अर्थात् स्तुति करे—जो सदा आपकी ही भक्तिमें लगा रहे उसको धधीर कहते हैं । अथवा ध का अर्थ थोड़ा है । जो थोड़ी बुद्धिसे स्तुति करे उसको धधीर कहते हैं । मैं भी बुद्धिहीन होकर भी भगवान् की स्तुति करता हूं इसलिये मैं धधीर हूं । अथवा जो ध अर्थात् मिथ्या न हो उसको अध कहते हैं । जो मिथ्या न हो सम्यक् हो ऐसी धी अर्थात् बुद्धिको अधधी कहते हैं । जो ऐसी सम्यग्दर्शनपूर्वक बुद्धिके द्वारा भगवान्की स्तुति करे अथवा उपदेश दे उसको अधधीर कहते हैं । अथवा जो मिथ्या न हो, सत्य वा यथार्थरूप हो ऐसे जैनधर्मको अध कहते हैं। और धीर शब्दका अर्थ विद्वान् वा पंडित है। जो जैनधर्ममें धुरंधर विद्वान हो उसको अधधीर कहते हैं। हे भगवन् पार्श्वनाथ स्वामी ! मैं भी एक जैनधर्मका धीरवीर पंडित हूं इसलिये आप मेरी भी रक्षा कीजिये ।

इस प्रकार भट्टारक श्रीनरेन्द्रकीर्तिके मुख्य शिष्य कविराज पंडित जगन्नाथविरचित चतुर्विंशति प्रबंधिका नामकी श्री चौबीसो तीर्थंकर की स्तुतिमें पावली (आगरा) निवासी लालाराम शास्त्री द्वारा विरचित भाषा टीका में तेईसवें तीर्थंकर श्रीपार्श्वनाथ की स्तुति समाप्त हुई ।

तथा

॥ [illegible] समाप्त हुआ ।

— · —

अथ श्रीवर्द्धमानस्तुतिः ।

श्रेयान् श्रीवासुपूज्यो वृषभजिनपतिः श्रीद्रुमांकोथधर्मो
हर्यंकः पुष्पदंतोमुनिसुव्रतजिनोनंतवाक्श्रीसुपार्श्वः ।
शांतिः पद्मप्रभोरोविमलविभुरसौ वर्द्धमानोप्यजांको—
मल्लिर्नेमिर्नमिर्मां सुमतिरवतु सच्छ्रीजगन्नाथधीरम् ॥

टीका— अधिकारार्थो अन्त्यमंगलार्थो वा " आदिमध्यावसानेषु मंगलं भाषितं बुधैः " । भो श्री जगन्न ! जगतां नः नाथः जगन्नः । श्रियोपलक्षितो जगन्नः श्रीजगन्नस्तत्सम्बुद्धौ भो श्रीजगन्न । श्री जगदीश्वर ! ' नो नाथेपि प्रदर्श्यते ' । हे श्रेय आश्रयणीय ! भो अन् पालक ! भो श्रीव श्रीर्लक्ष्मीस्तस्या वः वरः श्रीवः । तत्सम्बुद्धौ हे श्रीव लक्ष्मीपते ! उ अहो हे वृषभ ! वृषा श्रेष्ठा भा कान्तिर्यस्य स वृषभस्तत्सम्बुद्धौ उत्कृष्टदीप्ते । भो श्रीद्रुम ! जनानां मनोमीष्टदानाय कल्पवृक्षसमान ! हे अंक ! अं ब्रह्मज्ञानं कायति वक्ति अंकः । तत्सम्बुद्धौ भो ब्रह्मकथक ! उ अहो हे उथधर्म । समुद्रवदतिनिम्नस्वभाव ! भो मुनिसुव्रतजिन ! मुनिभिः सुव्रता जिना यस्य स मुनिसुव्रतजिनस्तत्सम्बुद्धौ । अथवा अमुनिसुव्रतजिन ! नास्ति मुर्वेन्धनं कर्मपाशो यस्य सोमुः भावितीर्थकरत्वात्कर्मबन्धरहितः श्रीश्रेणिकराज. । तेन नि भृशं कौशल्येन वा सुव्रता जिना यस्य सोमुनिसुव्रतजिनः । तत्सम्बुद्धौ । सर्वपुराणकथानायकः श्रेणिक । हे पद्मप्रभ ! सुवर्णवर्ण ! हे उरोविमल ' उरसा हृदयेन विमल । उक्तं हि " त्वं जिनगतमदमाय " इति । एवंविशेषणविशिष्ट भो वर्द्धमान श्रीवीरनाथ चतुर्विंशजिन । अन्तिमतीर्थकर ! त्वमाम विराजताम् । त्रप । अम दीप्त्यादानयोश्चेति धातु । लोटि मध्यमपुरुषे रूपि कृते अतो हेरिति सिद्धम् । कथं उ वितर्के चकारार्थे वा । च पुन तव सुमति आग तव शोमना मतिर्लोके बभूव । अथवा

तव सुमति. पापं आस क्षेपयामास । असु क्षेपणे इत्यस्य लिटो णलि कृते रूपम् । अथवा तव सुमति । आस दिदीपे अतएव तव द्वितीयं नाम सन्मतिरिति । यथा तव मतिरित्थंप्रकारा यभूव तथा मां जगन्नाथनामानं ऊनं नृमात्रं अवतु । संसारात्पापात् अथवा तु पुनः हे वर्द्धमान । त्वं मां अव रक्ष । किंलक्षण मां धीरं त्वयि विषये धियं मतिमीरयति क्षिपति स्थापयतीति यावत् धीरस्तं धीरम् । अथवा धिया सुधावाद्धांग्या इरा यस्य स धीरस्तम् । क्षीरसमुद्रवदुज्ज्वलजलेन पूजकः । उक्तं च "व्योमापगाद्युत्तमतीर्थधाराम्" इति । उपलक्षणं द्रव्याष्टकं गृह्यते । किंलक्षणा सुमतिः पूज्या पूजनीया भवभीतैः । पुनः शांतिः । शं सुखं अन्तो अन्तिके यस्याः सा शांतिः । अनन्त-चतुष्टयसुखमग्ना । पुन. मल्लिः सिद्धमये रत्नत्रयं मल्लते बिभर्ति मल्लिः । किंविशिष्टस्त्वं जिनपतिः । जिनश्चासौ पतिश्च जिनपतिः । अथवा जिनानां गौतमाद्येकादशगणानां पतिः जिनपतिः । पुनः उ अहो हर्यंकः । हरिः सिंहो अंके यस्य स हर्यंकः । पुनः पुष्पदंतः । पुष्पत. कामस्यान्तो विनाशो यस्मादिति पुष्पदन्तः अविद्यान्हितत्वात् । अथवा उ उरो विमल इत्यत्र विमल इति सम्बोधनम् । उ वितर्के । अर इति अत्र योज्यम् । पुनः अर नास्ति रा रमणी यस्य सोरः । पुनः अकृश्रीसुपार्श्व । अकश्रियाः कुटिललक्ष्म्याः ईर्निषेधः सु-पार्श्वे यस्य सोकृश्रीसुपार्श्वः । संसृतिलक्ष्मीं परित्यज्य मोक्षलक्ष्मीं जिघृक्षुः । पुनः विभु परमेष्ठी । पुनः उप्पजाकः । उपयः वितर्क-समुद्रा सप्तभंगीतरंगावलीलीलावन्तः । ते च ते अजा महामुनय इति उप्पजास्तेऽके समीपे यस्य स उप्पजाकः सुध नेमिः । नीयन्ते प्राप्यन्ते सुरनरोरगेन्द्राणां विभूतिं प्राणिनो धर्मपरा येना-सौ नेमिः । भव नमिः हिमादिरहित उकारश्च्युताक्षरा ।

इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तुतावेव सटीका [illegible] अह [illegible] सुल्पकधीन्द्रजगन्नाथकृताया चतु [illegible] र्वदम [illegible]

चतुर्विंश पद्य समाप्त ।

हैं। जो जीवोंको मनोवांछित फल देने के लिये कल्पवृक्षके समान हों उनको श्रीद्रुम कहते हैं। भगवान् की स्तुति भक्तिसे भी मनकी सब अभिलाषाएं पूर्ण होती हैं इसलिये उनको श्रीद्रुम कहते हैं। उन्हींके संबोधनके लिये लिखा है हे श्रीद्रुम ! फिर हे अंक ! अं शब्दका अर्थ ब्रह्मज्ञान है। और क शब्दका अर्थ कहना है। जो ब्रह्मज्ञान वा परमात्माके स्वरूपको निरूपण करें उनको अंक कहते हैं। भगवान् महावीर स्वामीने भी परमात्माके स्वरूपका निरूपण किया है इसलिये उनको अंक कहते हैं। उन्हींके संबोधनमें हे अंक लिखा है। फिर उ का अर्थ बड़ा या हे है। हे उदधर्म। जिनका धर्म वा स्वभाव समुद्रके समान अत्यंत गंभीर हो उनको उदधर्म कहते हैं। भगवान् महावीरस्वामी का स्वभाव वा ज्ञान भी अत्यंत गंभीर और अनन्त है इसलिये उनको उदधर्म कहते हैं। उन्हींके सम्बोधनके लिये हे उदधर्म लिखा है। फिर हे मुनिसुव्रतजिन ! मुनिका अर्थ निर्ग्रंथ साधु है। सुव्रतका अर्थ घिरे रहना है और जिनका अर्थ सम्यग्दृष्टी है। जिनके समवसरणमें सम्यग्दृष्टी भव्य जीव मुनियोंके साथ विराजमान हों उनको मुनिसुव्रत कहते हैं। भगवान महावीर स्वामीके समवसरणमें भी मुनि श्रावक आदि सब थे इसलिये उनको मुनिसुव्रतजिन कहते हैं। उन्हींके संबोधनमें हे मुनिसुव्रत जिन लिखा है। अथवा हे अमुनिसुव्रतजिन ! अ का अर्थ नहीं है। मु का अर्थ बंधन वा कर्मोंका बंधन है जिनके कर्मोंका बंधन न हो उनको अमु कहते हैं। भगवान महावीर स्वामीके समवसरणमें सब पुराणोंकी कथाओंके श्रावक राजा श्रेणिक थे। इन्होंने अनेक प्रश्न पूछकर सबके जीवनचरित्र सुने थे तथा वे शुद्ध सम्यग्दृष्टी थे और होनहार तीर्थंकर थे इसलिये वे दर्शनमोहनीय और अनन्तानुबन्धी कर्मोंके बंधनसे रहित थे। अतएव श्रेणिक महाराज उन्हींको अमु कहते हैं। नि का अर्थ अतिशय वा अत्यंत भाव है। सुव्रत अर्थ घिरे है और जिनका अर्थ स्वामी है। जिनके समवसरणमें देव अमु अर्थात् श्रेणिकके साथ नि अर्थात् अत्यंत भाव विराजमान हों उनको

अमुनिसुव्रतजिन कहते हैं । भगवान महावीर स्वामीके समवसरणमें भी गणधरदेव राजा श्रेणिकके साथ विराजमान थे इसलिये भगवानको अमुनि-सुव्रतजिन कहते हैं । उन्हीके संबोधनमें हे अमुनिसुव्रतजिन लिखा है। फिर हे पद्मप्रभ ! पद् का अर्थ प्राप्त होना है और मा का अर्थ लक्ष्मी है । जिसमें मा अर्थात् लक्ष्मीकी पद् अर्थात् प्राप्ति हो ऐसे सुवर्णको पद्म कहते हैं जिनकी प्रभा सुवर्णके समान हो उनको पद्मप्रभ कहते हैं । भगवान् महावीर स्वामीके शरीरकी कांति भी सुवर्णके समान है । इसलिये उनको पद्मप्रभ कहते हैं। उन्हीके संबो-धनमें लिखा है हे पद्मप्रभ ! फिर हे उरोविमल ! जो उर अर्थात् हृदयसे विमल अर्थात् अत्यंत निर्मल हों उनको उरोविमल कहते हैं । भगवान् का आत्मा भी अत्यंत निर्मल है इसलिये उनको उरोविमल कहते हैं उन्हीके संबोधनमें लिखा है हे उरोविमल! लिखा भी है "त्वं शिव गतमदमाय:" अर्थात् हे प्रभो आप माया मद आदि सब दोषोंसे रहित हैं । ऐसे हे वर्द्धमान वीरनाथ चौवीसवें तीर्थंकर ! आप सदा जगा अर्थात् सुशोभित होते रहें । अथवा आप विजयशील होते रहें । (दी-प्ति और आदान अर्थमें रहनेवाले भव धातुका लोटका मध्यमपुरुषका रूप है) उ प्रकारके अर्थमें आया है। उ अर्थात् और, सद अर्थात् आ-पकी सुमति अर्थात् सुशोभित बुद्धि आस अर्थात थी । आपका निर्मल ज्ञान अत्यंत सुंदर था । आपकी वह सुमति कैसी है । पूज्या अर्थात् पूजनीय है । संसारमें भयभीत हुए मनुष्य [illegible] पूज्य [illegible] है। फिर वह सुमति [illegible] है। [illegible] हैं । [illegible] करते हैं । [illegible] हैं । आपका वह ज्ञान [illegible] प्रत्यक्ष [illegible] है । फिर वह सुमति [illegible] है । [illegible] है । जो [illegible] हैं । भगवान् महावीर स्वामीके [illegible] इसलिये उनकी [illegible] करते हैं । हे [illegible]

मनुष्य इसे प्रातःकाल ही पढता है उसे भगवान् अर्हंत देवके प्रसादसे परम स्थान प्राप्त होता है ॥ २ ॥

काव्येस्मिन् भुवि कोविदाः स्तुतिमये तीर्थंकराणां वरे
सल्लभ्ये बुधचित्तचमत्कृतिकरे चित्तं दधीध्वं सदा
वाक्याऽशुद्धवचोऽपि यद्भणतितः कुर्वीध्वमत्रापि सत्
तस्माच्चित्रमिदं समस्ति सुखदं न ज्ञायते किं फलम् ।

अर्थ— इस काव्यमें चौवीसों तीर्थंकरों की सुंदर स्तुति की गई है तथा यह काव्य संसारके समस्त विद्वानोंके हृदयमें चमत्कार उत्पन्न करनेवाला है और भाग्यवान मनुष्योंको ही प्राप्त होनेवाला है। इसलिये हे विद्वान् लोगो! तुमको इसमें सदा अपना मन लगाना चाहिये। और यदि किसी वाक्यके द्वारा इसमें कोई अशुद्ध वचन कहा गया हो तो उसे शुद्ध कर लेना चाहिये। यह काव्य संसार भरमें आश्चर्य उत्पन्न करनेवाला है और सबको सुख देनेवाला है। इसलिये इस काव्यके पढने वा सुननेका अनुपम फल है जो किसीको मालूम भी नहीं हो सकता।

जननि भारति मज्जिनतुण्डजे सुमति लोकलतावनतत्परे ।
भव सारस्वति मे कलुषापहा तव पदाम्बुजभक्तियुजः सदा ॥ ५ ॥

अर्थ— भगवान अरहंतदेवके मुखकमलसे प्रगट होनेवाली! तीनों लोक रूपी लताकी रक्षा करनेमें सदा तत्पर रहनेवाली! हे सती! भारती! माता! सरस्वती! मैं सदा तेरे चरणकमलोंकी भक्तिमें लगा रहता हूं इसलिये तू मेरे सब पापोंको दूर कर।

इस प्रकार कविवर [illegible] विवेचन और भावको
[illegible] 'चौबीसी' [illegible]
[illegible] अनुवादित
यह चौबीसों तीर्थंकरोंकी स्तुति समाप्त हुई।